ग्राम दये इक बीस तब, ताके पायँ पखारि ।। "

एक समय केशव इन्द्रजीत के साथ तीर्थ यात्रा को गये हुए थे। इन्द्रजीत ने केशव से कुछ माँगने के लिए कहा, तो केशव ने कहा कि हमें आपकी कृपा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं चाहिए।

"इन्द्रजीत तासो कह्यो, माँगन मध्य प्रयाग।
माँग्यो सब दिन एक रस कीजै कृपा सभाग ।।"

इसी प्रकार बीरबल ने इनसे कुछ माँगने को कहा तो इन्होंने केवल दरबार में बे रोक-टोक दरबार में आवागन की माँग की।

यों ही जु कह्यो बीरबर, माँगि जु मन में होय।
माँग्यो तब दरबार में; मोहिं न रोकै कोय ।।

ऐसा ज्ञात होता है कि इन्द्रजीत के दरबार में केशव को किसी वस्तु की कमी नहीं थी क्योंकि उन्होंने स्वयं लिखा है:

"भूतल को इन्द्र इन्द्रजीत राजै जुग जुग
केशवदास जाके राज राज सो करत है ।"

इन्द्रजीत के दरबार में अनेक वेश्यायें थीं। उनमें छः अधिक प्रसिद्ध थीं। केशव ने इन वेश्याओं का वर्णन अत्यधिक आदर एवं श्रद्धा से किया है। रायप्रवीन नामक वेश्या को तो इन्होंने लक्ष्मी, सरस्वती तथा पार्वती के रूप में वर्णन किया है।

रतनाकर ललित सदा, परमानंदहिं लीन।
अमल कमल कमनीय कर, रमा कि रायप्रवीन ।।१।।
राय-प्रवीन कि सारदा सुचि रुचि रंजित अंग।
बीना पुस्तक धारनी. राज हंस-सुतसंग ।।२।।
वृषभवाहिनी अंग उर, बासुकि लसत प्रवीन।
सिव संग सोहै सर्वदा, सिवा कि रायप्रवीन ।।३।।

परिस्थितियों से संघर्ष कर उनसे ऊपर उठने का सामर्थ्य बिरले ही लोगों में होता है। साधारण व्यक्ति परिस्थितियों के चक्कर में पड़कर उसी प्रकार हतबुद्ध हो जाता है, जिस प्रकार पतंगा अपनी मृत्यु का

आवाहन जलते दीपक पर घूमकर करता है। केशव समकालीन सामाजिक वातावरण तथा दरबारी संस्कारों से सराबोर थे। ऐसा उनके साहित्य से स्पष्ट ही समझा जा सकता है। लौकिक जीवन और उसमें भी इन्द्रिय-सुख से उनकी अधिक अभिरुचि थी इसका प्रमाण उनका कुएँ पर बैठकर बुढापे को कोसना है।

केसव केसनि असि करि, असि अरिहू न कराहिं।
चन्द्रबदन मुख लोचनि कि बाबा कहि कहि जाहिं ॥

यदि इस किंवदन्ती को छोड़ भी दें तो उनके दोहा के अनेक ग्रन्थों से उनकी कसक का पता लगाया जा सकता है। एक स्थान पर वे लिखते हैं कि परनारी तपश्चर्या को विघ्न करने वाली होती है।

"पावक पाप सिखा बड़बारी,
जारति है नर को परनारी।"

इसी प्रकार परकीया नायिका का भेद करते समय रसिकप्रिया में लिखते हैं:

परिकीया द्वै भाँति पुनि ऊढ़ा एक अनूढ़।
जिन्हैं देखि बस होत है, सेतत मूढ़ अमूढ़ ॥

उनके हृदय के किसी न किसी कोने मे एक पीड़ा ऐसी अवश्य थी, जो कि प्राय: कसका करती थी।

अलंकार:—केशव के पूर्व कृपाराम, मोहनलाल मिश्र, करनेस कवि अलंकार और रस के सम्बन्ध में लिख चुके थे। किन्तु इनमें से किसी भी कवि ने संस्कृत साहित्य शास्त्र मे निरूपित काव्यांगों का पूर्ण परिचय नहीं दिया था। इस अधूरे कार्य को केशव ने पूर्ण किया। वे काव्य म अलंकार को सर्वस्व समझने वाले चमत्कारी कवि थे। इन्होंने स्वयं लिखा है:

जदपि सुजाति सुलच्छनी सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषन बिनु न बिराजई कबिता बनिता मित्त ॥

केशव ने अपनी इस प्रवृत्ति के अनुसार भामह, उद्भट एवं दण्डी का

अनुसरण किया जो रसरीति आदि सबको अलंकार के अन्तर्गत ही स्वीकार करते थे। केशव ने अलकारों के लक्षण दण्डी के काव्यादर्श से तथा अनेक बातें अमर चरित काव्य-कल्पलता वृत्ति और केशवमिश्र कृत अलंकार शेखर से लीं, यद्यपि केशव के बाद उनके लक्षण ग्रन्थों की परम्परा न चल सकी। केशव के उपरान्त लोगों ने चन्द्रालोक तथा कुवलयानन्द का अनुसरण किया; जो कि रस की प्रधानता मानने वाले आचार्य कवि थे।

पाण्डित्य—केशव का जन्म पण्डित परिवार में हुआ था। उन्होंने संस्कृत ग्रन्थों का अच्छा अध्ययन किया था। भाषा (हिन्दी) में केवल कविता लिखने के कारण उनका मन हीन भाव का अनुभव किया करता था। परिणामत. पाण्डित्य प्रदर्शन की ओर उनकी प्रवृत्ति अधिक रही। रामचन्द्रिका चरित्रकाव्य से पाण्डित्य प्रदर्शी काव्य बन गया। छन्दों का परिवर्तन इतना अधिक किया है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि छन्द सिखाने के लिए ही इसकी रचना की हो।

समकालीन व्यवस्था एवं परंपरा से केशव को व्रजभाषा प्राप्त हुई थी। किन्तु बुन्देलखंडवासी होने के कारण वे अपने को बुन्देलखंडी में न बचा सके। जिस प्रकार सूर एवं तुलसी फारसी शब्दावली से अपने को बचा न सके, उसी प्रकार केशव भी अछूते न रह सके। केशव की भाषा आवश्यकता से आधिक क्लिष्ट है। इसके निम्नलिखित कारण हैं।-

(१) संस्कृत के व्याकरण के अनुसार प्रयोग किये हैं

कछु आपुन अघ अघगति चलंत
फूल पतितन कहँ ऊरघ फलंत

(२) लिंगभेद का ध्यान कम रखा है। देवता शब्द का प्रयोग सदैव स्त्री लिंग में किया है।

(३) ठेठ बुन्देलखंडी शब्दों तथा मुहाविरों का प्रयोग किया है, जैसे स्यौ गौरमदाइन।

(४) अनके स्थानों पर निरर्थक शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे जू तू

(५) कहीं-कहीं वीरगाथा के शब्दों तथा तुकों।का प्रयोग किया है

देखि बाग अनुराग उपज्जिय

बोलत कलध्वनि कोकिल सज्जिय

(६) अनेक स्थानों पर अप्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे ब्रह्मा के लिए 'सरसिज योनि' सूरन सुग्रीव)

७) ठेठ हिन्दी शब्दों की संधियाँ अपने ढंग . की हैं, जैसे सोउत्र (सो + अत्र) ।

केशव का पाण्डित्य ऊँचा था, इससे भी अधिक उनकी पाण्डित्य प्रदर्शन की रुचि थी । इस रुचि ने ही काव्य को क्लिष्ट बना दिया है। प्रसाद और माधुर्य का गला घोंट दिया है । केशव के पाण्डित्य के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि उन्होंने जिस विषय पर लेखनी उठाई है, उसे अपने पाण्डित्य से ऐसा पूर्ण रूप दे दिया है कि दूसरे आचार्य की उसमें शिष्यता ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं रह जाती है ।

केशव की सात रचनायें हैं—(१) रामचन्द्रिका (२) कविप्रिया (३) रसिकप्रिया (४) वीरसिंहदेव चरित (५) जहँगीरजस चन्द्रिका (६) रतनबावनी (७) विज्ञान गीता

लाला भगवानदीन 'दीन' ने केशव के अन्य चार ग्रन्थों का भी उल्लेख किया है—

(१) छन्दशास्त्र का कोई एक ग्रन्थ ।

(२) रामालंकृत मञ्जरी (कोई कोई इसी को छन्दों का ग्रन्थ कहते हैं) ।

(३) नखशिख (नायिका भेद)

(४) स्फुट (कवित्त, सवैये, दोहे)

केशव के नाम से दो और ग्रन्थ मिलते हैं-बालचरित, और हनुमान जन्म लीला । रिसर्च रिपोर्ट (१६०६ १०, ११) में हनुमान-जन्म-लीला के सम्बन्ध म लिखा है—

Keshava Das the writer of Hanuman Janma Lila is an unknown poet. "He was certainly not the famous poet of Orchha"

उपरोक्त छै ग्रन्थों को कुछ विद्वानों के केशव की स्वतंत्र रचनायें माना है। केशव के सम्बन्ध में एक बात स्मरण रखनी चाहिए कि उन्होंने एक ही छन्द को कुछ हेर फेर कर अनेक पुस्तकों में रख छोड़ा है। इतना ही नहीं तो उन्होंने छन्द के मूल रूप को ही एक पुस्तक से उठाकर दूसरी पुस्तक मे रख दिया है। बहुत कुछ सभव है कि उपरोक्त ग्रन्थों को उन्होंने अपने रचित ग्रन्थों से संकलित कर विषयानुसार करने की चेष्टा की हो। इस समय मुझे ये ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं, अन्यथा इस प्रकार के उदाहरण दिये जा सकते थे। छन्दों के हेर-फेर को रामचन्द्रिका, कविप्रिया तथा रसिकप्रिया मे भली प्रकार देखा जा सकता है। जहाँतक-बाल चरित और हनुमान जन्मलीला-ग्रन्थों का प्रश्न है, मेरे विचार से ये केशव के रचित ग्रन्थ नहीं हैं। इस सम्बन्ध में मैं रिसर्च-रिपोर्ट से पूर्ण रूपेण सहमत हूँ।

रामचन्द्रिका—की रचना केशव ने स्वयं अपनी इच्छा से नहीं की थी। वाल्मीकि ऋषि ने स्वप्न दिया था, इसीलिए उसकी रचना केशव ने की—

ऐसा ज्ञात होता है कि प्रकृत प्रेम प्रसंग की चर्चा करते करते केशव का मन ऊब गया था और अपने गत साहित्य के प्रति एक उपेक्षा का भाव उनमें आ गया था। संभवतः स्वप्न इसी विचार की प्रतिक्रिया थी और रामचन्द्रिका उसी का फल।

प्रबन्ध— केशव ने प्रबंधकाव्य-वीरसिंहदेव चरित तथा रामचन्द्रिका लिखे। प्रथम तो प्रबन्ध काव्य की कोटि में आता ही नहीं है क्योंकि वह कोरा चरित काव्य ही मात्र रह गया है। रामचन्द्रिका को प्रबन्ध काव्य की कोटि में रख सकते हैं, किन्तु वह भी प्रबन्ध काव्य की कसौटी पर खरा नहीं उतरता है।

रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में "केशव उक्तिवैचित्र्य और शब्द-क्रीड़ा के प्रेमी थे। जीवन के नाना गंभीर और मार्मिक पक्षों पर उनकी दृष्टि नहीं थी। वे मुक्तकरचना के ही उपयुक्त थे।"

रामचन्द्रिका में प्रबन्ध पटुता का आभास नाम मात्र का ही है। प्रबन्ध के लिए तीन बातें नितान्त आवश्यक होती हैं:—

(१) *सम्बन्ध निर्वाह*

(२) *कथा के गम्भीर एवं मार्मिक स्थलों का चुनाव।*

(३) *दृश्यों की स्थानगत विशेषतायें।*

रामचन्द्रिका में सम्बन्ध निर्वाह नहीं के बराबर हो पाया है। ऐसा ज्ञान होता है कि समय समय पर लिखे गये अनेक पदों का संग्रह कर दिया गया है। यद्यपि यह बात सत्य नहीं है, क्योंकि केशव ने उसे प्रबंध-काव्य के रूप में लिखने का प्रयास किया है। वे इस दिशा में सफल न हो सके यह दूसरी बात है। विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कथा दो भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में विश्वामित्र आगमन से लेकर राज्याभिषेक तक,की कथा है अर्थात् प्रथम प्रकाश से छब्बीसवें प्रकाश तक। द्वितीय भाग में सीता बनवास की स्वतन्त्र कथा है जो कि तैंतीसवें प्रकाश से प्रारम्भ हो कर उनतालिसवें प्रकाश में समाप्त होती है। बीच के छै प्रकाशों में (२७ से ३२) राम के राज्य वैभव और विहार का वर्णन है। दोनों कथाओं में किसी प्रकार का अनुपात ही नहीं है। अनेक असम्बन्धित प्रसंग बीच में आ गये हैं जिनसे कथावस्तु के संबंध निर्वाह में बाधा उपस्थित हो गयी है। चौंतीसवाँ प्रकाश असम्बन्धित उपाख्यानों तथा मठधारी निन्दा एवं मथुरा महात्म्य-वर्णन जैसे अप्रासंगिक वर्णनों से भरा पड़ा है।

मार्मिकस्थलः - मार्मिकस्थलों को केशव ने बिल्कुल ही छोड़ दिया है। जहाँ कहीं वर्णन किया भी है, तो वह इतिवृत्तात्मक मात्र ही होकर रह गया है। राम के वनागमन के समय उनकी दृष्टि राम और सीता के अलौकिक सौन्दर्य की ओर नहीं गयी। वे केवल इतना

ही कह कर रह गये :

किधौं मुनिशाप हति
किधौं ब्रह्मदेव रत
किधौं कोऊ ठग हौ ।

इसी प्रकार के अन्य अनेक स्थल भी छोड़ दिए हैं ।

दृश्यः—दृश्यों की स्थानगत विशेषतायें केशव के साहित्य में ढूढने पर भी नहीं मिलेंगी । उस दिशा में प्रयास करना ही व्यर्थ है क्योंकि केशव को प्रकृति के प्रति कोई अनुराग न था । इसका परिचय इस पद से मिल सकता है ।

देखे मुख भावै, अन देखेई कमलचन्द ।
तातै मुख मुखै, सखी कमलै न चन्द री ॥

कविप्रिया के अध्ययन से स्पष्ट हो जायगा कि केशव वस्तु-निरूपण मात्र को वर्णन मानते थे । इसी कारण से उनके वर्णन नामोल्लेख मात्र हैं । केशव ने नामोल्लेख में भी पाण्डित्य का प्रदर्शन किया है । यह कटु सत्य है कि नामोल्लेख मात्र से प्रकृति का कोई भी रूप सामने नहीं आ सकता है । दण्डक वन का वर्णन करते हुए केशव लिखते हैं .

बेर भयानक सी अति लगै ।
अर्क समूह तहाँ जगमगै ॥

अभिसारिकाओं के स्वरूप को केशव न भूल सके । अतएव वे वर्षा काल की नालियों के वर्णन में ले आये:

अभिसारिनी सी समझै परनारी ।
सतमारग मेटन की अधिकारी ।
मतिलोभ महामद मोह छुई है ।
द्विजराज सुमित्र प्रदोषमई है ॥

ऐसे व्यक्ति से प्राकृतिक दृश्यों के चित्रण की कल्पना करना ही निमूर्ल है।

प्रकृति चित्रणः—केशव का प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण अत्यधिक क्लिष्ट है । इसका कारण उनका अपने पाण्डित्य के सम्बन्ध में

अई है। इसी कारण से उनके वर्णनों में अत्यधिक अस्वाभाविकता आ गयी है कहीं-कहीं तो उन्होंने उचित और अनुचित का भी ध्यान नहीं रखा है, जैसे भरत का चित्रकूट जाते समय सेना की तैयारी और उसमें तड़क-भड़क का होना ।

केशव प्रकृति के सम्बन्ध में श्रीहर्ष से अधिक प्रभावित जान पड़ते हैं। उनका स्वतः का प्रकृति से सीधा आत्मानुभव का सम्बन्ध नहीं था।

संवादः — केशव को संवादों में बहुत अधिक सफलता मिली है। क्रोध, उत्साह आदि की सुन्दर व्यञ्जना पात्रों के अनुकूल ही की है।

जैसे—

रावण — मेरी बड़ी भूल कहा कहौं रे
तेरो कह्यो दूत सबै सहौं रे
वै जो सब चाहत तोहि मार्‍यो
मारों कहा तोहि जो दैव मार्‍यो

रावण अंगद का संवाद तो तुलसी को भी मात कर देता है:

रावण — कौन के सुत।
अंगद — बालि के।
रावण — वह कौन बालि न जानिये।
अंगद — काँख चाँपि तुम्हें जो सागर सात न्हात बखानिये ।
रावण — है कहाँ वह
अंगद — देवलोक
रावण — क्यों गया ?
अंगद — रघुनाथ-बान — विमान बैठि सिधाइयो ।

रसः — रस-परिपाक रामचन्द्रिका में नहीं हो पाया है। इसका कारण केशव की पग-पग पर छन्द बदलने की मनोवृत्ति है। साथ ही केशव की दृष्टि चमत्कार एवं पाण्डित्य प्रदर्शन पर अधिक थी। अतएव रामचन्द्रिका में किसी भी रस की सृष्टि नहीं हो पाई है ।

केशव अलंकारवादी कवि हैं। उन्हें चमत्कारों से प्रेम है। इसी कारण रस की अपेक्षा अलंकारों का रामचन्द्रिका में अधिक बोल-बाला है। अलंकारों में भी केशव को उपेक्षा-अलंकार अधिक प्रिय है। लंका में आग लगी है:

कञ्चन को पघल्यो पुर पूर पयोनिधि में पसरयो सो सुखी है।
गंगहजारमुखी गुनि केशव गिरा मिमि मानों अपार मुखी है।

आधार:—रामचन्द्रिका का आधार वाल्मीकि-कृत रामायण अधिक होना चाहिए था, क्योंकि ग्रन्थ की रचना के मूल में वाल्मीकि जी का स्वप्न है किन्तु ग्रन्थ को आद्योपान्त देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि रामायण की छाप ग्रन्थ पर बहुत कम पड़ी है, यद्यपि ग्रन्थ का ढाँचा वाल्मीकि रामायण का ही है। ग्रन्थ पर विस्तुत प्रभाव प्रसन्नराघव तथा हनुमन्नाटक का है। इसमें भी 'प्रसन्नराघव' का अधिक पड़ा है। कुछ स्थानों पर केशव ने अनुवाद मात्र कर दिए हैं।

मौर्वीधनुस्तनुरियं च बिभर्ति मौञ्जीं
बाणाः कशाश्च विलसन्ति करेसिताय.
धारोज्ज्वलः पर शुरेष कमण्डलुश्च
तद्वीरशान्त रसयोः किमयं विकार· (प्रसन्नराघव)

अनुवाद –

कुसमुद्रिका समिधैं श्रुवा कुस औ कमण्डल को लिये
कटिमूल श्रौनिन तर्कसी भृगुलात-सी दरसै हिये
धनुबान तिक्ष्ण कुठार केशव मेखला मृगचर्म स्यों
रघुवीर को यह देखिये रस बीर सात्विक धर्म क्यों (रामचन्द्रिका)

कस्त्वं बालि तनूद्भवो रघुपते दूतः स : बालीति कः
कोवा वानर राघवः समुचिता ते बालिनो विस्मृति
त्वां वध्वा चतुरम्बराशिषु परिभ्राम्यन्मुहूर्तेन यः
संध्यामर्चयति स्म निश्चय कथं ताव त्वया विस्मृतः (हनुमन्नाटक)

अनुवाद :—

केशव के सुत ? बालिके, वह कौन बालि न जानिये ?
काँख चापि तुम्हें जो सागर सात न्हात बखानिये ।
है कहाँ वह ? बीर अंगद देवलोक बताइयो ।
क्यों गयो ? रघुनाथ-बान-विमान बैठि सिधाइयो ।

कविप्रिया :—केशव ने अपने पाण्डित्य प्रदर्शन के निमित्त अनेक-ग्रन्थों की रचना की और वह भी भिन्न भिन्न विषयों पर। कविप्रिया की रचना केशव ने अलंकार सम्बन्धी अपने पाण्डित्य को प्रकट करने के लिए की। इस ग्रन्थ में सचमुच सरसता नाम की कोई भी वस्तु नहीं आ पाई है। काव्य का स्वाभाविक सौन्दर्य अलंकारों से बोझिल हो उठा है हाँ यह सत्य है कि केशव अलंकारों के उदाहरण देने में पूर्ण रूपेण सफल हुये हैं। ग्रन्थ में कुछ ऐसे भी छन्द मिलते हैं जो कि रामचन्द्रिका में भी हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि उदाहरण देने के लिए केशव ने पदों को रामचन्द्रिका से उठाकर कविप्रिया में रख दिया है।

केशव अलंकार को काव्य का प्राण मानने वाले कवि थे। इसका प्रमाण कविप्रिया के पाँचवें प्रकाश का पहला छन्द है:—

जदपि सुजाति सुलक्षण सुबरन सरस सुवृत्त ।
भूषण बिनु न बिराजई बनिता कविता मित्त ॥

केशव ने अलंकारों के दो भेद किये हैं :—

(१) सामान्य या साधारण ।
(२) विशेष ।

साधारण परिभाषा में हम जिन्हें अलंकार कहते हैं वे विशेष के अन्तर्गत आते हैं। साधारण या सामान्य की कल्पना केशव की अपनी मौलिक कल्पना है। विशेष अलंकार के अन्तर्गत केशव ने सैंतीस अलंकार रखे हैं :—

(१) स्वभावोक्ति (२) विभावना (३) हेतु (४) विरोध (५) विशेष (६) उत्प्रेक्षा (७) आक्षेप (८) क्रम (९) गणना (१०) आशिष (११) प्रेमा (१२) श्लेष (१३) सूक्ष्म (१४) लेष (१५) निदर्शना

(१६) उर्जस्था (१७) रस (१८) अर्थान्तरन्यास (१६) व्यतिरेक (२०) अपन्हुति (२१) उक्ति (२२ व्याजस्तुति (२३) व्याजनिन्दा (२४) अमित (२५) अर्थोक्ति (२६) मुक्त (२७) समाहित (२८) सुसिद्ध (२६) प्रसिद्ध (३० । विपरीत (३१) रूपक (३२) दीपक (३३) प्रहेलिका (३४) प्रवृत्त (३५) उपमा (३६) यमक (३७) चित्र । इन अलंकारों के अनेक भेद प्रभेद हो गये हैं।

केशव ने रस को भी अलंकार माना है।

रसमय होत सु जानिये, रसवत केशवदास।
नवरस को सक्षेप ही, समुझौ करत प्रकाश।

उपरोक्त अलंकार विवेचन के अतिरिक्त अन्य काव्योपयोगी ज्ञान का भी समावेश किया है, जैसे काव्य दोष कवि की परिभाषा तथा विशेषता एवं कवि भेद और कविरूढ़ियाँ।

ग्रन्थ के अध्ययन से ऐसा ज्ञात होता है कि कविप्रिया का उद्देश्य प्रवीनराय पातुर को कविता सिखाना है। केशव ने इसकी रचना में विशेष श्रम किया होगा। अपने ग्रन्थ के प्रति विशेषानुराग को उन्होंने अन्त में व्यक्त भी कर दिया है।

सुबरन जटित पदारथन, भूषन भूषित मान।
कविप्रिया है कविप्रिया, कवि की जीवन प्रान ॥

वीरसिंह देव चरित :—रतनसिंह तथा वीरसिंह इन्द्रजीत के भाई थे, जिन्होंने वीरत्व के द्वारा सद्गति को प्राप्त किया था। ग्रन्थ में वीरसिंह के चरित्र का वर्णन है। ग्रन्थ में अनेक प्रसंगों के साथ अब्बुल फजल की मृत्यु का वर्णन है, जिससे वीरसिंह देव लांछित हुए थे। केशव का यह ग्रन्थ वीरसिंह देव के इस कृत्य के कारणों पर प्रकाश डालता है और उनकी निर्दोषता सिद्ध करता है। यदि ग्रन्थ का वैज्ञानिक सम्पादन किया जाय तो सचमुच अनेक सम-सामयिक इतिहास की भ्रान्तियाँ नष्ट की जा सकती हैं और अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के

मूल में छिपे कारणों का उद्घाटन किया जा सकता है।

ग्रन्थ के प्रथम भाग में केवल वीरसिंह के चरित्र का वर्णन केशव ने देवी के मुख से कराया है। शेष ग्रन्थ दान तथा लोभ पर लिखा गया है।

इस ग्रन्थ को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम में इतिवृत्त अथवा इतिहास का वर्णन है। क्या ही अच्छा होता कि कवि तिथियाँ भी दे देता। किन्तु अब किया क्या जा सकता है। इतिहास तिथियों के लिए कलप सकता है, किन्तु काव्य नहीं। द्वितीय भाग मे वस्तु वर्णन है। एक प्रबन्ध में जिन वस्तुओं का वर्णन होना चाहिए, वे सभी उपलब्ध हैं। इसमें केशव के आँख देखे दृश्य में कल्पना तथा हृदय का मिश्रण है। तृतीय भाग में धर्म की चर्चा और मंगल विधान है। इसे हम दूसरे शब्दों में कह सकते है कि प्रथम में अर्थ, द्वितीय में काम, तृतीय धर्म है।

सम्पूर्ण ग्रन्थ संवाद के रूप में लिखा गया है। प्रथम में देवी वक्ता हैं, दान तथा लोभ श्रोता हैं। द्वितीय में दान तथा लोभ द्रष्टा तथा भोक्ता हैं। तृतीय में दान दाता तथा वक्ता हैं और लोभ चुप हैं।

जहाँगीर जस चन्द्रिका:—ग्रन्थ की रचना ओरछा दरबार के आग्रह से हुई थी। ओरछा नरेश की ओर से केशव जहाँगीरके दरबार में भेजे गये थे, जिससे वह दण्ड माफ हो जाय, जो मुगल सम्राट् ने उन पर किया था। संभवतः केशव अपने इस कार्य में सफल हुए।

यद्यपि हरि जू माँगिबो दियो हमैं उपजाय।
तौं माँगौं जगदीशपै, सुनौ साहि सुखपाय॥

संभवतः जहाँगीर को प्रसन्न करने के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना हुई थी। ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित है।

जहाँगीर का यश कितना फैला हुआ था और उसका प्रताप कितना शीतल था, इसके लिए 'जहाँगीर जस चन्द्रिका' का अध्ययन अवश्य करें।

सुनहु गणेश दिनेश देश परदेश क्षेम कर,
अवरेश प्राणेश शेष नखतेश वेशवर।
पन्नगेश प्रतेश बुद्ध सिद्धेश देख अब,
विहंगेश स्वाहेश देव देनेश शेष सब।
प्रभु पर्वतेश केश मिलि, कलि कलेश केशव हरहु
जहाँगीर सक साहि को, बलु पलु पलु रक्षा करहु।

ग्रन्थ के सम्बन्ध में इतना अवश्य कहना है कि वह जिस उद्देश्य को लेकर चला है, उसमें पूर्ण सफल हुआ है। यदि किसी को राजधानी मे नवरोज की छटा देखनी है, तो वह उसका एक बार अध्ययन अवश्य करे। ग्रन्थ की पद्धति 'वीरसिंह देवचरित' वाली ही है। इस ग्रन्थ में दान तथा लोभ का स्थान उद्योग तथा भाग्य ने ले लिया है।

उदय भाग अति उदित मति, सुनि सर्वज्ञ प्रमान।
जग में उद्यम कर्म ए मेरे जान समान॥

रतनबावनी—इस ग्रन्थ मे मधुकर शाह के पुत्र रतनसेन की प्रशंसा की गई है जो अल्पायु में ही अकबर की विशाल वाहिनी से युद्ध करता हुआ स्वर्गवासी हुआ। रतनसिंह के वीरत्व को महत्त्व देने के लिए केशव ने विप्ररूप में भगवान की अवतारणा की है। भगवान रतनसिंह को जीवन का मूल्य समझाते हैं किन्तु रतनसिंह मान एवं प्रतिष्ठा को मृत्यु से श्रेष्ठ समझता है।

रतनसेन कह बात सूर सामन्त सुनिज्जय,
करहु पैज पन धारि मारि रजमंतन लिज्जिय।
बरिय स्वर्ग, अच्छरिय हरहु रिपु गर्व सर्वअब,
जुरि करि सङ्गर आज सूरमण्डल भेदहु सब।

मधुसाह नंद इमि उच्चरइ खंड खंड मिडहिं करहुँ,
करहुँ सुदन्त हथियान के मर्दहुँ दल मह प्रन धरहु।

विज्ञानगीता---इस ग्रन्थ की रचना बहुत कुछ 'मानस' के ढंग पर हुई है, किन्तु ढाँचा संस्कृत के 'प्रबोध चन्द्रोदय' का है। विज्ञान गीता का प्रारम्भ ठीक 'मानस' के ढंग से हुआ है। मानस का याज्ञवलम्य शिव-पार्वती का प्रसंग भरद्वाज के समाधान का आश्रय लेकर करते हैं। विज्ञानगीता में केशव वीरसिंह के उत्तर में शिव-पार्वती का प्रसंग लाते हैं।

मानस के संवादों में प्रवाह है और विज्ञान गीता के संवाद स्फुट हैं, यह दोनों में महान अन्तर है। ग्रन्थ में केशव की दृष्टि वस्तु पर न होकर विचार पर है। उसका लक्ष्य विवेक तथा प्रबोध है। प्रबोध के उदय से अंधकार नष्ट हो जाता है केशव को यही बताना इष्ट है।

विवेक के द्वारा किस प्रकार से मोह को नष्ट किया जा सकता है और प्रबोध को पाया जा सकता है, इस रहस्य को बताना ही विज्ञानगीता का विषय है। इसी एक विषय का भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रतिपादन किया गया है।

विज्ञान गीता में केशव की दृष्टि काव्य पर रही है, ऐसा ज्ञात होता है, क्योंकि कवि ने वर्षा एंव शरद ऋतु का वर्णन विशेष रूप सेकिया है। इस सम्बन्ध में केशव भी कल्पना ने उनका अच्छा साथ दिया है।

रसिकप्रिया:--- अपने प्रकार का निराला ग्रन्थ है। आचार्यत्व की दृष्टि से कविप्रिया का महत्व हो सकता है, पाण्डित्य की दृष्टि से रामचन्द्रिका की प्रशंसा की जा सकती है, किन्तु केशव की काव्य प्रतिभा एवं सहृदयता के सर्वोच्च दर्शन रसिक-प्रिया के ही होंगे।

उद्देश्य:---रसिकप्रिया का उद्देश्य प्रिय-प्रिया की लीला है। इसके लिए केशव ने कृष्ण को नायक तथा नायिका के रूप में राधा को चुना है। रसिकजनों को नव रस का रसास्वादन कराने के लिये केशव

ने नन्दनन्दन की वृजलीला को चुना और उसमे भी रति क्रीड़ा में ही सभी रसों का रसास्वादन कराने की चेष्टा की है। वीभत्स तथा शान्त के उदाहरण भी इसी क्षेत्र मे दिये हैं। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि केशव की दृष्टि एकनिष्ठ रही और उसने राधाकृष्ण की रति में ही नव रस का विधान किया।

श्री वृषभानु कुमारि हेतु श्रृंगार रूपमय
वास हास रस हरे मात बधन करुनामय
केशीप्रति अति रौद्र वीर मारौ वत्सासुर
भय दावानल पान पियो वीभत्स कसीडर

अति अद्भुत बन्च विरचि मति शांति संतत नित शोचचित
कहि केशव सेवहु रसिक नवरस में ब्रजराज नित

रसिक प्रिया में केशव की दृष्टि रसज्ञों पर न होकर रसिकजनों पर है। अतएव रसिकप्रिया को रसमीमाँसा की दृष्टि से देखना भूल है। सम्पूर्ण रसि कप्रिया को १६ प्रकाशों में विभाजित किया गया है, जिसका क्रम इस प्रकार है:–

(१) शृंगार और उसके भेद (२) नायक लक्षण (३) नायिका जाति वर्णन (४) दर्शन वर्णन (५) दंपति चेष्टा वर्णन (६) भाव लक्षण (७) अष्टनायिका वर्णन (८) विप्रलंभ शृंगार लक्षण (९) मान लक्षण (१०) मान मोचन लक्षण ११) करुणा विरह लक्षण (१२) सखी वर्णन।

केशव की दृष्टिः—ग्रन्थ में केशव की दृष्टि रस मीमाँसा पर नहीं रही है। इसका सबसे दृढ़ प्रमाण यह है कि उस में भाव, विभाव, अनुभाव तथा संचारी भाव का कहीं भी शास्त्रीय विवेचन नहीं हुआ है। केवल भाव के विषय में आपने इतना कह दिया है:–

भाव सु पाँच प्रकार को, सुनु विभाव अनुभाव।
अस्थाई सात्विक कहैं, व्यभिचारी कवि राव॥

प्रकाशों के अन्त में केशव ने लिखा है, कि वे राधाकृष्ण के सौंदर्य का वर्णन कर रहे हैं। इससे उनके काव्य में अनेक विशेषतायें आ गयी हैं: —

(१) निर्वैयक्तिकता:—कवि ने तटस्थ होकर अपनी सम्पूर्ण भावनाओं का आरोप राधाकृष्ण पर किया है। उसे अपनी आत्मव्यञ्जना नहीं करनी पड़ी है, किन्तु उसने अन्त में अपना नाम अवश्य डाल दिया है; यद्यपि यह सत्य है कि काव्य के मूल में व्यक्तित्व केशव का ही है। आत्मव्यञ्जना के छिपाने का मूल कारण है कि कवि ने अपने को काव्य से दूर रखा है।

(२) कृष्ण नायक:—भगवद् भक्ति के साधन न होकर लौकिक जीवन को सुखमय बनाने वाले हैं। थोड़े समय के लिए उसके स्वरूप का स्मरण कर हृदय मे एक विचित्र प्रकार की गुदगुदी पैदा हो जाती है जोकि हमे लौकिकता (इन्द्रियसुख) की ओर बढ़ने के लिए लालायित कर देती है। क्योंकि केशव के राधाकृष्ण नायक-नायिकाओं की शृ गार-रसांतर्गत सभी परिस्थितियों के भीतर से गुजरते हैं। राधाकृष्ण की यह लीला कितनी आकर्षक तथा प्रभावी है—

छवि सों छबीली वृषभानु की कुंवरि आजु,
रही हुती रूप मद मान मद छकि कै।
मारहू ते सुकुमार नन्द के कुमार ताहि,
आये री मनावन सयान सबनि कै।
हँसि-हँसि सोहैं करि-करि पाय परि-परि,
केसोदास की सों जब रहे जिय जानि कै।
ताही समै उठै घन घोर दामिनी सी बाइ,
आइ उर लागी श्याम घन सों लपकि कै॥

प्रसाद गुण:—प्रसाद गुण को कवि ने रसिकप्रिया मे अपने हाथ से नहीं जाने दिया है। माधुर्य रसिक प्रिया का प्राण है। इसी कारण रसिक प्रिया मे सुन्दर काव्य के दर्शन हो पाते हैं।

आजु विराजत है कहि केशव श्री वृषभानु कुमार कन्हाई
बानि विरंचि वही रस काम रची जो बरी सो बधून बनाई
अंग विलोकि त्रिलोक में ऐसी को नारि निहारिन बार लगाई
मूरतिवंत श्रृंगार समीप श्रृंगार किये जनु सुन्दरताई ।।

कल्पना:—सरस्वती को कामदेव के हाथों से रचना कितनी आसाधारण कल्पना है। नारी सौन्दर्य के आदर्श के लिए केशव ने रति की कल्पना की है, वाणी की नहीं।

कोमल विमल मन विमला सी सखी साथ
कमला ज्यों लीन हाथ कमल सनाल के
नुपुर की ध्वनि सुनि जोरे कलहंसन के
चौंकि चौंकि परैं चारु चेखा मराल के
कंचन के भार कुचभारनि सकुच भार
लचकि लचकि जात कटि तट बाल के
हरैं हरैं बोलत विलोकत हरैई हरैं
हरै हरैं चलत हरत मन लाल के

रसिकप्रिया में केशव की दृष्टि सहज-सौन्दर्य पर भी गयी है। देखिये एक सखी दूसरी सखी से क्या कहती है:

तन आपने भाये सिंगार नहीं वे सिंगार सिगार सिंगारै वृथाहीं।
वृजभूषण नौननि भूख है जाकिं सु तोपै सिंगार उतारे न जाहीं।
सब होत सुगन्ध-नहीं तौ सुगन्ध सुगन्ध में जाति सुगन्ध वृथाही।
सखि तोहिं तैं है सब भूषण-भूषितभूषण तौ तुव भूषित नाहीं।

वचनविदग्धता:—केशव की वचन विदग्धता अथवा उक्ति का चमत्कार रसिकप्रिया में विशेष उल्लेखनीय है। गोपीकृष्ण के प्रसंग में देखिये:—

अंग अली धरिये अँगियाऊ न आजु ते नींद न आवन दीजै।
जानति हौं जिय नाते सखीन के लाजहू को अब साथ न लीजै।
थोरेहि द्यौसते खेलन तेऊ लगीं उनसो जिन्हें देखि बै जीजै।

नाह के नेह के मामिले आपनी छाँहहु की परतीति न कीजै ॥

अलंकारः---केशव ने अपने सांग रूपकों द्वारा कृष्ण के सौंदर्य का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है:----

चपला पट मोर किरीट लसै मघवा धनु शोभ बढ़ावत है।
मृदु गावत आवत वेणु बजावत मित्र मयूर नचावत है।
उठि देखि भटू भरि लोचन चातक चित्त की ताप बुझावत है।
घनश्याम घने घन वेष धरे जु बने बनते ब्रज आवत है।

अनेक स्थलों पर केशव ने अपनी कल्पना को रूपकों द्वारा अत्यधिक सजीव कर दिया है।

है तरुणाई तरंगनि पूर अपूरब राग रंगे पय।
केशवदास जहाज मनोरथ संभ्रम विभ्रम भूर भरे भय।
तर्क तरंग तरंगित तुंग तिमिंगल शूल विशालनि के चय।
कान्ह कछू करुनामय हे सखि तैंही किए करुणा वरुणालय।

किन्तु कहीं-कहीं केशव ने लोक ज्ञान को आवश्यक अंग मानकर भाव को क्लिष्ट भी बना दिया है।

प्रेममय भूपरूप सचिव संकोच शोच,
विरद विनोद फील मेलियत पचि कै।
तरल तुरंग अवलोकनि अनन्तगति,
रथ मनोरथ रहे प्यारे गुन गचिकै।
दुहूँ ओर परी जोर घोर घनी केशवदास,
होय जीत कौन की को हारे हिय लचिकै।
देखत तुम्हें गुपाल तिहि काल करि बाल,
डर शतरंज कैसी बाजी राखी रचिकै।

केशव को अत्यधिक मोह यमक अलंकार से था। यह नितान्त सत्य है कि केशव के समान कोई दूसरा कवि यमक के इतने सजीव उदाहरण नहीं रख सका है।

हरित हरित हार हेरत हियो हरत,
हारी हू हरिन नैनी हरि न कहू लहो।
बनमाली ब्रज पर बरषत बनमाली,
बनमाली दूर दुख केशव कैसे सहौं।
हृदय कमलनैन देखि कै कमल नैन,
होहुंगी कमलनैनि और हों कहा कहों।
आय घने घनश्याम घन ही ते होत घन,
श्याम के दिवस घनश्याम बिन क्यों रहो।

उत्प्रेक्षा अलंकार भी केशव के अधिक सजीव हैं।

बन में वृषभानु कुमारि मुकारि रमे रुचिसों रस रूप पिये,
कहूँ कूजत पूजत कामकला विपरीति रची रति केलि लिये।
मणि सोहत श्याम जराइ जरी अति चौकी चलै चहुचार हिये,
मखतूल के झूल झुलावत केशव भानु मनो शशि अंक लिये।

रस---रस की दृष्टि से रसिकप्रिया अत्यधिक सुन्दर रचना है। एकमेव यही ग्रन्थ है जिसमें केशव की सहृदयता का परिचय मिलता है। संयोग तथा वियोग दोनों के ही वर्णन केशव ने बड़ी ही कुशलता से किये हैं।

संयोग वर्णन---

आतुर क्यों उठि दौरी अली, जनु आतुर क्यों गहिये त्यों गही त्यों।
हे मेरी रानी कहा भयो तो कहं, बूझन केशव बूझि रही त्यों।
डीठि लगी किधौं प्रेत लग्यो, कि लग्यो उर प्रीतम जाहि डरी यों।
आनन सीकर सी कहिये धक, सोवत तें अकुलाय उठी यों।

वियोग वर्णन--

भौति भली वृषभानु लली, जबते अँखियौन सों जोरी।
भौंहे चढ़ाय कछु डरपाइ, बुलाइ लई हँसि कै बश भोरी।
केशव काहू सों ता दिन ते, रुचि कै न विलोकति के त्यों निहोरी।
लीलति है सब ही के श्रंगार, अँगारिन बिन चन्द चकोरी॥

केशव ने अंतिम प्रकाश १६ में अपने पाण्डित्य को दिखाने की चेष्टा की है। इसमें इन्होंने शृंगार, वीभत्स तथा भयानक जैसे विरोधी रसों का तथा रौद्र एवं करुणा का साथ साथ वर्णन किया है। इतना ही नहीं तो केशव ने शोक में भोग का वर्णन किया। अतएव रस का आनन्द इन स्थानों पर नहीं मिल पाता है। यह अवश्य है कि केशव शास्त्रीय दृष्टि से अवश्य सफल हैं।

प्रेमकूटः— केशव ने रसिकप्रिया में कुछ प्रेम कूट भी लिखे हैं जो कि अत्यधिक मार्मिक हैं। इन्हें समझने के लिये रसशास्त्र की रूढियाँ तथा कवि परंपरा का ज्ञान आवश्यक है।

उदाहरणः—

बैठी हुती वृषभानु कुमारि सखीन की मण्डलीमणिप्रवीनी।
लै कुम्हिलानो सो कंज परी इक पायन आय गुवारिन धीनी।
चंदन सों छिरकी वह पाक हैं पान दये करुणारस भीनी।
चंदन चित्र कपोलन लोपिकै अंजन आँजि बिदा करदीनी।

नायक के भावों के कितने सुन्दर से उपरोक्त पद में व्यक्त किया गया है। इसी प्रकार का दूसरा पद देखिये:—

सखि सोहत गोप सभा मँह गोविंद बैठे हुते धुति को धरिकै।
जनु केशव पूर्ण चन्द्र लसै चित चोर चकोरन को हरि कै।
तिन को उलटो करि आन दियो किहु नीरज नीर नए भरिकै।
कहि काहे तैं नेकु निहार मनोहर फेर दियो अलिका करिकै।

नायक के रोने की भावना का इससे अधिक सुंदर ढंग व्यक्त करने का और क्या हो सकता था।

भाषाः— रसिकप्रिया की प्रसाद गुण सम्पन्न है। देखिये:—

जानै को पान खवावत क्यों हूँ, गई लगि अँगुली ओठ नवीने।
तैं चितयो तबहीं तिहि भाँति जुलाल के लोचन लीलि सलीने।
बात कही हरये हँसि कै सुनि मैं समुझी वै महारस भीने।
जानत हौं प्रिय के जिय के अभिलाष सबै परिपूरण कीने।

रसिकप्रिया अनेक ऐसे कुरुचिपूर्ण स्थल हैं, जिन के कारण केशव लाछित हैं। यद्यपि केशव ने जो कुछ भी लिखा है, वह लोक व्यवहार में किसी न किसी अंश मे होता ही रहता है फिर भी इस प्रकार के प्रसगों की साहित्यक मर्यादा के लिये अवहेलना करना आवश्यक रहता है। केशव कि इस परंपरा ने देव, बिहारी आदि कवियों को लिखने के लिए उत्साहित किया है।

एक स्थान पर केशव ने कृष्ण और राधा को धाय के घर पर मिलाया है।

हंसत खेलत खेल मन्द भई चन्दद्युति,
कहत कहानी अरु बूझत पहेली जाल।
केशव दास नींद सिसु आपने आपने घर,
हरै हरै उठि गई ग्वालिका सकल बाल।
घोर उठे गगन सघन घन चहूं दिशि,
उठि चले कान्ह धाय बोलि उठी तिहिं काल।
आधीरात अधिक अँधेरी माँझ जैहो कहाँ,
राधिका की आधी सेज सोय रहौ नन्दलाल।

घर में आग लगी है। राधाकृष्ण ने रति का अवसर ढूँढ निकाला है।

जानि आगि लागी वृषभानु के निकर भौन,
दौरि ब्रजवासी चढ़े चहूं दिशि धाइकै।
जहाँ तहाँ शोर भारी भीर नर नारिन की,
सबही की छूटि गई लाज यहि भाइ कै।
ऐसे में कुवँर कान्ह सारी शुक बाहिर कै,
राधिका जगाई और युवती जगाइ कै।
लोचन विशाल चारु चिबुक कपोल चूमि,
चंपे कैसी माला लाल लीन्हीं उर लाय कै।

घर पर उत्सव है। चारों ओर आनन्द मनाया जा रहा है। राधा-कृष्ण अपनी दुनियाँ में मस्त हैं।

बल की बरसु गाँठ ताकि रात जागिबे को,
आई ब्रज सुन्दरी सँवा रितन सोनो सो ।
केशवदास भीर भई नंद जू के मंदिरनि,
आयो मध्य ऊरध बचो न काहू कोनों सो ।
गावत बजावत नचत नाना रूप करि,
जहाँ तहाँ उमँगत आनन्द को औनो सो ।
साँवरे की सूनी सेज सोवत हीं राधिका जी,
सोये आनि साँवरेऊ मानि मन गोनो सो ।

श्याम सुन्दर द्विवेदी एम० ए०
रिसर्चस्कालर

रसिक-प्रिया

प्रथम प्रकाश

शृंगार और उसके भेद

छप्पय

एक रदन गज बदन सदन बुधि मदन कदन-सुत।
गौरिनंद-आनन्द कद-जग बन्द चन्द युत।
सुख दायक, दायक सुकीर्त्ति जगनायक-नायक।
खल घायक-घायक दरिद सब लायक-लायक।
गुण-गुण अनत भगवत भव भागवत भव भय हरण।
जय केशवदास निवास-निधि, लबोदर अशरण-शरण ॥१॥

केशवदास प्रार्थना करते हैं कि एक दात वाले, बुद्धि क आगार, कामदेव को मारनेवाले श्री शिवाजी के पुत्र, पार्वतीनदन आनन्दमूल, चन्द्रमा धारी सुख देनेवाले, कीर्त्तिदायक जगनायक विष्णु के द्वारा देवताओं मे नायक (प्रथम पूज्य) माने जाने वाले, दुष्टों के सहारक, दरिद्रता के नाशक, प्रधानोत्तम, अनन्त गुण धारी ऐश्वर्यशाली, भाग्यवान्, संसार के कष्टों को दूर करने वाले, निधियों क निवास, लंबोदर और शरणरहितों का शरण देने वाले श्री गणेश की जय हो।

नमस्कारात्मक मगलाचरण

लक्षण दोहा

करि प्रणाम, सुमिरण, नरै, इष्ट देवता जोइ।
नमस्कार आत्म स्तुतो, मन्थन मति ते होइ ॥२॥

जहाँ पर इष्ट देवता का स्मरण करके प्रणाम किया जाता है वहाँ नमस्कारात्मक मंगलाचरण होता है।

आशीर्वादात्मक मंगलाचरण

लक्षण—दोहा

आवत है 'जय' शब्द जहँ, देव नाम के संग।
मंगल आशिर्वाद सो, कहत सुकवि रूचिरंग ॥३॥

जहाँ देवता के नाम के साथ 'जय' शब्द आता है, उसे सुकवि गण आशीर्वादात्मक मंगलाचरण कहते हैं।

वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण

लक्षण—दोहा

नमस्कार जय रहित पद, ग्रन्थ वस्तु को रूप।
जानि परै सुरविनय जत, कहत ताहिकवि भूप ॥४॥

जहाँ पर ग्रन्थ का कथानक नमस्कार तथा जय शब्द के बिना प्रकट किया जाय और जो सुर-विनय ज्ञात हो उसे श्रेष्ठ कविगण वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण कहते हैं।

छप्पय

श्री वृषभानु-कुमारि हेतु शृंगार रूप मय।
वास हास रस हरे, मातबंधन करुणामय ॥
केशी प्रति अति रौद्र, वीर मारो वत्सासुर।
भय दावानल पान कियो, वीभत्स बकी उर ॥
अति अद्भुत बंचि विरंचि मति, शांत संतते शोच चित।
कहि केशव सेवहु रसिक जन, नवरस मय ब्रजराज नित ॥५॥

श्रीवृषभानु कुमारी-राधाजी के लिए जो शृंगार रूप हुए। गोपियों के वस्त्र रहते समय जिन्होंने हास्यरस उत्पन्न किया। माता के द्वारा बाँधे जाते समय जिन्होंने करुण रूप रखा। 'केशी' के प्रति जो रौद्र रूप हुए। वत्सासुर को मारते समय जिन्होंने वीर रूप धारण किया। दावानल दान करते समय भयानक रूप रखा। पूतना का स्तन दान

करते समय वीभत्स रस की उत्पति की। वत्स रहन के समय ब्रह्मा की बुद्धि पर आश्चर्य प्रकट करते हुए अद्भुत रस उत्पन्न किया तथा जो निरन्तर शात स्वरूप हैं, उन नवरस मय श्री कृष्ण की, (केशवदास कहते हैं कि) हे रसिक लोगो ! सदा सेवा करो।

दोहा

नदी बेत बै तीर जहँ, तीरथ तुगारन्न।
नगर ओछडी बहु बसै, धरणीतल में धन्न ॥६॥
आश्रम चार बसे जहाँ, चार वर्ण शुभ कर्म।
जप तप विद्या वेद विधि, सबै बढे घन धर्म ॥७॥
दिन प्रति जहँ दूनों लहैं, जहाँ दया अरुदान।
एक तहाँ केशव सुकवि, जानत सकल जहान ॥८॥
अपने अपने धर्म ते, सबे सदा सुखकारि।
जासों देश विदेश के, रहे सबै नृप हारि ॥९॥
रचों चित्र विचार तहँ, नृप मणि मधुकर शाहि।
गर्भहर बार का शीश राव, कुल मडन यशु जाहि ॥१०॥
ताते पुत्र प्रसिद्ध महि, मडन दूल हराम
इन्द्रजीत ताको अनुज, सकल धर्म को धाम ॥११॥
दीन्ही ताहि नृसिहजू, तन मन जय रणसिद्धि।
हितकर लक्ष्मण राम ज्यों, भई राजसी वृद्धि ॥१२॥
तिन कवि केशवदास सों, कीन्हीं धर्म सनेहु।
सब सुख दै करि यों कह्यो, 'रसिक प्रिया' करि देहु ॥१३॥
सवत सोरहसै बरस, बीते अडतालीस।
कातिक सुदी तिथि सप्तमी, बार बरन रजनीस ॥१४॥
अतिरति गति मति एक करि, विविध विवेक बिलास।
रसिकन को रसिक प्रिया, कीन्हीं केशवदास ॥१५॥
ज्यों बिन दीठि न शोभजै, लोचन लोल विशाल।
त्योंही केशव सकल कवि, बिन वाणी न रसाल ॥१६॥

ताते रुचि शुचि शोचि पचि, कीजै परस कवित्त।
केशव श्याम सुजान को, सुनत होइ वश चित्त ॥१७॥

बेतवा नदी के किनारे जहाँ तुगारण्य तीर्थ है, वहाँ ओड़छा नगर बसा हुआ है, जो इस भूमण्डल में धन्य माना जाता है। जहाँ पर चारों आश्रम तथा चारों वर्ण के लोग बसते हैं, जो शुभ कर्म करने वाले तथा जप, तप वेदाध्ययन में लगे रहते हैं अत उनके धन तथा धर्म की सब प्रकार से वृद्धि होती रहती है। जहा दया और दान प्रति दूना होता रहता है; वहाँ एक सुकवि केशव रहते हैं उन्हें सारा संसार जानता है। वहा के सभी लोग अपने-अपने कर्त्तव्यों में लगे हुए सुखी हैं। उनसे देश विदेश के सभी राजा हार गये। वहीं पर ब्रह्मा ने विचार पूर्वक नृपतिवर मधुकर शाह को उत्पन्न किया जो सूर्यकुल के अन्तर्गत गहरवार वंश की शोभा थे। उनके पुत्र पृथ्वी भूषण दूलह राम हुए। उन्हीं के छोटे इन्द्रजीत सिंह थे जो बड़े धर्मात्मा थे। उन्हें (भगवान् नृसिंह ने सुन्दर) शरीर, उदार, मन, रण भूमि में सफलता आदि सभी कुछ दिया था। श्रीराम के प्रति लक्ष्मण की तरह वह भी अपने बड़े भाई के हितकारी थे उनके राज्य में सब प्रकार से वृद्धि हुई। उन्हीं ने केशवदास से गुरु-दीक्षा ली और सब तरह का सुख देकर कहा कि 'रसिक प्रिया' लिखो। संवत् सोलह सौ अड़तालीस कार्तिक सुदी सप्तमी, चन्द्रवार के दिन,, प्रीति तथा बुद्धि को एकत्र करके विविध प्रकार के ज्ञानों से भरी हुई, 'रसिक प्रिया' को. केशवदास ने रसिक व्यक्तियों के लिए लिखा। जिस प्रकार बड़े-बड़े सुन्दर नेत्र बिना दृष्टि के शोभा नहीं देते उसी प्रकार (केशवदास कहते हैं कि) सभी कविगण सरस वाणी के बिना शोभा नहीं पाते। इसलिए खूब सोचविचार कर ऐसे कवित्त रचने चाहिए जिनसे (केशव कहते हैं कि) श्याम सुजान का मन वश में हो जाय।

नवरस वर्णन

प्रथम सिंगार सुहास्यरस, करुणा रुद्र सु वीर।

भय बीभत्स बखानिये, अभुत शान्त सुधीर ॥१८॥
न बहू रस के भाव बहु, तिनके भिन्न विचार।
सबको केशवदास हरि, नायक है सिंगार ॥१६॥

शृंगार, हास्य करुण, रौद्र, बीर, भयानक, वीभत्स अद्भुत तथा शान्त ये नौरस हैं। इन नवों रसों के अनेक भाव हैं और उनके भी अनेक भेद हैं। केशवदास कहते हैं कि इन रसों का नायक शृंगार रस है जिसके देवता स्वयं हरि हैं।

शृंगार रस-लक्षण

दोहा

रति-मति की अति चातुरी, रति-पति मंत्र विचार।
ताही सों सब कहत हैं, कवि-कोविद सिंगार ॥२०॥
शुभ संयोग वियोग पुनि, दोउ सिंगार की जाति।
पुनि प्रच्छन्न प्रकाश कार, दोऊ द्वै द्वै भाँति ॥२१॥

जहाँ पर रति-मति तथा रति-पति (कामदेव) पर विचार प्रकट किये जाते हैं, उसे कवि कोविद गण शृंगार कहते हैं। इस रस के संयोग और वियोग दो भेद होते हैं। फिर दोनों के प्रच्छन्न और प्रकाश दो-दो भेद और होते हैं।

प्रच्छन्न संयोग, उदाहरण—सवैया

वन में वृषभानु-कुमारि मुरारि, रमें रुचिसों रस रूप पिये।
कल कूजत पूजत कामकला, विपरीत रची रति केलि हिये ॥२२॥
मणि सोहत श्याम जराइ जरी, अति चौकी चलै चल चार हिये।
मखतूल के झूल झुलावत केशव भानु मनो शनि अंक लिये ॥२३॥

एक बार वन में राधा और श्रीकृष्ण रूप रस का रुचि के साथ पान किये हुए रमण कर रहे थे। आनन्द पूर्वक किलकारी भरते हुए काम-कला के पूजन में निमग्न होकर विपरीत-रति में प्रवृत्त थे। राधा के गले में एक श्याम मणिमय जड़ाउ-चौकी पड़ी थी जो बार-बार हिलती

थी । 'केशवदास' कहते हैं कि वह ऐसी ज्ञात होती थी मानो मखतूल के झूला में सूर्य 'शनि' को अंक में लिए हुए झुला रहे हैं ।

प्रच्छन्न संयोग —दोहा

सो प्रच्छन्न संयोग अरु, कहै वियोग प्रमान ।
जानै पीउ, प्रिया कि सखि, होहिजु तिनहि समान ॥२४॥

प्रच्छन्न संयोग और वियोग वह है जिसे या तो प्रियतम जानता है या प्रियतमा या सखियां अथवा जो उन्हीं के समान अंतरंग होते हैं वे जानते हैं ।

प्रकाश संयोग दोहा

सो प्रकाश संयोग अरु, कहै प्रकाश वियोग ।
अपने-अपने, चित्त मे, जाने, सिगरे लोग ॥२५॥

प्रकाश संयोग और वियोग वह है जिसे अपने-अपने मन में सभी लोग जानते हों ।

प्रकाश संयोग उदाहरण

केशव एक समय हरि राधिका आसन एक लसैं रंग-भीने ।
आनदँ सों तिय आनन की द्युति, देखत दर्पण मे दृग दीने ।
भाल के लाल मे बाल बिलोकत ही भरिलालन लोचन लीने ।
शासन पीय सवासन सीय, हुतासन मे जनु आसन कीने ॥२६॥

'केशवदास' कहते हैं कि एक बार श्रीकृष्ण और राधा एक ही आसन पर आनन्दमग्न होकर बैठे थे । राधा अपने मुख की शोभा दर्पण में आंख लगाए देख रही थी । तब राधा जी के लाल बेंदा में जो प्रतिबिम्ब पड़ा उसे देखते ही उन्होंने आँखें भरली । मानो पति की आज्ञा से वस्त्र सहित सीता जी अग्नि में आसन जमाए बैठी हैं ।

प्रच्छन्न वियोग - उदाहरण — सवैया

कीट ज्यों काट त्यों कानन कान सों मानहि में कहि आवत ऊनो ।
ताहि चले सुत के चुप है गये, नीकही केशव एकहि दूनो ॥

नेक अटे पट फूटत आँखि, सुदेखत हैं कब को ब्रज सूनो।
काहे को काहू को कीजै परेखो, सु जीजेरे जीव किनाकदै चूनो ॥२७॥

(नायिका वियोगावस्था में अपनी अंतरंग सखी से कहती है कि) हे सखी ! मान मे जो मैंने ऊनी (कठोर) बातें कही थी वे अब कानों को कीड की भांति काटती हैं। उनको आते सुनकर ये एक नहीं दोनों भली भाति चुप हो गये। और आखें जो उनको तनिक दूर होते ही फूटती थी सो वे जानें कब से (उनके बिना) ब्रज को सूना देखरही हैं। अब किसी का किसलिए परेखा (प्रतीक्षा) किया जाय। हे प्राग ! अब यमराज को चूना देकर (चुनौती देकर) जीवित रहो।

प्रकाश वियोग शृंगार—उदाहरण—कवित्त

शीतल समीर टारि, चन्द्र चन्द्रिका निवारि,
केशोदास ऐसे ही ते हरष हिरातु है।
फूलन फैलाई डारि, झारि डारि घनसार,
चन्दन को डारे चित्त चौगुनो पिरातु है।
नीर हीन मीन मुरझाई जीवै नीर ही ते,
छीर के छिरी के कहा धीरज धिरातु है।
पाई है तैं पीर कैधौं योहीं उपचार करे,
आगि को तो डाढ़ो अग आगि ही सिरातु है ॥२८॥

वियोगिनी नायिका राधा अपनी सखी से कहती है कि तू मेरे ऊपर ठंडी हवा न कर, चन्द्रमा की चादनी को भी दूर कर दे इन्ही से तो मेरी प्रसन्नता दूर हो जाती है अर्थात् मैं सुखी हो जाती हूँ। फूलों को बिखार दे कपूर को शरीर से झाड़ कर अलग कर दे; चन्दन छिड़कने से मेरा मन चौगुना दुखी होता है। नीर-हीन मछली पानी के बिना मुरझाई हुई मछली पानी से ही जीवित होती है; कहीं दूध के छींटे देने से उसको धैर्य बँधता है ? तू ने मेरी पीड़ा को भी समझा है ? या ऐसे ही इलाज कर रही है। जानती नहीं कि आग का जला आग ही से ठंडा होता है।

दोहा

यों प्रच्छन्न प्रकाश सब, बरणो योग वियोग।
अब नायक लच्छण कहों गूढ अगूढ़ प्रयोग ॥२६॥

इस प्रकार संयोग और वियोग शृंगार के प्रच्छन्न और प्रकाश भेदो का वर्णन किया जा चुका। अब मै नायकों के लक्षणों का वर्णन करता हूँ।

द्वितीय प्रकाश

नायक लक्षण—दोहा

अभिमानी, त्यागी, तरुण, कोक कलान प्रवीन ।
भव्य, क्षमी, सुन्दर, धनी, शुचि रुचि सदा प्रवीन ॥१॥
ये गुण केशव जाहि में, सोई नायक जान ।
अनुकुल, दक्ष, शठ, धृष्टपुन, चौविध ताहि बखान ॥२॥

'केशव' कहते है कि जो अभिमानी, त्यागी, तरुण, कोक कलाओं मे प्रवीण, भव्य, क्षमाशील, सुन्दर, धनी, पवित्र रुचिवाला तथा प्रवीन हो, उसे नायक समझना चाहिए। नायक चार प्रकार के कहे गये हैं। अनुकूल, दक्ष, शठ और धृष्ठ।

१—अनुकूल—दोहा

प्रीति करै जिन नारि सों, पर नारी प्रतिकूल ।
केशव मन वच कर्म करि, सो कहिये अनुकूल ॥३॥

'केशव' कहते हैं कि जो पुरुष मन, वचन और कर्म से अपनी भार्या से प्रेम करता है तथा पराई स्त्री से विमुख रहता है, वह अनुकूल नायक कहलाता है।

(१)—उदाहरण (प्रच्छन्न अनुकूल)—सवैया

और के हास विलास न भावत साधुन की यह सिद्ध सुभावै ।
बात वहै जो सदा निबहै, हरि कोउ कहूँ कछु शोधु न पावै ।
आसन, बास, सुबास न भूषण, केशव क्योंहूँ वही बनिआवै ।
मो बिन पान न खात जो कान्ह सुबैर किधौं यह प्रीति कहावै ॥४॥

(नायिका श्रीकृष्ण से कहती है कि), तुम्हें मेरे बिना और किसी से हास-विलास अच्छे नहीं लगते सो यह तो सज्जनों का स्वभाव ही है। हे कृष्ण बात वही करनी चाहिए जो सदा निभ सके और कोई

उसे जान न सके। रही आसन, वस्त्र, सुवास तथा भूषणों की बात सो वे किसी न किसी प्रकार मिल ही जाते हैं। हे कृष्ण! तुम मेरे बिना जो पान तक नहीं खाते सो यह बैर कहलता है या प्रीति? क्योंकि यह जानकर मुझे दुःख होता है।)

(२) प्रकाश अनुकूल—सवैया

केशव सूधे विलोचन सूधी विलोकनि सों अवलो कै सदाई।
सूधिये बात सुनै समझै. काहि आवत सूधिये बात सदाई।
सुधी सुहाँसी, सुधाकर सों मुख, शोधि लई बसुधा की सुधाई।
सूधे स्वभाव सबै सजनी, वश कैसे किये अति टेढ़े कन्हाई ॥५॥
मेरे तो नाहिं नै चंचल लोचन, नाहिं नै केशव बानि सुहाई।
जानों न भूषण भेद के भाव, न भूलेहु नैनन भौंह चढ़ाई।
भौरेहु न चितयो हरि ओर त्यों, बैर करैं इहि भाँति लुगाई।
रंचक तो चतुराई न चित्तहिं, कान्ह भये वश काहे ते भाई ॥६॥

नायिका की सखी उससे कहती है कि तेरे नेत्र सीधे हैं और तू सीधी दृष्टि से ही सदा देखती है। सीधी बात ही सुनती और समझती है और सीधी बात ही तुझे कहना आता है। तेरे चन्द्रमुख से सीधी ही हँसी भी निकलती है, सारे विश्व भर की सिधाई मानो तूने ही ले रखी है। हे सखी, तेरा सभी कुछ स्वाभाविक रूप से टेढ़ा है पर तूने टेढ़े कृष्ण को वश में कैसे कर लिया।

हे सखि! न तो नेत्र चंचल है और न मेरी वाणी ही सुन्दर है। न मैं भूषणों का भेद-भाव जानती हूँ और न मैंने भूलकर भी नेत्र और भौंहे चढ़ाना सीखा है। मैंने धोखे से भी कभी कृष्ण की ओर नहीं देखा परन्तु फिर भी स्त्रियां मेरी निन्दा क्यों करती हैं? मैंने तनिक भी चतुराई नहीं सीखी। (फिर बतला) कृष्ण मेरे वश मे क्यों रहते हैं?

२—दक्षिण नायक लक्षण—दोहा

पहिली सो हित हेतु उर, सहज बड़ाई कानि।
चित चलै हूँ ना चलै, दक्षिण लक्षण जानि ॥७॥

जिस नायक के हृदय मे अपनी पहली विवाहिता पत्नी के समान ही अन्य सभी विवाहितओं से एकसा प्रेम होता है और जिसका हृदय कभी विचलित नहीं होता, वही दक्षिण नायक कहलाता है।

उदाहरण

प्रच्छन्न दक्षिण—कवित्त

हरि से हितू सों भ्रम भूलिहू न कीजै मान,
हातो करि हिये हू सों होत हित हानिये।
लोक में अलोक आन नीकहू लगावत हैं,
सीता जू को दूत गीत कैसे उर आनिये।
आँखिन जो देखियत सोई सांची केशवदास,
कानन की सुनी सांची कबहू न मानिये।
गोकुल की कुलटा ये योंही उलरावत हैं,
आजु लौं तौ वैस ही है कालिह कहा जानिये ॥८॥

(किसी सखी द्वारा नायक का दूसरी स्त्री पर आसक्त होने की बात सुनकर नायिका मन को संबोधित कर कहती है कि) हे मन ! कृष्ण जैसे प्रेमी से भूल कर भी मान न करना चाहिए। उनसे हृदय से प्रेम कर नहीं तो हित की हानि होगी। इस संसार में लोग आकर बहुत सी झूठी बातें भी कह जाते हैं। उदाहरण के लिए सीता जी के बारे में दूत की कही बात को समझले। इसलिए जो घटना आँखों से देखी वही सच्ची होती है और कानों से सुनी हुई बात को कभी सच्चा न मानना चाहिए। गोकुल की कुलटाएं योहीं बहकाया करती हैं। आज तक तो कृष्ण का प्रेम वैसा ही है, कल की कौन जाने।

प्रकाश दक्षिण—सवैया

चित चोप चितैबे की तैसीये है, अरु तैसीये भांति डरात घने।
अरु तैसेइ कोमल बोल गोपाल के मोहत है तिहि भाँति मने।
गुण तैसेइ हास विलास सबै हुते तैसेइ केशव कौन गने।
सखि तू कहै आन बधू के अधीन हैं, सापरतीत किधौं सपने ॥९॥

(नायिका अपनी सखी से कहती है कि) मेरे नायक कृष्ण के मन में मेरी ओर देखने का वैसा ही चाव है (जैसा पहले था) वह उसी तरह डरता रहता है। कृष्ण के वैसे ही कोमल वचन होते हैं और वह उसी तरह मन को मोहते रहते हैं। वैसे ही उनके हास-विलास सभी हैं, कहाँ तक गिनाऊँ। तू जो कहती है कि वह दूसरी स्त्री के अधीन हैं सो प्रत्यक्ष की बात है या स्वप्न की ?

३—शठ नायक लक्षण—दोहा

मुख मीठी बातें कहै, निपट कपट जिय जान।
जाहि न डर अपराध को, शठ कर ताहि बखान ॥१०॥

जो मुँह से तो मीठी-मीठी बातें कहता हो और मन में बड़ा भारी कपट रखता हो तथा जिसे अपराध का डर न हो, उसे शठ नायक कहना चाहिए।

उदाहरण

प्रच्छन्न शठ—सवैया

रुचि पंकज चंदन कंचन चम्पक रंच न रोचन हू की रची।
कहिये कहि कारण को इती लायक. कापर भामिन भौंह नची।
अनुमानत हौं अँखियाँ लखि लाल ये, नाहिंने राति के रोष रची।
तन तेरे वियोग तपो तरुणी. तिहि मानहुँ मोहिय माहँ तची ॥११॥

(कोई नायक नायिका के नेत्रों में क्रोध की लालिमा देखकर अपना अपराध छिपाने के उद्देश्य से कहता है कि) तेरे नेत्रों में लाल कमल, लाल चंदन की (लाल) शोभा है और सोना तथा चम्पक की (पीली) शोभा रंचक मात्र भी नहीं है। इसका क्या कारण है, कहिए ? ऐसा कौनसा लायक है, जिस पर तुमने भौंहें टेढ़ी की हैं ? तुम्हारी आँखें लाल देखकर मेरा तो यह अनुमान है कि ये रात्रि के क्रोध के कारण लाल नहीं हैं। (मैं तो यह समझता हूँ कि) तुम्हारे वियोग में मेरा शरीर तपा हुआ (लाल) है, और मेरे हृदय में ये रहती है, इसीसे तप कर लाल हो गई हैं।

उदाहरण-२

प्रकाश शठ-कवित्त

कान रँग रँगे नैन तिनही के डोलौ संग,

नासा रंग रसना के रस ही समाने हौ।

और गूढ़ कहा कहौं मूढ़ हौ जू जानि जाहु,

प्रोढ़ि रूढ़ि केशोदास नीके करि जाने हौ।

तन आन, मन आन, कपट-निधान कान्ह,

साँची कहो मेरी आन काहे को डराने हौ।

वे तो हैं बिकानी हाथ मेरे, हौं तिहारे हाथ,

तुम ब्रजनाथ हाथ कौन के बिकाने हौ ॥१२॥

(सखी श्री कृष्ण से कहती है कि) तुम्हारे नेत्र कानों के रंग म रंगे हुए हैं अर्थात् जिसकी चर्चा सुनते हैं उसे ही देखने के लिए दौड़ते हैं। तुम भी उन्हीं के साथ-साथ घूमते फिरते हो। मासारंग भौरैं की भाँति जिह्वा के आनद मे लीन रहते हो। और गूढ बाते ऐसीं हैं उन्हे मै क्या कहूँ, जो मूर्ख भी हो वह भी समझता है। तुम तो अच्छी बुरी बातों को भली प्रकार जानते हो। हे कृष्ण! तुम्हारा तन किसी और का मन किसी का है। तुम कपट-छल के निधान हो। वे तो तुम्हारे हाथ बिकीं, मैं तुम्हारे हाथ बिकी परन्तु हे ब्रजनाथ! तुम किसके हाथ बिके हो?

४—धृष्ट नायक लक्षण—दोहा

लाज न गारी मार की, छाँड़ दई सब त्रास।

देख्यो दोष न मान हीं, धृष्ट सु केशवदास ॥१३॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिसे गाली और मार तक की लज्जा न हो और जिसने सब तरह की त्रास को छोड़ दिया हो तथा जो देखा हुआ दोष भी न माने, उसे धृष्ट नायक समझना चाहिए।

उदाहरण १

प्रच्छन्न धृष्ट—सवैया

मेह भरे लै-लै भाजत भाजन, कौन गने दधि दूध मिठाये।
गारि दये तें हँसै, बरजैं घर, आवत हैं जनु बोल पठाये।
लाज की और कहा कहि केशव, जे सुनिये गुण ते ये सब ढाये।
मामी पिये इनकी मेरी माइको, हे हरि आठहू गांठ हठाये ॥१४॥

जो मक्खन से भरे हुए वर्त्तनों को ले-ले कर भागते हैं, दूध दही की तो गिनती ही क्या है। गाली देने पर हँसते हैं और मना करने पर भी घर में ऐसे घुसे चले आते हैं मानों न्योता देकर बुलाये गये हैं। लज्जा की और क्या बात कही जाय। जितने गुण हैं, सभी पर पानी फेर दिया है। इसलिए हे सखि। श्री कृष्ण पूर्ण रूप से शरारती हैं। इनकी ओर से कौन उत्तरदायित्व लें।

उदाहरण २

प्रकाश धृष्ट—सवैया

सौंह को सोच सकोच न पाँचको, डोलत साहु भयेकरि चोरी।
बैनन बंचकताई रची रति, नैनन के सँग डोलति डोरी।
लाज करैं न डरैं हित हानितें, आनि भरे जिय जानि कि भोरी।
नाहिंन केशव साख जिन्हैं, बकि कै तिनसों दुखवै मुखकोरी ॥१५॥

जिसे न सौगंध खाने का शोच होता है और न पंचों का संकोच तथा जो चोरी करके भी साहु बना घूमता है। जिसके वचनों में वंचकताई भरी है और रति तो मानो जिसके नेत्रों के साथ लगी फिरती है। जो न लज्जा करता है और जो न हित-हानि से भयभीत होता है और जो मुझे भोली भाली समझकर मुझसे आकर भिड़ जाता है। जिसकी किसी प्रकार की भी शाख (विश्वास) नहीं है, उसके साथ बकवाद करके कौन मुख दुखावे ?

दोहा

बरणे हु कवि नायक सबै नायक इहि अनुसार।
सबगुण लायक नायिका, सुनु अब बहुत प्रकार ॥१६॥

कवि-नायकों ने नायकों का इसी प्रकार वर्णन किया है। अब सब गुण लायक नायिकाओं के अनेक भेदों का वर्णन सुनो।
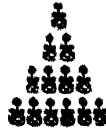
तृतीय प्रकाश

नायिका जाति वर्णन—दोहा

प्रथम पद्मिनी, चित्रिणी युवती जाति प्रमान ।
बहुरि शंखनी, हस्तनी केशवदास बखान ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि युवतियों के पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी और हस्तिनी ये (चार) भेद वर्णन किये गये हैं ।

१ पद्मिनी लक्षण—दोहा

सहज सुगंध स्वरूप शुभ, पुण्य प्रेम सुखदान ।
तनु-तनु भोजन रोस रति, निद्रा मान, बखान ॥२॥
सलज सुबुद्धि उदार मृदु, हास बास शुचि अंग ।
अमल, अलोभ, अनंग-भुव, पद्मिनि हाटक रंग ॥३॥

अर्थ स्पष्ट है । अश्लीलता के कारण पूरा अर्थ नहीं लिखा गया ।

उदाहरण कवित्त

हँसत कहत बात, फूल से झरत जात,
गूढ़ भूरिहाव-भाव कोक कैसी कारिका ।
पन्नगी नगी कुमार आसुरी सुरी निहारि,
डारीं वारि किन्नरी नरी गमारि नारिका ।
तापै हौं कहा है जाऊँ बलि जाऊँ केशोदास,
रची विधि एक व्रज लोचन की तारिका ।
भौंर से भ्रमत अभिलाष लाख भाँति दिव्य,
चम्पे कैसी कली वृष भानु की कुमारिका ॥४॥

जब वह हँसकर बातें करती है तब फूल से झड़ते जाते हैं । उसके हाव-भाव गूढ़ हैं तथा वह कोक की कारिका है । उस पर मैं पन्नगी, नगी, (नाग कन्याएं) आसुरी, सुरी (देव कन्याएं) और किन्नरीं को

निछ्वार करता हूं और नरी तो गँवार कन्याए हैं। केशवदास कहते हैं कि उस पर मैं निछावर हो जाऊँ। ब्रह्मा ने इस ब्रज लोचन की तारिका को एक ही रचा है। इस पर लाखों अभिलाषाए लिए भौंरे जैसे घूमते हैं। यह वृषभानु की पुत्री (राधा) चम्पक पुष्प की कली जैसी है।

२ चित्रिणी लक्षण दोहा

नृत्य गति कविता रुचै, अचल चित्त चल दृष्टि।
बहि रति-रति आत सुरतजल, मुख सुगध की सृष्टि ॥५॥
विरल लोम तन मदन-गृह, भावत सकल सुवास।
मित्र चित्र प्रिय चित्रिणी, जानहु केशवदास ॥६॥

इन दोहों का अर्थ स्पष्ट है अश्लीलता के कारण पूरा अर्थ नही लिखा गया।

उदाहरण—सवैया

बोलिबो बोलन को सुनिबो, अवलोकनि को अवलोकनि जोते।
नाचिबो, गाइबो, बीन बजाइबो, रीझि रिझाइबो जानत तोतें।
राग विरागन के परिरंभन हास विलासन तें रति कोते।
तौ मिलती हरि मित्रहु सों सखि ऐसे चरित्र जो चित्र में होते ॥७॥

(सखी नायिका से कहती है कि) हे सखी! स्वयं बोलना. और दूसरों के वचनों को सुनना, दृष्टि के साथ दृष्टि मिलाना, नाचना, गाना, वीणा बजाना, स्वयं रीझना और दूसरे को रिझाना, परिरंभन हास-विलास, रति क्रीड़ा आदि गुण कहीं चित्र में थोड़े भी होते तो भला कोई हरि (कृष्ण) जैसे मित्र से क्यों मिलता? (सब चित्र ही देखकर संतुष्ट हो जाते)।

३ शंखिनी लक्षण—दोहा

कोप शील कोविद-कपट, सजल सलोम शरीर।
अरुण बसन नखदान रुचि, निलज, निशंक अधीर ॥८॥

क्षारगंध-युत मार-जल, तप्त भूर भग होइ।
सुरता रति अति शंखिनी, बरणत कविजन लोइ ॥९॥

उदाहरण—सवैया

जात नहीं कदली की गलीन, भली विधि ह्वो बदली मुखलावे।
चाहै न चम्पकली की थली मलिनी नलिनी की दिशान सिवावे।
जो कोउ केशव नाग लवंग लता लवली अवलीन चरावै।
खारक दाख खवाइ मरो किन ऊँटहि ऊंट कटारहि भावै ।१०॥

ऊंट केले की गलियों में नहीं जाता और बेरी के कटीले वृक्ष को मुहँ से चबाता है। चम्पक की कली की चाह तक नहीं करता तथा कमिलिनी को मलिन समझ कर उसकी ओर तक नहीं जाता। 'केशवदास' कहते हैं कि यदि उसे नाग (पान) लवंग (लौंग) या लवली की लताओं को चरावे तथा छुहारा, किशमिस खिलाने की कितनी ही चेष्टा क्यों न करे परन्तु उसे तो ऊँट कटारे (एक कंटीले झाड़) की पत्तियां ही अच्छी लगती हैं।

४ हस्तिनी लक्षण—दोहा

थूल अंगुली चरण मुख, अधर भृकुटि कटु बोल।
मदन सदन रंद कंधरा, मंद चाल चित लोल ॥११॥
स्वेद मदन जल द्विरदमद, गंधित भूरे केश।
अति तीक्षण बहु लोम तन, भनि हस्तिनि इहि वेश ॥१२॥

अर्थ स्पष्ट है। अश्लीलता के कारण इन दोहों का भी पूरा अर्थ नहीं लिखा। पाठक कृपया स्वयं समझ लें।

उदाहरण सवैया

सब देह भई दुर्गंध मई मति अंध दई सुख पावत कैसे।
कछु साल तें लोम विशाल से हैं, श्रुति ताड़न केशव बोल अनैसे।
अलि ज्यों मलिनी नलिनी तजि कै, करिनी के कपोलन मंडित तैसे।
छिति छोड़ि कै राजशिरी वश पापि निरयपद राज विराजत कैसे ॥१३॥

जिसकी सब देह दुर्गंध मई है उसके पास मूर्खजन कैसे सुख पाते

हैं ? उसके काटे से बड़े-बड़े बाल हैं और (केशवदास कहते हैं कि) कानों को कटु लगने वाले अद्भुत बातें कहती है। जैसे भौंरा कमिलिनी को छोड़कर हाथी के कपोलों पर मंडित होता है अथवा जैसे पाप वश कोई पृथ्वी की राज्य शोभा को छोड़कर नरक मे शोभा पाता हो।

दोहा

ता नायक की नायिका, ग्रन्थनि तीनि बखान।
स्वकिया परकीया अवर, सामान्या सु प्रमान ॥१४॥

उस नायक की तीन प्रकार की नायिकाए ग्रन्थों मे वर्णन की गई हैं। स्वकीया, परकीया और सामान्या।

१ स्वकीया लक्षण—दोहा

सम्पति विपति जो मरणहूँ, सदा एक अनुहार।
ताको स्वकिया जानिये, मन, क्रम, वचन विचार ।१५॥

जो सम्पति, विपत्ति तथा मरण मे भी मन, क्रम तथा वचन से एक सी श्रद्धा पति में रखे उसे स्वकीया समझना चाहिए।

स्वीकीया भेद—दोहा

मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ गनि, तिनके तीन विचार।
एक-एक की जानिये, चार-चार अनुहार ॥१६॥

उनके (स्वकीयाओं के) मुग्धा, मध्या और प्रौढा तीन भेद होते हैं। फिर एक-एक के चार-चार भेद होते हैं।

१ मुग्धा भेद—दोहा

नवल बधू, नव यौवना, नवल अनंगा नाम।
लज्जा लिये जुरति करै, लज्जा प्राइ सुधाम ॥१७॥

मुग्धा के चार भेद होते हैं। नवल बधू, नवयौवना, नबल अनगा और लज्ज सहित रति करने वाली लज्जा प्राय।

पहला भेद नवल बधू मुग्धा—दोहा

जासों मुग्धा नव बधू, कहत सयाने कोइ।
दिन-दिन द्युति दूनी बढ़ै, वरणि कहे कवि सोइ ॥१८॥

मुग्धा नवल वधू की दिन-दिन दूनी द्युति बढा करती है, इसी से चतुर लोग तथा कविगण उसे नवल-वधू कहते हैं।

उदाहरण सवैया

मोहिबो मोहन की गति को, गति ही पढ़ै बैन कहाँ धौ पढ़ैगी।
ओप उरोजनि की उपजै दिन, कइ मढ़ै अँगिया न मढ़ैगी।
नैनन की गति गूढ चलाचल, केशवदास अकाश चढैगी।
माइ कहा यह माइगी दीपति, जो दिन दो इहि भाँति बढ़ैगी ॥१९॥

(एक सखी दूसरी सखी से नायिका के सम्बन्ध मे कहती है कि) यह बड़े आश्चर्य की बात हैं कि वह मोहन (श्री कृष्ण) की गति (मोहने के मंत्र) को ही सीखती है, उनके वचनों को कहाँ तक सीखेगी। इसके उरोजों की शोभा दिन-दिन इतनी बढ़ रही है कि वे कहाँ समायेंगे, अँगिया तो उन्हें न ढक पावेगी। नेत्रों की गति गूढ़ तथा चंचल और आकाश तक चढ़ने वाली है। हे सखी, जो इसकी दीप्ति इसी भाँति बढ़ती रही तो दो ही दिनों में यह कहाँ समायेगी।

दूसरी नवयौवना मुग्धा - दोहा

सो नवयौवन भूषिता, मुग्धा को यह वेश।
बाल दशा निकसै जहाँ यौवन को परवेश ॥२०॥

जिस नायिका की बाल दशा हटती जाय और युवावस्था आती जाय, उसको नवयौवना मुग्धा कहते हैं।

उदाहरण—सवैया

केशव फूलि नचैं भृकुटी, कटि लूटि नितम्ब लई बहुकाली।
बैन क्षोभ सकोच सु नैनन, छुटि गई गति की चलिचाली।
धौसक धरी न धरी अबलै मिलिवै तुमको बनमाली।
वाको अयान निकासन को, उर आये हैं यौवन के अवताली ॥२१॥

(सखी नायक से कहती है कि) उस नायिका की भौंहें प्रसन्नता के मारे नाच रही हैं और बहुत दिनों की पाली हुई कमर को नितम्बों ने लूट लिया है। उसकी बातों में क्षोभ और आँखों में संकोच आने लगा

है और गति (चाल) की चंचलताई छूट गई है, इसलिए उस नायिका से मिलने के लिए तुम धैर्य धारण करो या न करो, उसका अयानपन हटाने के लिए उसकी छाती पर यौवन के अवताली तो आ ही गये हैं।

तीसरी नवल अनंगा मुग्धा—दोहा

नवल अनंगा होइ सो, मुग्धा केशवदास।
खेलै बोलै बाल विधि, हँसै त्रसै सविलास ॥२२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो नायिका बालिका की भाति खेलती, बोलती, हँसती और डरती है, उसे नवल अनगा कहा जाता है।

उदाहरण—कवित्त

चंचल न हूजै नाथ अंचल न खैंचो हाथ,
सोवै नेक सारिका ऊ शुक तौ सुवायो जू।
मंद करो दीप द्युति चन्द मुख देखियत,
दौरिकै दुराइ आऊं द्वार तौ दिखायो जू।
मृगज मराल बाल बाहिरै बिडार देउँ,
भायो तुम्हैं 'केशव' सु मोहूँ मन भायो जू।
छल के निवास ऐसे वचन विलास सुनि,
सौ गुनो सुरतहूँ तैं श्याम सुख पायो जू ॥२३॥

हे नाथ! चंचल मत हो और मेरा अंचल (वस्त्र) मत खींचो। तोता तो सो ही चुका है, अब मैना को भी सो जाने दो। दीपक के प्रकाश को मंद कर दो, चंद्रमा जैसा मेरा मुँह तो दिखलाई पड़ ही रहा है। हिरन तथा हंस के बच्चों को बाहर निकाल आऊँ, क्योंकि जो तुम चाहते हो वह मुझे भी अच्छा लगता है। (नायिका की) ऐसी बातों को सुन कर छली नायक श्याम को सुरत से भी सौ गुना आनन्द आया।

चौथी लज्जा प्राय मुग्धा—दोहा

मुग्धा लज्जा प्राय रति, वर्णत हैं इहि रीति।
करै जु रति अति लाजसों, पतिहि वढ़ावै प्रीति ॥२४॥

जो नायिका अति लज्जा के साथ रति करे और पति की प्रीति को बढ़ावे, उसे लज्जा प्राय मुग्धा कहा जाता है।

उदाहरण—सवैया

बोली न हौं वे बुलाय रहे हरि, पांय परे अरु ओलियो ओढ़ी।
केशव भेंटिबे को भरि अंक, छुड़ाइ रहे जक हौं नहिं छोड़ी।
सीधे चितैबे को केतो कियो शिर, चाप उठाइ अंगूठन ठोड़ी।
मैं भरि चित्त तऊँ चितयो न, रही गढ़ नैनन लाज निगोड़ी ॥२५॥

वे मुझे बुला बुलाकर थक गये, परन्तु मैं न बोली। वे पैरों पड़े तो मैंने चादर ओढ़ली। उन्होंने अंक भर के भेंटने के लिए मेरी हठ को छुड़ाना चाहा पर मैंने अपनी हठ नहीं छोड़ी। सीधी दृष्टि करके देखने के लिए उन्होंने अंगूठों से मेरी ठुड्डी को दबाकर मेरा शिर ऊँचा किया, परन्तु मेरी आँखों में यह निगोड़ी लज्जा ऐसी समाई कि मैंने फिर भी उनकी ओर नहीं देखा।

मुग्धा शयन—दोहा

मुग्धा सोइ रहै नहीं, पिय सँग सुनो सुजान।
जो क्यों हूँ सोवै सखी, सुख नहीं ताहि समान ॥२६॥

मुग्धा नायिका पहले तो नायक के साथ शयन करना ही नहीं चाहती और यदि किसी प्रकार सखी के अनुरोध पर सो जाय तो फिर उसके जैसा सुख की सीमा भी नहीं होती।

उदाहरण—सवैया

पांइ परे मनुहार करे पलका पर पांइ धरे भय भीनें।
सोईं गई कहि केशव कैसहूँ, कोर करोर हूँ सोंहन कीनें।
साहस कै मुख सों मुख छ्वै, छिन में हरि मान महा सुखलीनें।
एक उसास ही के उस सै, सिगरेई सुगन्ध बिदा कर दीने ॥२७॥

(नायिका की चर्चा करती हुई एक सखी अपनी सखी से कहती है कि) नायक ने उससे पैरों पड़कर अनेक प्रकार से बिनती की तो उसने डरकर पलंग पर पैर रखा। फिर करोड़ों शपथ दिलाने पर किसी प्रकार

सोगई। तब साहस करके मुख से मुख छुवाया तो कृष्ण को बड़ा सुख हुआ। फिर तो उसने एक ही सांस में सारे सुगध बिदाकर दिये।

मुग्धा सुरति—दोहा

मुग्धा सुरति करै नहीं. सपने हूँ सुख मान।
छल बल कीने होत है, सुख शोभा की हान ॥२८॥

मुग्धा नयिका स्वप्न मे भी सुखमान कर रति नहीं करती और जो कहीं छल-बल करके रति की जाय तो सुख और शोभा की हानि हो जाती है।

उदाहरण—कवित्त

सुख दै सखीन बीच दै कै सोहैं खाय कै,
खपाइ कछू स्वाय वश कीनी बरबसु है।
कोमल मृणाल कासी मल्लिकी मालिकासी,
बालिकाजु डारी मीडि, मानस कै पसु है।
जानै ना विमात भयो केशव सुने को बात,
देखो आनि गात जात भयो कैधों असु है।
चित्र सी जु राखी वह चित्रिणी विचित्र गति,
देखो धौं नये रसिक या में कौन रसु है ॥२६॥

(एक सखी नायक से कहती है कि) तुमने उसे सखियों के बीच में आनन्दित करके तथा शपथें खिलाकर और कोई (नशे की वस्तु) खिलाकर हठपूर्वक सुलाया। मृणाल जैसी कोमल तथा मल्लिका (चमेली) की माला जैसी उस बालिका को मसोस डाला, वह मनुष्य है या पशु? वह जानती ही नहीं कि कब सबेरा हो गया, बात कौन सुने। आकर उसका शरीर तो देखो, कैसा हो गया है। उस चित्रिणी को तुमने चित्र जैसा बना दिया है और विचित्र दशा कर दी है। नये रसिक! जरा देखो तो, इसमें क्या रस है?

मुग्धा का मान—दोहा

मुग्धा मान करै नहीं, करै तो सुनो सुजान ।
त्यों डर पाइ छुड़ाइये, ज्यों डरपै अज्ञान ॥२०॥

मुग्धा नायिका पहले तो मान करती ही नहीं और यदि करे तो उसका मान इस प्रकार डरा कर छुड़ा देना चाहिए जिस प्रकार अज्ञानियों को डरा दिया जाता है ।

उदाहरण—सवैया

बोलै न बाल बुलावत हूं, नख रेख लिखै भुव प्रेम परेखो ।
आपने हाथ बिलोक बिलोक, कही तब केशव बुद्धि बिशेखो ।
छोटी बड़ी बिधि रेख लिखी युग, आयु की रेख सु कौन सुलेखो ।
प्रेम तें बोल सह्यो न परो, अकुलाइ कही पिय कैसी है देखो ॥२१॥

(मुग्धा नायिका मान किये बैठी है) बुलाने पर भी नहीं बोलती तथा नखों से भूमि पर रेखाएं बना रही है । (यह देख) नायक ने अपने हाथ को देख-देख कर के बुद्धिमत्ता के साथ कहा कि "विधाता ने मेरे हाथ में एक छोटी एक बड़ी रेखाएं लिखी हैं, इनमें आयु की रेखा कौन सी है, बतलाओ" । तब मारे प्रेम के उससे यह बात सही नहीं गई और घबड़ा कर बोली—"प्रियतम ! देखो, यह कैसी है ?"

२ मध्या के चार भेद—दोहा

मध्या आरूढ़ यौवना, प्रगल्भ वचना जान ।
प्रादुर्भूत मनोभवा, सुरति विचित्रामान ॥२२॥

मध्या के आरूढ यौवना, प्रगल्भ वचना, प्रादुर्भूत मनोभवा और सुरति विचित्रा ये चार भेद होते हैं ।

पहली आरूढ यौवना मध्या—दोहा

मध्या आरूढ़ यौवना, पूरण यौवन वंत ।
भाग सोहाग भरी सदा, भावत है मनकांत ॥२३॥

जो नायिका पूर्ण यौवनवती तथा भाग्य एवं सुहाग से भरी हो तथा जिसे सदा मन में प्रियतम अच्छा लगता है, वह आरूढयौवना मध्या कहलाती है।

उदाहरण—कवित्त

चन्द्र कैसो भाग भाल भृकुटी कमान ऐसी,
मैन कैसे पैनेशर नैनन विलासु है।
नासिका सरोज गन्ध वाह से सुगन्ध वाह,
दार्‍यो से दशन कैसो बीजुरी सुहासु है।
भांई ऐसी ग्रीवा भुज पान सो उदर अरू,
पंकज सो पांइ गति हंस ऐसी जासु है।
देखी है गुपाल एक गोपिका मैं देवतासी,
सोनों सो शरीर सब सोंधे कैसी बासु है ॥२४॥

(कोई सखी नायक से कहती है कि) हे गोपाल! मैंने आज देवता जैसी एक गोपिका देखी है जिसका अर्द्ध चन्द्र जैसा मस्तक, कमान (धनुष) जैसी भौंहें, कामदेव के पैने (तेज) वाण जैसे नेत्र, नासिका कमल की वायु जैसी सुगंध पूर्ण अनार से दांत, बिजली सी हंसी, भांई जैसी गर्दन और भुजाएं, पान जैसा उदर, कमल जैसे पैर, हंस जैसी चाल और सोने जैसा शरीर है जिसमें सोंधे की सुबास है।

दूसरी प्रगल्भवचना मध्या—दोहा

प्रगलभ वचना जान तिहि, वर्णों केशवदास।
वचनन माहँ उराहनो, देइ दिखावे त्रास ॥२५॥

'केशवदास' कहते है कि जो नायिका बातें करने में प्रगल्भ हो, वचनों में उलाहना दे और डर दिखलावे उसे 'प्रगल्भ वचना मध्या' कहना चाहिए।

उदाहरण—सवैया

कान्ह भले जू भले ढंग लागे, भले हूँ नैनन के रँग रागे।
जानत हौं सबही तुम जानत, आपसे 'केशव' लालच लागे।

जाहु नहीं अहो जाहु चलो हरि, जात नहीं दिन ही वन बागे।
देख कहाँ रहे धोखे परे, उमरोगे जू देखबो देखहु आगे ॥२६॥

हे कृष्ण ! तुम बड़े अच्छे हो, अच्छा ढंग सीखा है और अच्छे नेत्रों के रंग में रंगे हो। मैं तुम्हें जानती हूँ। (मैं ही क्या) इस तरह के लालच मे लगे हुए सभी तुम्हें जानते हैं। जाओ, जाते क्यों नहीं ? हे कृष्ण कोई दिन हीं मे बाग बगीचे नहीं जाता। धोखे में पड़े हुए से क्या देखते हो ? झूठे अभिमान में पड़े हुए तुम्हारा भेद खुल जायगा। देखना आगे क्या होता है ?

तीसरी प्रादुर्भूतमनोभवा मध्या दोहा

प्रादुर्भूत मनो भवा, मध्या कहैं बखान।
तन मन भूषित शोभिये, केशव काम कलान ॥२७॥

जो नायिका तन, मन से काम-कलाओं से भूषित हो उसे 'प्रादुर्भूत-मनोभवा मध्या' कहते हैं।

उदाहरण

आजु मैं देखी है गोपसुता, इक होइ न ऐसी अहीर की जाई।
देखति ही रहिये द्युति देह की, देखत और न देखी सुहाई।
एक ही बंक विलोकन ऊपर, वारौं विलोक त्रिलोक निकाई।
केशवदास कलानिधि सो वरु, बूझिहै काम कि मेरो कन्हाई ॥२८॥

आज मैंने एक गोप-सुता (गोपी) देखी, जैसी एक भी अहीर की जाई (अहीर की पुत्री-गोपी) नहीं होती। मैं तो उसकी देह की द्युति देखते ही रह गई या उसकी देह की द्युति देखने पर उसे ही देखते रह जाना पड़ता है। दूसरी तो वैसी सुन्दर दिखाई ही नहीं पड़ती। उसकी एक तिरछी चितवन पर तीनों लोक की सुन्दरता निछावर करती हूँ। उसका वर या तो चन्द्रमा होगा या मेरा कन्हाई होगा अर्थात् वह या तो चन्द्रमा की स्त्री होगी या मेरे कृष्ण की।

चौथी सुरत विचित्रा मध्या—दोहा

अति विचित्र सुरता सुतौ, जाकी सुरत विचित्र।
परणत कवि कुल को कठिन, सुनत सुहावै मित्र ॥३६॥

जिस नायिका की सुरति विचित्र हो तथा जिसकी चर्चा सुनते ही अच्छी लगे वह सुरति विचित्रा मध्या कहलाती है जिसका वर्णन करना कवियों के लिए कठिन है।

उदाहरण—कवित्त

केशवदास साविलास मन्द हास युत,
अविलोकन अलापन को आनद अपार है।
बहिरति सात अन्तर्रति सात सुन,
रति विपरीतनि को विविध विचार है।
छूटि जात लाज तहाँ भूषण सुदेश केश,
टूट जात हार सब मिटत शृंगार है।
कूजि कूजि उठै रति, कूजतनि सुन खग,
सोई तो सुरत सखी और व्यवहार है ॥४०॥

जिसमे विलास युत मन्द हास हो, देखने बोलने का अपार आनन्द हो, सात प्रकार की बहिर्रति और अन्तर्रति तथा विपरीत रति के विविध विचार हों। जिसमे लज्जा छूट जाय, गहने और कपड़े तितर बितर हो जांय। जिसकी कूज को पक्षी भी कूज (चहक) उठे, वही तो सच्ची रति है, और सब तो व्यवहार हैं।

सात प्रकार की बहिर्रति—दोहा

आलिंगन, चुम्बन, परस, मर्दन, नखरददान।
अधरपान सो जानिये, बहिरति सात सुजान ॥४१॥

आलिंगन, चुम्बन, स्पर्श, मर्दन, नखदान, रददान और अधर पान ये सात प्रकार की बहिर्रति कहलाती हैं।

सात प्रकार की अन्तर्रति—दोहा

थिति, तिर्यक सनमुख, विमुख, अध, ऊरध उत्तान।
सात अन्तर रति समझिये, केशव सकल सुजान ॥४२॥

स्थिति, तिर्यक सन्मुख, विमुख, अधः, ऊर्द्ध और उत्तान ये सात प्रकार की अन्तर्रति कहलाती हैं।

सलोह शृंगार—कवित्त

प्रथम सकल शुचि मज्जन अमल वास,
जावक सुदेश केश पाश को सम्हारिबो।
अंग राग भूषण विविधि मुख बास राग,
कज्जल कलित लोल लोचन बिहारिबो।
बोलनि, हँसनि, मृदु चलनि चितौनि चारु,
पल पल प्रति पतिव्रत पारिबो।
'केशवदास' सविलास करहु कुंवरि राधे,
इहि विधि सोलह शृंगारनि शृंगारिबो ॥४३॥

पहला सब प्रकार की शुचि क्रियाएं (दतौन, उबटन आदि), दूसरा मज्जन (स्नान), तीसरा अमल बास (निर्मल वस्त्र धारण) चौथा केश पाश-सुधारना (चोटी गूँथना), पाँचवें से लेकर दशवें तक अंगराग (जिसमें मांग में सिंदूर लगाना, मस्तक पर खौर देना, गालों पर तिल बनाना, अंग में केशर लगाना और हाथों में मेंहदी लगाना सम्मिलित हैं) ग्यारहवां और बारहवां सोने और फूलों के गहने पहनना, तेरहवां मुख बास (पान इलायची आदि खाना) चौदहवां और पन्द्रहवां मुखराग (मिस्सी लगाना और ओठों को रंगना) और सोलहवां सुंदर काजल लगाकर चंचल नेत्रों से देखना। इन सोलह शृंगारों को करके बोल, हँसी और सुंदर चाल से प्रतिक्षण पतिव्रत का पालन करना चाहिए। 'केशवदास' कहते हैं कि 'हे राधे'! इस तरह सोलह शृंगारों से अपने को सजाओ।

सुरतान्त—सवैया

सुन्दरता पय पावक जावक, पीक हिये नख चन्दन ये हैं।
चन्दन चित्र सुधा विष अंजन, टूटि सबै मणि हार गये हैं।
केशव नयनन नींद मई, मदिरा मद घूमत मोद मये हैं।
केलिकै नागरि नागर प्रात उजागर-सागर भेष भये हैं ॥४४॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) आज प्रातःकाल तो काम क्रीड़ा के पश्चात् नायक और नायिका सुन्दर समुद्र स्वरूप हो गये हैं। उनकी सुन्दरता उस समुद्र का जल है, जावक बड़ावाग्नि है, पान की पीक तथा हृदय पर नख चिन्ह चन्द्रमा हैं, चन्दन के चिन्ह अमृत है, अजन विष है और जो हार टूट कर गिरा है वह मणि है, आँखों मे जो नींद भरी है वही मदिरा है जिसके कारण वह आनन्द से झूम रहे हैं।

मध्या के तीन और भेद—दोहा

सिगरी मध्या तीन विधि, धीरा और अधीर।
धीरा धीरा तीसरी, बरणत सुकवि अमीर ॥४५॥
धीरा बोलै बक्र विधि, बाणो विषय अधीर।
पिय को देइ उराहनो, सो धीरा न अधीर ॥४६॥

सभी मध्य नायिकाओं को कवि लोग तीन प्रकार की बतलाते हैं। पहली धीरा दूसरी अधीरा और तीसरी धीरा-धीरा। जो टेढी बातें करे वह धीरा, जो विषम वचन बोले वह अधीरा और जो पति को उलाहना दे वह धीरा-धीरा कहलाती है।

पहली धीरा का उदाहरण—सवैया

ज्यों ज्यों हुलास सो केशवदास विलास निवास हिये अवरेख्यो।
त्यों त्यों बढ्यो उर कम्प कछू, भ्रम भीत भयो किधौं शीत विशेख्यो।
मुद्रित होत सखी बर ही मेरे, नैन सरोजनि साँच कै लेख्यो।
तैं जु कह्यो मुख मोहन को, अरबिन्द सों है सुतो चन्द सो देख्यो ॥४७॥

हे सखी! तूने कृष्ण का मुख कमल जैसा बतलाया था परन्तु मैंने तो उसे चन्द्रमा जैसा पाया, (क्यों कि उसमें चन्द्रमा कैसे ही गुण हैं)।

जैसे-जैसे मैंने उनके हृदय में आनन्द पूर्ण विलास देखा वैसे-वैसे मेरे हृदय में कम्प छूटने लगा और मुझे भ्रम होने लगा कि मैं डर गई हूँ या मुझे शीत लग गया है। मेरे बरही से नेत्र जब मुँदने लगे तब तो मैंने सत्य ही समझ लिया (कि उनका मुख कमल जैसा नहीं चन्द्रमा जैसा है क्योंकि वहीं शीतकर होता है और उसे देख कर ही कमल बंद होता है)।

दूसरी मध्याधीरा—उदाहरण—कवित्त

तात कैसो गात सब, बल बलवीर कैसो।
मात कैसो मुँह महा मोह मन भायो है।
थल सो अचल शील आनल से चल चित्त,
जल सो अमल तेज तेज कैसो गायो है।
केशोदास बसत अकाश कैं प्रकास घोष,
घट घट घर घर घेरें घनो छायो है।
रति की सी रति नाथ रूप रति नाथ कैसो,
कहौ कैसो राइ झूठ कौन यह पायो है ॥४८॥

(नायिका नायक श्री कृष्ण से कहती है कि) तुम्हारा तात (पिता तुल्य) शरीर है (उनका शरीर काँपता है तुम्हारी भी वही दशा है), बलराम जैसा बल है (वह वारुणी पीकर उन्मत्त हो जाते हैं), और माता जैसा मुँह है। तुम्हारा थल (पृथ्वी) जैसा अचल शील है, वायु सदृश चंचल चित्त है। तुम जल के समान निर्मल हो और तुम्हारा तेज अग्नि के समान है। तुम्हारा आकाश जैसा प्रकाश है, रति की सी रति और रति नाथ (कामदेव) सा रूप है फिर भी हे श्री कृष्ण! तुमने यह झूठ बोलने का गुण कहाँ पाया।

तीसरी धीरा-धीरा मध्या—सवैया

कान्ह भले जु भले समुझाय हौं, मोह समुद्र को ज्यों उमड़्यो है।
केशव आपने माणिक सों, मन हाथ पराये दै कौने लह्यो है।

नैन। नहीं मिलिबो करिये, सब बैनन को मिलिबै तो रह्यो है ।
जाय कह्यो तुम जैसे सखीन सों एहो गुपाल मैं ऐसो कह्यो हैं ॥४६॥

(नायिका नायक श्रीकृष्ण से कहती है कि हे श्रीकृष्ण ! किसी ने तुम्हें अच्छा समझाया है जिससे मोह का समुद्र सा उमड़ आया है। अपना रत्न जैसा मन दूसरे के हाथ में देकर फिर किसने वापस पाया है ? अब तो आँखों ही से मिलना चाहिए, वचनों से मिलना तो चला गया। तुमने सखियों जैसा कहा था, वैसा ही हे श्रीकृष्ण ! मैंने तुमसे कहा है।

प्रौढा के चार भेद—दोहा

सुनि समस्त रस कोविदा, चित्त विभ्रमया जाति ।
अनि आक्रामित नायिका. लुब्धा पति शुभभाँति ॥५०॥

प्रौढा नायिका समस्त रस कोविदा, विचित्र, विभ्रमा, अक्रामति और लब्धा पति चार प्रकार की होती हैं।

पहली समस्त रस कोविदा प्रौढ़ा—दोहा

सो समस्त रस कोविदा, कोविद कहत बखान ।
जो रस भावै प्रीति में, ताही रस की खान ॥५१॥

जिसे प्रीति में जो रस अच्छा लगे उसी रस की खान बन जाय उसे कोविद गण 'समस्त रस कोविदा' कहते हैं।

उदाहरण—कवित्त

देखी है गोपाल एक गोपिका अनूप रूप
सोने ते सलोनी बासु सोधेते सुहाई है ।
शोभा ही सुहाई अवतार घनश्याम की धौं,
यह दामिनी ये कामिनी ह्यो आई है ।
देवी कोउ दानवी न मानहा न होइ ऐसी,
मानवी न हाव भाव भारती पठाई है ।
केशोदास सब सुख साधन की सिद्धि यह,
मेरे जान मैन हीं सो मैन का की जाई है ॥५२॥

हे गोपाल! मैंने एक अनुपम रूप वाली गोपिका देखी है। वह सोने से भी (रंग में) बढ़कर सुन्दर है, सोंधे जैसी उसमें सुगन्ध है। उसे देखकर ऐसा ज्ञात होता है कि शोभा ने ही अवतार धारण किया है अथवा बिजली ने स्त्री का रूप रख लिया है। मैंने न तो वैसे हाव-भाव किसी देवी में देखे न दानवी में और न किसी मानवी मे ही पाये। ज्ञात होता है कि वह सरस्वती है जो इस लोक में भेजी गई है अथवा मेरी समझ में समस्त सुखों की साधन वह गोपी कामदेव से उत्पन्न मैनका की पुत्री है।

दूसरी विचित्र विभ्रमा प्रौढ़ा—दोहा

अति विचित्र विभ्रमसदा, प्रौढ़ा प्रकट बखान।
जाकी दीपति दूतिका, पियहि मिलावे आन ॥५३॥

जिसकी शोभा से आकर्षित होकर दूती जिसके पति से मिलाप करावे वह विचित्र विभ्रमा प्रौढा कही जाती है।

उदाहरण—सवैया

है गति मन्द मनोहर केशव, आनँदकंद हिये उमहे हैं।
भौंह विलासन कोमल हासनि, अंगसुवासनि गाढ़े गहे हैं।
बंक विलोकनि को अनलौकि, सु मारु है नन्द कुमार रहे हैं।
एही तो काम के बाण कहावत, फूलनि की गति भूल गहे हैं ॥५४॥

उसकी चाल मन्द-मन्द और मन को हरने वाली है जिसे देखकर आनन्द कन्द श्री कृष्ण के मन में उमंगे उठने लगीं। उसकी भौंहों के विलास तथा कोमल हँसी तथा अंगों की सुबास को ध्यान लगा कर देख रहे हैं। उसकी टेढ़ी चितवन को देखकर नंद कुमार तो कामदेव ही हो रहे है और उसके फूलों के बाणों की गति को भूल कर समझते हैं कि ये ही (नेत्र) काम के बाण हैं।

तीसरी अकामति प्रौढा—दोहा

सो अकामति नायिका, प्रौढ़ा करिवे चित्त।
मनसा वाचा कर्मणा, बश कीन्हें जेहि मित्त ॥५५॥

जो मन, वचन तथा कर्म से अपने पति के मन को वश में कर लेती है, वह अक्रामति प्रौढा कहलाती है।

उदाहरण सवैया

तो हित गाइ बजावत नाचत, बार अनेक शृंगार बनायो।
जी ही मैं आनको आनिबी छांडिबो, तेरे तऊ न भयो मन भायो।
भावै सो तै करि ,वाको भामिनी, भाग बडे वश चौकडि पायो।
कान्ह ज्यौं सूधे जु चाहत नाहिनै, चाहत है अब पाइ लगायो ।।५६।।

हे सखी ! श्री कृष्ण तेरे लिए गाते, बजाते और नाचते हैं तथा तेरे लिए ही अनेक शृंगार करते हैं। उन्होंने मन से भी दूसरी का ध्यान छोड़ दिया है परन्तु तेरे मन की बात फिर भी नही हुई। अब तेरी इच्छा हो सो कर, बड़े भाग्य से तूने उन्हें वश कर पाया है। कृष्ण ऐसे सीधे को भी तू नहीं चाहती और उन्हें अपने पैरो गिराना चाहती है।

चौथी लब्धा पति प्रौढा—दोहा

सो लब्धा पति जानिये, केशव प्रकट प्रमान।
कानि करै पति कुल सबै, प्रभुता प्रभुहि समान ।।५७।।

जो नायिका अपने पति ही के समान पतिकुल के अन्य व्यक्तियो का आदर करती है, वह लब्धा पति प्रौढ़ा कहलाती है।

उदाहरण—सवैया

आजु बिराजति है कहि केशव, श्री वृषभानु कुमारि कहाई।
बानी विरंचि वही क्रम काम, रची जो बरी सो बधूब बनाई।
अंग विलोकि त्रिलोक में ऐसी, की नारि निहारि न नारि बनाई।
मूरति वन्त शृंगार समीप, शृंगार किये जनु सुंदरताई ।।५८।।

'केशवदास' कहते है कि आज श्री कृष्ण के वृष भानु पुत्री राधा जी सुशोभित हो रही हैं। (उन्हें देख कर ऐसा ज्ञात होता है कि) ब्रह्मा ने जिस क्रम से वाणी (सरस्वती) और कामदेव को बनाया उसी क्रम से इसे भी रचा। ऐसी तो और दूसरी स्त्री नहीं रची गई। तीनो

लोकों में मैंने देखा कि ऐसी स्त्री कोई दूसरी उन्होंने नहीं बनाई। ऐसा ज्ञात होता है मानो मूर्त्तिवान् शृंगार के पास साकार सुंदरता ही बिराज रही हो।

प्रौढा के अन्य तीन भेद, पहली धीरा प्रौढा—दोहा

आदर माँझ अनादरे, प्रकट करै हित होइ।
आकृति आप दुरावई, प्रौढ़ा धीरा सोइ ॥५६॥

जो नायिका आदर मे अनादर करे, प्रकट रूप में हित दिखलावे तथा अपनी आकृति छिपावे उसे प्रौढ़ा धीरा समझना चाहिए।

उदाहरण—सवैया

आवत देखिलये उठि आगे हि, आपुहि केशव आसन दीनो।
आपुहि पांय पखारि भले जल, पानु को भाजन लाइन वीनो।
बीरी बनाइ के आगे धरी, सो जबै हरि को बरबीजन लीनो।
बांह गही हरि ऐमो कह्यो हँसि ये तो इतौ अवराधन कीनो ॥६०॥

(श्रीकृष्ण को आता देखकर उन्हें आगे बढ़कर लिया और आसन दिया। फिर स्वयं ही उनके भली भाँति जल से चरण धोये तथा पान का बर्तन (पनडब्बा) लाकर आगे धर दिया। तब पान का बीड़ा बनाकर आगे रखा और जैसे ही पंखा हाथ में लिया तो कृष्ण ने बांह पकड़ी और हँसते हुए कहा—"और तुमने तो बड़ा आराधन किया।'

आकृतिगुप्ता प्रौढा का उदाहरण—सवैया

चितवौ चितवाये, हँसाये हँसो, औबुलाये से बोलौ रहौमति मौने।
सौंह अनेकनि आवहु अंक, करौ रति को प्रति रैन को रौने।
कोई खवायेते खाओ बिरी, जनु आइ हौ 'केशव' आजुहि गौने।
मोहन के मन मोहन को सखि, तोहिं नई सिखई सिख कौने ॥६१॥

तुम दिखलाने से देखती, हँसाने से हँसती और बुलाने से बोलती हो, नहीं तो चुप ही रहती हो। अनेक शपथ दिलाने पर अंक में आती हो और कोई पान की बीड़ी खिलावे तो खाती हो मानो आज ही गौने

आई हो। बताओ सखी! तुम्हें कृष्ण के मन को मोहने की यह नई रीति किसने सिखलाई है?

दूसरा उदाहरण—सवैया

हित कोइत देखो जू देखो सबै, हितु बात सुनो जु सुनी निबही है।
यह तौ कछु और बहे सब है, अरु सौंह करोजू करी जु तुही है।
समुझाइ कह्यो समुझाइ कै केशव, झूठी सबै हम सों जु कही है।
मान किये अपमान करै जो, हँसो अब को हँसिबे को रही है॥६२॥

तुम अपने हित को देखो जैसा सभी देखती हैं। हित की ही बात सुनो जिसके सुनने से सब का निर्वाह होता है। 'यह तो सब कुछ और ही है', इस तरह कह कर शपथ खाओ। उनसे समझाकर कहो कि 'हे कृष्ण! मैंने कहा था, वह सब झूठ है'। मान करने पर अपमान हो तो हँसो, अब तेरी हँसी उड़ाने वाली कौन रही है?

प्रौढ़ा का दूसरा भेद अधीरा—दोहा

मुख रूखी बातैं कहै, जिय में पिय की भूख।
धीर अधीरा जानिये जैसी मीठी ऊख॥६३॥
पति को अति अपराध गनि, हित न करै हित मानि।
कहत अधीरा प्रौढ़ तिय, केशवदास बखानि॥६४॥

जो नायिका मुँह से रूखी बाते करे परन्तु मन म पति की इच्छा करे, उस ऊख जैसी मीठी नायिका को अधीरा समझिए। जो पति का भारी अपराध देखकर हित पूर्वक हित नहीं करती उसे भी प्रौढा अधीरा कहते है।

उदाहरण—सवैया

हौं मन मैले न बोलो कछू, अब छाड़हु बोलिबो बोल हँसोहै।
केशव और निसार सरासरि, सो रसवाद सबै हम सोहै।
देखहु धौयक बार सकोचन, आरस लोचन आरसी सोहै।
आय जू वैसैई साजू सौ आजु, सो भूलि गई पिय कालिह की सोहै॥६५॥

मैं मन में दुखी हूँ, मुझसे कुछ न बोलो, और मुझसे हँसना-बोलना छोड़ दो। ज़रा एक बार तो अपने आलस भरे नेत्रों को आरसी

(दर्पण) में देखो, कैसे अच्छे लगते हैं। आज भी तुम उसी साज से आये हो। क्या पतिदेव ! कल की सौगंधों को भूल गये ?

नायिकाओं का दूसरा प्रधान भेद परकीया—दोहा

सब तैं पर परसिद्ध जो, ताकी प्रिया जु होइ।
परकीया तासों कहैं, परम पुराने लोइ ॥६६॥

जो सब से बढ़कर प्रसिद्ध हो उसकी जो प्रियतमा हो, उसी को पुराने लोग परकीया कहते हैं।

परकीया नायिका के भेद दोहा

परकीया द्वै भाँति पुनि, ऊढ़ा एक , अनूढ़।
जिन्हैं देखि वश होत है, संतत मूढ़ अमूढ़ ॥६७॥

परकीया दो तरह की होती है। एक ऊढ़ा और दूसरी अनूढ़ा। इन्हें देखकर मूढ़ और अमूढ़ सभी वश में हो जाते हैं।

ऊढ़ा होत विवाहिता, अन ब्याहिता अनूढ़।
तिनके कहौं बिलास सब, केशव गूढ़ अगूढ़ ॥६८॥

ऊढा विवाहिता होती है और बिना विवाह की (कुँवारी अनूढा। 'केशवदास' कहते हैं कि अब मैं उनके गूढ़ (छिपे और अगूढ़ (प्रकट) सब विलासों को कहता हूँ।

ऊढ़ा का उदाहरण—सवैया

बैठी सखीन को शोभै सभा, सबही के जु नैनन माँझ बसै।
बूझेते बात बराइ कहै, मन ही मन केशवदास हँसै।
खेलति है इत खेल उतै, पिय चित्त खिलावति यों बिलसै।
कोइ जाने नहीं हग दौरे कबै, कित ह्वै हरि आनन छ्वै निकसै ॥६९॥

नायिका सखियों के साथ सभा में बैठी सुशोभित हो रही है तथा सभी की आँखों में बसती है। पूछने पर बातों को बरा कर (छिपाकर) कहती है और मन ही मन हँसती है। इधर तो (संकेत पूर्वक मित्र से बातों को समझाती हुई) खेल करती है, उधर पति के मन को भी खिलाती

है। उसका भेद कोई नहीं जानता कि उसकी आँखें कब किस ओर दौड़ती हैं और किधर से कृष्ण का मुख स्पर्श करती हुई निकल जाती हैं।

अनूढ़ा का उदाहरण--सवैया

बैठी हुती ब्रज नारिन में बनि, श्री वृषभानु कुमारि सभागी।
खेलत हीं सखी चौपर चारु, भई तिहिं खेल खरी अनुरागी।
पीछे ते केशव बोलि उठे, सुनि कै चित चातुरि आतुरि जागी।
जानै न काहू कबै हरि के सुर, मारग ही सरसी दृग लागी॥७०॥

वृषभानु की बेटी राधा ब्रज नारियो मे बैठी हुई थी और सखियों के साथ चौपड़ का सुन्दर खेल खेलती हुई उसी मे मग्न हो गई। उसी समय श्रीकृष्ण पीछे से आकर बोल उठे तो उनके वचनों को सुनकर मन मे आतुरता जाग्रत हो उठी। यह रहस्य किसी ने नहीं समझा कि उसकी आँखें शीघ्र जाग्रत हो उठीं।

अनूढ़ा और ऊढ़ा के और लक्षण---दोहा

काहू सों न कहै कछू, बात अनूढ़ा गूढ़।
सखी सहेली सों कह, ऊढ़ा गूढ़ अगूढ़॥७१॥

जो अनूढा होती है वह किसी से भी अपनी गूढ (छिपी हुई) बात नहीं कहती। जो ऊढा होती है वह अपनी सखी सहेलियों से और अगूढ़ बातें बतलाया करती है।

ऊढ़ा का वचन—सवैया

केशवदास कि सौंह कि कै कछू, एकन आपु मैं होड़ परी।
एक चितै मुसक्याय इतै, उत बात कहै, बहु बात भरी।
चारु-ओर विलोचन भासी, चहूँदिशि तैं अँगुरी पसरी।
सखि आजु गई हुती गोकुल हौं, सबही मिलि द्वैज को चन्द करी॥७२॥

नायिका कहती है कि 'हे सखि! मैं आज गोकुल को गई थी तो सबो ने मिलकर मुझे द्वितीया का चांद बना डाला और मेरी ओर चारों तरफ से उँगली उठने लगी (जैसे दूज के चांद की ओर उँगली उठा-उठा कर लोग दिखलाते हैं)। सभी आपस मे सौगंध खाने लगीं

(कि इन्हीं से कृष्ण का प्रेम है) और एक-एक से होड़ लगाने लगी। (कोई कहती कि इन्हीं से प्रेम है, कोई कहती इनसे नहीं है)। उनमें से कोई इधर तो मेरी ओर देखकर, मुसुकरा कर हँसती और उधर भेद-भरी बातें करतीं।

दोहा

जग नायक की नायिका, वर्णी केशवदास।
तिनके दर्शन रस कहौं, सुनहु प्रच्छन्न प्रकास ॥७३॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैं जगनायक (श्रीकृष्ण) की नायिकाओं का वर्णन कर चुका। अब उनके प्रच्छन्न तथा प्रकाश दर्शन और रसों का वर्णन करता हूँ।

केशवदास के अनुसार नायिकाएं
जाति के अनुसार ४ भेद
(१) पद्मिनी
(२) चित्रिणी
(३) शंखिनी
(४) हस्तिनी
इन सबों के गुणानुसार ३ भेद
(१) स्वकीया
२) परकीया
सामान्या
वर्णन नहीं किया
(१) मुग्धा
(२) मध्या
(३) प्रौढा
(१) ऊढा
(२) अनूढा
(१) नवलवधू
(२) नवयौवना
(३) नवल अनंगा
(४) लज्जाप्राय
(१) आरूढ़ यौवना
(२) प्रगल्भ वचना
(३) प्रादुर्भूतमनोभवा
(४) सुरति विचित्रा
धीरा, अधीरा, धीरा-धीरा
" " "
" " "
" " "
(१) समस्त रस कोविदा—धीरा और अधीरा
(२) विचित्र विभ्रमा
(३) आक्रमति
(४) लब्धापति
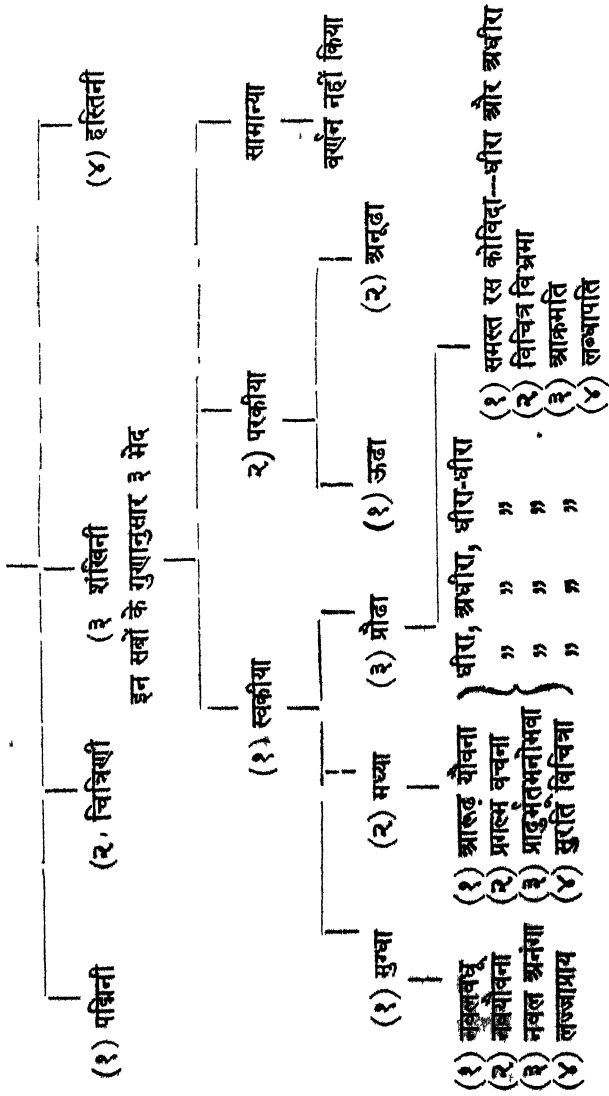
चौथा प्रकाश

दर्शन वर्णन---दोहा

ये दोऊ दरशैं दरश, होहिं सकाम शरीर।
दर्शन चारि प्रकार को, वर्णत हैं मति धीर ॥१॥

जहाँ नायक और नायिका दोनों एक दूसरे को देखें और परस्पर दर्शन से जहा दोनों कामयुक्त हो जायं, उसे दर्शन कहते हैं।

दर्शन के भेद----दोहा

एक जनी को देखिए, दूजो दर्शन चित्र।
तीजो सपनो जानिये, चौथो श्रवण सुमित्र ॥२॥

पहला भेद नायिका को स्वयं देखना अर्थात् साक्षात् दर्शन है। दूसरा भेद चित्र-दर्शन है, तीसरा स्वप्न-दर्शन और चौथा श्रवण दर्शन है।

पहला साक्षात् दर्शन----दोहा

दरशन कीने दरश यह, दंपति अति सुखमान।
ताहि कहत साक्षात हैं, केशवदास सुजान ॥३॥
नींद भूख द्युति देह की, गई सुनत ही जाहि।
को जानै ह्वै है कहा, केशव देखे ताहि ॥४॥

जहाँ एक दूसरे को देखकर दंपति सुखी हों, उसे साक्षात् दर्शन कहते हैं। जिसकी चर्चा सुनते ही देह की द्युति और नींद-भूख लुप्त हो गई उसे देखने पर कौन जाने क्या होगा।

उदाहरण (साक्षात् प्रच्छन्न दर्शन)----सवैया

काहि केशव श्रीवृषभानु कुमारि, शृँगारि शृँगार सबै सरसै।
सविलास चितै हरि नायक त्यों, रति नायक शायक से बरसै।

कबहूँ मुख देखति दर्पण लै, उपमा मुख की सुखमा परसै ।
जनु आनँद कंद सुपूरण चंद दुर्यो रवि मंडल में दरसै ॥५॥

'केशवदास' कहते हैं कि श्रीवृषभानु कुमारि राधा शृंगार करके बैठीं तो उनका सभी शृंगार बड़ा ही सरस था। वह विलास पूर्ण नेत्रों से नायक श्रीकृष्ण को देखती हैं तो ऐसा ज्ञात होती है मानो रतिनायक कामदेव बाण से बरसा कर रहा है। कभी वह दर्पण लेकर मुख देखने लगती हैं तो मुख की उपमा ऐसी जान पड़ती है मानो आनन्दकंद पूर्ण चन्द्रमा सूर्य मडल मे छिपा हुआ दिखलाई पड़ता है।

उदाहरण दूसरा प्रकाशदर्शन—सवैया

पहिले तजि आरस आरसी देखि, घरीक घसै घनसारहि लै।
पुनि पोंछि गुलाब विलौंछि फुलेल, अँगोछे में आछे अँगौछनकै।
कहि केशव मेद ज वादसों मंजि इते पर आंजे मैं अंजन दै।
बहुरे दुरि देखों तौ देखों कहा सखि लाजतो लोचन लागे इहै ॥६॥

पहले आलस्य छोड़कर दर्पण देखा; फिर एक घड़ी तक कपूर लेकर घिसा। फिर गुलाव जल से धोकर और फुलेल (इत्र) मलकर अँगोछे से भली-भाँति पोंछ डाला। 'केशव' कहते हैं कि कस्तूरी जुबार आदि से माजकर आखों मे अंजन दिया। हे सखि! इतना करने पर भी (नायक (को जो छिपकर देखा तो देखती क्या हूँ कि लज्जा तो आँखों मे ज्यों की त्यों लगी हुई है।

नायका का साक्षात् दर्शन (प्रच्छन्न)—सवैया

भालगुही गुन लाल लटैं, लपटी लर मोतिन की सुखदैनी।
ताही विलोकत आरसी लै, कर आरस सो इक सारस नैनी।
केशव कान्ह दुरे दरसी, परसी उपमा मति को अतिपैनी।
सूरज मडल में शशि मंडल, मध्य धँसी जनु ताहि त्रिवेनी ॥७॥

कृष्ण ने नायिका के माथे पर डोरी से लटें गूथ दीं और उनमें मोतियों की सुखदायिनी लड़ियां लटका दीं, उन्हीं को वह कमल नयनी नायिका हाथ में दर्पण लेकर देख रही है। उसी समय कृष्ण उसको

छिपकर देखने लगे तो एक सुन्दर उपमा मन को सूझ गई कि सूर्य मंडल में चन्द्रमंडल के बीच मानो त्रिवेणी जा घुसी है।

नायक का साक्षात् दर्शन (प्रकाश)—सवैया

इक तो उर और उरोज अनूपम, तैसे मनोहर हार महारी।
चितचलै तरुणीन हु को, तरुनैन की केशव बात कहारी।
हित की हित सों कहि हीवनि आवत, कौलगि हौं हुरी कौतुकहारी।
अँचरु दै नँदलाल विलोकत, री दधि नोखी विलोचन हारी ॥८॥

एक तो तेरे उर और उरोज (कुच) अनुपम हैं ही दूसरे हार मन को हरने वाला है। जिसे देखकर जब तरुणियों का ही मन चंचल हो जाता है तब तरुणों की तो बात ही क्या है? हित की बात को हित पूर्वक कहना ही पड़ता है, कब तक यही तमाशा देखती रहूँ। आँचल की आड़ में कृष्ण को देखा करती है, तू तो अनोखी दही मथने वाली है।

दूसरा चित्र दर्शन (प्रच्छन्न)—सवैया

लोचन ऐंचि लिये इत को मन की गति यद्यपि नेह नही है।
आनन आइ गये श्रम सीकर, रोम उठे उरकंप गही है।
तासों कहा कहिये कहि केशव, लाज समुद्र में बूड़ि रही है।
चित्रहु में हरि मित्रहि देखति, यों सकुची जनु बांह गही है ॥९॥

यद्यपि आँखें इधर को खींच लीं तथापि मन प्रेम में लगा हुआ है। उसके मुख पर पसीने की बूँदें आगईं और रोएं उठ आए तथा हृदय कँपने लगा। उसकी बात क्या कहूँ, वह तो लज्जा के समुद्र में डूब रही है। चित्र ही में अपने मित्र कृष्ण को देखने पर इस प्रकार संकुचित हो गई मानो उन्होंने बाँह पकड़ ली हो।

दूसरा उदाहरण चित्र-दर्शन (प्रकाश) - कवित्त

केशोदास नेह दशा दीपक संयोग कैसे,
ज्योति ही के ध्यान तम तेजहि नशाइ है।
आँखि न सों बांधे, अन्य काहू की न भाषी भूख,

पानी की कहानी रानी प्यास क्यों बुझाइ है।
ये री मेरी इंदुमुखी इदीवर नैन लिखे,
इंदिरा के मन्दिर क्यों सम्पति सिधाइ है।
ऐसे दिन ऐसे ही गँवावत गँवार कहा,
चित्र देखे मित्र को मिले को सुख पाइ है ॥१०॥

(सखी नायिका से कहती है कि) हे सखी! बिना तेल से पूर्ण दीपक के कहीं ज्योति का ध्यान करने मात्र से अंधकार का नाश हो सकता है? भोजन को आंखो के सामने रखने से कहीं किसी की भूख शान्त हुई है? हे रानी! पानी की कहानी कहने से प्यास कैसे बुझेगी? हे मेरी चन्द्रमुखी! लक्ष्मी जी के चित्र मात्र से कही सम्पत्ति प्राप्त होती है। इसलिए हे गंवार! इस तरह तू अपने दिनों को क्यो खो रही है? चित्र देखने से कहीं मित्र-मिलन का सुख पा सकती है?

नायक का चित्र दर्शन (प्रच्छन्न)—कवित्त

रूठबे को तूठबे को मृदु मुसक्याइकै बिलोकिबेको,
भेद कछू कछू काहू भाँति कह्यो न परतु है।
केशवदास बोले बिन बोलन के सुने बिना,
हिलन मिलन बिना मोह क्यों सरतु है।
कौ लग अलोनो रूप प्याय प्याय राखौं नैन,
नीर बिना मीन कैसे धीरज धरतु है।
चित्रनी विचित्र किन नी केई चितैयै,
मन चित्र चितये ते चित चौगुनो जरतु है ॥११॥

रूठने, सतुष्ट होने, मृदु मुस्कराने और देखने का भेद तो कुछ (चित्र देखने मात्र से) कहा नहीं जा सकता। बिना बोले, बिना वचनों के सुने, बिना हिले-मिले मोह कैसे पूरा हो सकता है? इसलिए अलोना रूपा पिला-पिला कर कब तक आंखों को सतोष दूँ, बिना पानी के मछली कहीं धीरज रख सकती है। उस विचित्र चित्रिनी को अच्छी तरह से देखने से तो मन चौगुना जलता है।

नायक का चित्र दर्शन (प्रकाश)—कवित्त

अन्तरिक्ष गच्छनीन यक्षन सलच्छनीन,
अच्छी अच्छी अच्छनीन छवि छमनीय है।
किन्नरी नरी सुनारि पन्नगी नगी कुमारि,
आसुरी सुरीन हूँ निहारि नमनीय है।
भोगिन को भामिनी औ देह धरे दामिनी,
यों काम कामनी यों कहा ऐसी कमनीय है।
चित्र हू में चितहि चुराये लेत कोऊ यह,
राम कैसी रमनी रमासी रमनीय है ॥१२॥

आकाश गमन करने वाली यक्षों की सुलक्षिणी स्त्रियां तथा अच्छी-अच्छी स्त्रियों की शोभा (इसके आगे) क्षम्य है। किन्नरी, नरी, पन्नगी (सर्पनारियां) तथा नगी (पर्वत कुमारियां), आसुरी (राक्षसनियां) तथा सुरी (देव स्त्रियां) इसे देखते ही झुकती हैं। यह तो मानो देह धारण किये हुए बिजली है, काम की स्त्री भी क्या इसके आगे सुन्दरी है। यह तो राम की रमणी (सीता जी) या रमा (लक्ष्मी) जैसी सुन्दरी है, जो चित्र में ही चित्त को चुराये लेती है।

३ स्वप्न दर्शन—दोहा

केशव दर्शन स्वप्न को, सदा दुरोई होय।
कबहूँ प्रकट न देखिये, यह जानत सब कोय ॥१३॥

'केशवदास' कहते हैं कि स्वप्न का दर्शन तो सदा छिपा ही रहता है, कभी प्रकट नहीं होता, यह तो सभी जानते है।

उदाहरण राधा का स्वप्न दर्शन (प्रच्छन्न)—सवैया

आतुर ज्यों उठि दौरी अली, जनु आतुर ज्यों गहिये त्यों गहीत्यों।
हे मेरी रानी कहा भयो तो कहँ बूझन केशव बूझि रही त्यों।
डीठि लगी किधौं प्रेत लग्यो, कि लग्यो उर प्रीतम जाहि डरीयों।
आनन सीकर सी कहिये धक, सोवत तें अकुलाय उठीयों ॥१४॥

स्वप्न में पति को देखा तो आतुर सी उठकर दौड़ी और जैसे आतुर को पकड़ा जाता है वैसे मैंने उसको पकड़ लिया और कहने लगी— "हे मेरी रानी! तुझे क्या हुआ"? यह सुनते ही कुछ समझ कर रह गई। मैंने फिर पूछा कि "तुझे दृष्टि लगी है या प्रेत लगा है या प्रियतम की याद आई है, जिससे यों डर गई है?" (मैंने देखा कि) वह सोते-सोते अचानक ऐसा घबड़ा उठी कि माथे पर पसीने की बूँदें आगई और हृदय धड़कने लगा।

नायक का स्वप्न दर्शन (प्रच्छन्न)—कवित्त

नख पद पदवी को पावे पद द्रौपदीन,
एकौ बिसे उर बसी उर में न आनवी।
लोभसी, पुलोभजा, न तिलसी तिलोत्तमा,
न मैल हू समान मन मेनका न मानवी।
जानिये न कौन जाति अबहीं जगाये जात,
जानु जानिहों जो जाहि के हूँ पहचानवी।
बात कसी बानी मांह भाव सो भवानी मांह,
केशोदास रति में रतीक ज्योति जानिवी ॥१५॥

जिसके आगे द्रौपदी को नख पदवी पाती है और उरबसी अप्सरा का तो हृदय में विचार ही नहीं आता। लोभसी, पुलोम की पुत्री और तिलोत्तमा जिसके आगे तिल बराबर हैं तथा मैनका अप्सरा को मेरा मन मैल के समान भी नहीं मानता। ज्ञात नहीं कौन सी स्त्री थी जो मुझे अभी जगाये हुए जाती है। यदि जान भी जाऊँ तो उसे किसी तरह पँहचान लूगा क्योंकि उसकी बातों में सरस्वती, भाव मे पार्वती और रति में रति जैसी झलक है।

४—श्रवण दर्शन नायिका का (प्रच्छन्न)—सवैया

सौहैं दिवाय दिवाय सखी इक, बारक कानन आन बसाये।
जानैं को केशव कानन तें कित, हूँ हरि नैनन मोक्ष सिधाये।
लाज के साज घरेई रहे तब, नैंनन लै मनहीं सों मिलाये।
कैसी करौ अब क्यों निकसों री, हरेंही हरेहिय में हरि आये ॥१६॥

हे सखी ! सौगंध खिला खिलाकर एक बार किसी तरह कृष्ण को मेरे कानों में बसा दिया अर्थात् उनकी चर्चा सुना दी। फिर तो ज्ञात नहीं वह किस मार्ग से मेरे नेत्रों में आगये। तब तो लज्जा के सारे साज रखे ही रह गये। नेत्रों ने उन्हें मन से मिला दिया। अब क्या करूँ, कैसे बचूं, धीरे-धीरे कृष्ण अब हृदय में आ बिराजे हैं।

नायिका का श्रवण दर्शन (प्रकाश)—कवित्त

कौ लौं पीहौ कानरस, रूप की बुझै है प्यास,
केशवदास कैसे नैनन न भर पीजिये।
बीर कीसों मेरी बार वारी है जु वारी,
नेक हँसि हां कर बलाइते से लीजिये।
बरसक मांझ यह बैस अलबेली बीते,
दे हौ सुख सखिन क्यों अबही न दीजिये।
ये री लड़बावरी अहीर ऐसी बूझों तोहि,
नाहिं सो सनेह कीजै, नाहसौं न कीजिये ॥१७॥

तू यह कानों का रस कब तक पियेगी अर्थात् कब तक उनके संबंध की बातों का आनन्द लेती रहेगी, रूप की प्यास तभी बुझेगी जब आंखों से जी भर के पियेगी। हे मेरी सखी ! तू अभी भोली-भाली है, मैं तेरी सौगंध खाकर कहती हूँ। ज़रा हँस, मैं तुझ पर बलिहार जाती हूँ। एक वर्ष में तेरी यह अलबेली उम्र बीत जायगी तब जो सुख तू सखियों को देगी वह अभी ही क्यों नहीं देती। हे भोली-भाली नादान अहीरिन ! मैं तुझसे पूछती हूँ कि तू 'नाहीं' (अस्वीकार करने म) से सनेह करती है, नाह (पति) से क्यों नहीं करती ?

नायक का प्रच्छन्न श्रवण दर्शन—कवित्त

लंघत है लोक लोक, लीक ना उलंघी जात,
सबहीं तू समझावै तोहि समझावै को।
छोड़न कहत तन, तनकौ न छूटे लाज,
घन मीत राख दोऊ कोविद कहावै को।

शोच को सँकोचहू को पूरब पच्छिम को पंथ,
केशवदास एकौ काल एकौ पथ धावै को।
दुख ।ख दूर दुरा दूर ही तें मेरे मन,
जैसी सुनी तैसी तोहि आँखिन दिखावै को ॥१८॥

नायक मन को सबोधित करके कहता है कि तू लोक-लोक तो लांघता फिरता है, तुझसे, लीक (मर्यादा) नहीं छोड़ी जाती। तू तो सबको समझाता है, तुझे कौन समझावे? तू शरीर तो छोड़ना चाहता है, तुझसे लज्जा तनिक भी नहीं छोड़ी जाती। धन और मित्र दोनों को रखकर कौन पडित कहलाया है। शोच और संकोच इन दोनों का पूर्व तथा पश्चिम का मार्ग है अर्थात् दोनों के विपरीत रास्ताए हैं, फिर एक ही समय मे दोनों कैसे पार की जा सकती हैं? इसलिए हे मन! दुख-सुख को दूर हटा दे। तूने जैसी कानों सुनी है, वैसी तुझे आँखों से कौन दिखलावेगा?

नायक का श्रवण दर्शन—कवित्त

निपट कपट हार प्रेम को प्रकट कर,
बीसो बिसे वशीकर कैसे उर आनिये।
काम को प्रहरषन, कामना को बरषन,
कान्ह को सकरषन सब जग जानिये।
केशवदास किधौं मनमोहनी को भूषण है,
किधौं ब्रजबालन को भूषण वखानिये।
सुनत ही छूट्यो धाम, वन वन डोलै श्याम,
राधे तेरो नाम कै उचाट मंत्र मानिये ।१६॥

कृष्ण के प्रति तेरा कपट प्रेम पूरी तरह से वशीकर है, यह कैसे समझा जाय। वह काम को बढाने वाला है, कामनाओं को बरसाने वाला है, और कृष्ण को अपनी ओर खींचनेवाला, यह सारा संसार जानता है। उसे या तो मनमोहनी का भूषण कहूँ अथवा ब्रजबालाओं का दूषण कहकर वर्णन करूँ। हे राधा! जिसे सुनकर कृष्ण का घर

द्वार छूट गया और वह वन-वन में घूमने लगे, तेरे उस नाम को उच्चाटन मंत्र समझना चाहिए।

दोहा

दर्शन रस रमनीय के, कहे परम रमनीय।
प्रकट न प्रेम प्रभाव अब, कहौं कछू कमनीय ॥२०॥

रसिकों के परम रमणीय दर्शन रस का मैं वर्णन कर चुका। अब कुछ प्रेम के कमनीय प्रभावों का प्रकट वर्णन करता हूँ।

दर्शन

(१) साक्षात् दर्शन (२) चित्र दर्शन (३) स्वप्न दर्शन (४) श्रवण दर्शन

पाँचवाँ प्रकाश

दंपति चेष्टा वर्णन—दोहा

तिय के चित की जानि सखि, पिय सों कहै सुनाय।
कहै सखी सों प्रीत में, आपुन ते अकुलाय ॥१॥

कभी तो नायिका के मन की बात सखी प्रियतम से कह सुनाती है और कभी सखी प्रेम वश सखी से अपने प्रेम की दशा को कहती है जिससे वह स्वयं आकुल होने लगती है।

सखी का नायक से विरह निवेदन—सवैया

कालिह की ग्वारि तौ आजहू तौ, न सम्हारति केशव कैसहूँ दैहे।
शरी ह्वै जात उठै कबहूं जरि, जीव रहै कै रही रुचि रैहे।
कोरि विचार विचारति है, उपचारन के बरसै सखि से है।
कान्ह बुरो जिन मानौ तिहारी बिलोकन में बिस बीस बिसे है ॥२॥

कल की ग्वालिन (जिसे आपने कल देखा था) आज तक अपनी देह को किसी प्रकार भी नहीं सँभाल पाई। कभी ठंढी हो जाती है, कभी जलने सी लगती है। प्राण रहें या उसकी रुचि रहे। सखिया करोड़ों उपाय सोचती हैं और उपचारों (इलाजों का) मेंह बरसाती हैं (परन्तु वह तब भी ठीक नहीं होती)। कृष्ण ! तुम बुरा न मानो ! तुम्हारी चितवन में बीसबिश्वे (पूरी तरह से) बिष भरा है।

नायिका की सखी का वचन नायक से—कवित्त

प्यास ह्वै रही उदास, भागी भूख गई आस,
केशवदास नींद हू की निंदा नित ठानी है।
मति को मतौ न लेय, बिद्या की बिदाई देय,
शोभा सुकी सेइ सेइ सब सुख सानी है।

विष सो लगत गीत, केलि की न परतीति
प्रीति उरपाहुनी सी पचि पहिचानी है।
तो बिन कहै को गाथ, धीरजता लै कसाथ,
मोंहि को मिलावै, हाथ लाज के बिकानी है। ३॥

उसकी प्यास तो दूर हो गई है, भूख और श्राम (डर भी भाग गई है और नींद की तो रात दिन निंदा करने की ही उसने ठान ली है। कभी बुद्धि से काम नहीं लेती या मुझ से सम्मति नहीं माँगती, विद्या को विदाई दे देती है और शोभा रूपी सुकी की पाल-पाल कर सब सुखों से सुखी होती रहती है। उसे गीत विष से प्रतीत होते हैं, केलि का विश्वास नहीं रहा, प्रीति को हृदय की पाहुनी सा समझ रखा है। ऐसी दशा में तेरे बिना मेरी गाथा धीरज के साथ कौन कहे और मुझ से मिलावे क्योंकि वह लाज के हाथों बिकी हुई है।

चेष्टा लक्षण—दोहा

पिय सों प्रकट न प्रीति कहुँ, जितनै करत उपाय।
तो सब केशवदास अब, वर्णत सबन सुनाय। ४॥

'केशवदास' कहते हैं कि नायिका को प्रियतम के प्रति जो प्रेम होता है, उसे प्रकट न होने देने के लिए जो जो चेष्टाएं करती है, मैं उन सबों का अब वर्णन करता हूँ।

दोहा

कबहूं श्रुति कंडुन करै, आरस सों ऐंडाय।
केशवदास बिलास सों, बार बार जमुहाय ॥५॥
झूठेऊ हँसि हँसि उठै, कहै सखी सों बात।
ऐसे मिस ही मिस प्रिया, पियहि दिखावै गात ॥६॥
यों ही पीय प्रियानि प्रति, प्रकटत अपनी प्रीति।
सो प्रच्छन्न प्रकाश कर, बुधि बल करत समीत ॥७॥

कभी तो कानों को खुजाती है, कभी आलस्य में भर कर ऐंडाने लगती है। कभी बार-बार जमुहाई लेती है, कभी झूठ-मूठ हँसती है और

केशवदास कीसों तैं ये खेल कौन काढ़े हैं ।

फूल फूल भेंटति है मोहि कहा मेरी भटू,

भेंटैं किन जाय जे वे भेंटिबो को ठाढ़े हैं ॥६॥

मेरा मुँह चूमने से कहीं चूमने की साध पूरी हो सकती है, ओस के चाटने से कहीं प्यास बुझती है। मेरी छाती से अपने छोटे-छोटे हाथ क्या छुआती है, जो छुआना है तो उसकी छाती में छुआओ, जिसकी अभिलाषा तेरे मन में बढ़ी हुई है। यदि तू यहाँ खेलने आई है तो जैसे खेला जाता है उसी तरह खेल। कृष्ण की शपथ, तूनें ये नए-नए खेल क्या ढूढ़ निकाले हैं। हे सखी तू बार-बार फूल-फूल कर मुझ से क्या भेंटती है, उन्हीं से आकर क्यों नहीं भेंटती जो तुझसे भेंटने के लिए खड़े हैं।

नायक की प्रच्छन्न चेष्टा—कवित्त

छोरि छोरि बांधै पाग, आरस सों आरसी लै,

अनत ही आन भांति देखत अनैसे हौ।

तोरि तोरि डारत तिनूका कहौ कौन पर,

कौन के परत पांय बावरे ज्यों ऐसे हौ।

कबहूँ चुटक देत, चुटकी खुजावौ कान,

भटकी यों बाड़ बुरी ज्यों उन्माद जैसे हौ।

बार-बार कौन पर देत मणि माला मोहि.

गावत कछूक कछू आज कान्ह कैसे हौ ॥१०॥

तुम बार-बार पगड़ी को खोल-खोल कर बाँधते हो और आलस्य मे भर कर दर्पण लेकर विचित्र भाँति देखते हो। बार-बार किस पर तिनके तोड़ते हो और पागलों की तरह किसके पैरों पड़ते हो। कभी चुटकी देकर कानों को खुजाते हो, किस पर बार-बार मणिमालाएं निछावर करते हो और कुछ का कुछ गाने लगते हो। बताओ तो कृष्ण ! आज तुम कैसे हो ?

नायक की प्रकाश चेष्टा —सवैया

जालगि लोच लुगायन दै, दिन नाच नचावत साँझ यहाँऊँ।
केशव मंत्र करो वश कारक, हारिकै यंत्र कहाँ लौंगि नाऊं।
हारि रहे हरि कैहूं मिली न, मिलाऊं जो जाहि तौ भोग सुपाऊं।
ठाढ़ी वे जाहु मिलौ मिलवे कहँ, और कहा कनियाँ करिल्याऊं ॥११॥

जिसके लिए स्त्रियों की रिश्वत देकर सबेरे सांझ नाच नाचते रहे। जिसके लिए अनेक वशीकरण मन्त्र करके हार गये और अनेक मन्त्र (उपाय) किये. कहाँ तक गिनाऊँ? हे कृष्ण! फिर भी वह न मिलीं और तुम उपाय कर-कर के हार गये। अब जो मैं उससे तुम्हें मिला दूँ तो मुँह मागी मुराद पाऊँ। जाओ, वे तुमसे मिलने के लिए खड़ी हैं, और क्या मैं उन्हें गोदी में उठा लाऊँ?

स्वयं दूतत्व वर्णन—दोहा

जो क्यों हूं न मिलै कहूं, केशव दोऊ ईठ।
तौ तब अपने आप ही, बुधि बल करत बसीठ ॥१२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब अनेक चेष्टाओं के करने पर भी दोनों नायक नायिका नहीं मिल पाते, तब अपने बुद्धि-बल से स्वयं ही दूतत्व करते हैं।

नायिका का प्रच्छन्न स्वयं दूतत्व– सवैया

दूरते देखबे को हौं दीन, मनाई हुती लिखहू लिख चीठी।
देखे मिलौ मन हौहु मिली मिल, खेलबेहू को मिली मति मीठी।
ऐसे में और चलाइहै केशव, कैंसेहू कान्ह कुमारि दै दीठी।
लागे न बार मृणाल के तार, ज्यौं टूटैगी लाल हमैं तुम्हैं ईठी ॥१३॥

तुम्हें दूर से देखने के लिये बार बार चिट्ठी लिखी थी। देखो, आज मिले हो, अब मन भर कर मिलो। जब तुम मिले तब खेलने के लिए मन ने भी चाहा। हे कृष्ण ऐसी दशा में कोई कुमारी दृष्टि

(नजर) लगा देगी तो हे लाल ! मेरी और तुम्हारी चेष्टाओं को मृणाल (कमल तंतु , की तरह टूटते देर न लगेगी ।

प्रिया का स्वयं दूतत्व—सवैया

छुवो जनि हाथ सों हाथ किये, पल ही पल बाढ़त प्रेम कला ।
न जानिये जी में कहा बसि जाय, चलै पुनि केशव कौन चला ।
भले ही भले निबहै जो भली, यह देखिबे की ही हलाहू भला ।
मिलौ मन तौ मिलवौ य कहूं. मिलवौ न अलौकिक नन्दलला ।।१४।।

मेरे हाथ में हाथ लगा कर मुझे मत छुओ, क्योंकि (ऐसा करने से) प्रेम की कला पल-पल मे बढ़ती है । (ऐसी दशा में) ज्ञात नहीं मन में क्या बात बस जाय, फिर कौन सा उपाय चलेगा । अब तक जो भली प्रकार निभती आई है वही अच्छी है, और देखने की उत्कंठा भी अच्छी है । हे नन्दलाल (कृष्ण) जो मेरा तुम्हारा मन मिल गया तो यह मिलना कोई अलौकिक नहीं है ।

प्रिया का प्रकाश स्वयं दूतत्व—सवैया

धाइ नही घर दाई परी, जुरि आई खिलाई कि आंख बहाऊं ।
पौर पै आवै रतौंधी इतै, पर ऊंचो सुनै सु महा दुख पाऊं ।
कान्ह निबेरहु न्याउ न यौं, इन आलिन को लग हौं बहराऊं ।
ये सब मो संग सोवन आवैं, कि मैं इनके सँग सोवन जाऊं ।।१५।।

घर पर धाय नहीं है । पौर पर मुझे रतौंधी आती है और ऊँचा सुनती है इससे महा दुःख होता है । हे श्री कृष्ण ! तुम्हीं मेरा न्याय करो, मैं इन सखियों को कहाँ तक समझाऊँ । ये सब मेरे साथ सोने के लिए आवें या मैं इनके साथ सोने के लिए जाऊँ ।

नायक का प्रच्छन्न स्वयं दूतत्व—कवित्त

आपनोई भाइ के ये सोहत सरीक सी वे,
केशोदास दास क्यों चलत चित लीने हैं ।
आपही अटाउ कै ये लेत नाउं मेरो वे तौ,
बापुरे मिलाप के सलाप कर हीने हैं ।

प्रिया को सुनाय कै कहत ऐसी घन श्याम,
सुबल की लै-लै नाम, काम भय भीने हैं।
साथ लै सखान अब जैबो वन छांडो,
हम खेलबे को संग सखा शाखा मृग कीने हैं ॥१६॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि नायिका को वन में बुलाने के लिए आज कृष्ण ने क्या चाल चली है कि) वह उसे सुनाते हुए कहते हैं कि "मेरे सभी सखा अपने भाइयों के साथ शरीक होकर दास की तरह उन्हीं के साथ मन लगाए हुए चले जा रहे हैं। वे स्वय तो नटखटपन करते हैं और नाम मेरा लेते है, ऐसे पागल हो गये हैं कि सुबल का नाम ले-ले कर डराते हैं।" इसलिए मैंने सखाओं के साथ वन में जाना आज से छोड़ दिया, अपने साथ खेलने के लिए मैंने वानरों को अपना मित्र बना लिया।

नायिका का प्रकाश स्वयं दूतत्व—सवैया

बन जैये चलौ कोउठाली है केशव, हैं तुमही तौ अरीअर हौ।
कछू खेलिये खेल न, आवत आज हीं, भूलौ न भूलो गरे पर हौ।
हित है हिय में किधौ नाहीं तऊ, हित नाही हिये तौललाल रहौ।
हमसों यह बूझिये ऐसी कहौ, जो कही तु कहीवक हा करौ ॥१७॥

पहले नायक ने कहा—'चलो, वन को चलें।' नायिका ने सखियों के सामने प्रकाश में तो यह उत्तर दिया कि 'यहाँ कोई ठाली अर्थात् बे काम बैठा हुआ है?' ध्वनि से यह सूचित कि यहाँ भी सब स-काम (मदन पीड़ित हैं)। नायक ने संकेत न समझ कर कहा—'तुम्हीं लोग हो।' नायिका बोली—'क्या तुम शत्रु की भांति लड़ने आये हो।' नायक सकेत न समझ कर बोला—'नहीं, कुछ खेल खेलेंगे।' नायिका ने प्रकाश रूप से कहा—'आज खेल नहीं आता।' और ध्वनि से सूचित किया कि क्या आज नहीं आता? नायक ने फिर भी नहीं समझा और कहा—'तुम लोग (खेल) भूल गई? भूलो न।' नायिका ने प्रकाश रूप से कहा—'क्या गले पड़ोगे।' ध्वनि से सूचित किया 'क्या गले

लगाओगे ?' नायक फिर भी न समझा और बोला—'हृदय में कुछ प्रेम है ?' नायिका प्रकाश रूप मे बोली—'प्रेम नहीं है तो क्या करोगे, लड़ोगे ?' संकेत किया कि 'विहार करोगो' । नायक ने तब भी न समझा और कहा - 'मुझसे जान बूझ कर ऐसी बातें करती हो ?' नायिका ने प्रकाश रूप से कहा—'जो कहा सो कहा तुम अब क्या करोगे ?' ध्वनि से सूचित किया कि 'जो कहना था, कह दिया, अब बकते रहो, चलो हम आती हैं ।'

और भी—कवित्त

केशोदास घर घर नाचत फिरत गोप,
एक रहे छक ते मरेई गुनियत है ।
बारुणी के वश बलदाऊ भये सखा सब,
संग को लै जैये दुख शीश धुनियत है ।
मोहिं तो गयेई बनै देह दीप मालापाय,
गायन संवारबे को चित चुनियत हैं ।
जो नबसौ लोल नैन लेरु वामरहिं सब,
खरिक खरेई आज सूनैं सुनियत है ॥१८॥

घर घर गोप नाचते हैं, कुछ मद्य में छके हुए हैं, वे मरे हुए ही समझो । बलराम तथा सभी सखा शराब के नशे में चूर हैं, साथ किसे ले जाया जाय, इसी दुख से शीश धुनता हूं । परन्तु मुझे तो जाना ही पड़ेगा क्योंकि दीपमाला का दिन है । गाने का काम संभालने के लिए मन होता है । यदि तुम मेरे नेत्रों में न बसो तो सब बछड़े मर जायं । आज तो सभी खरिक सूने सुनाई पड़ते हैं ।

दोहा

ऊढा पुनि यहि भांति करि, बहु बिधि हित न जनाय ।
आपन ही ते लाज तज, पियहि पियहिं मिलै अकुलाय ।

ऊढ़ा नायिका इस तरह अनेक प्रकार से प्रेम प्रकट करती है । फिर स्वयं ही लज्जा छोड़ कर प्रियतम से आकुल होकर मिलती है ।

कबित्त

पंथ न थकित पल मनोरथ रथन के,
केशोदास जगमग जैसे गाय गीत मैं।
पवन बिचार चक्र चक्र मन चित चढि,
भूतल अकाश भ्रमै घाम जल शीत मैं।
कौलों राखों थिर बपु बापी, कूप, सर सम,
हरि बिन कीनै बहु बासर बितीत मैं।
ज्ञान गिरि फोर तोर लाजतरु जाय मिलौ,
आपही ते आप गाज्यो आप निधि प्रीत मैं ॥१६॥

(नायिका अपने मन को सम्बोधित करती हुई कहती है कि) मेरे मनोरथ रूपी रथ का मार्ग क्षणभर को भी नहीं रुकता। यहा मनोरथ रूपी रथ ऐसा जगमगाता है जैसा गीत मे गाया गया हो। विचाररूपी पहियों का चाल देखकर पवन भी चकित हो जाता है। इस पर चढकर मैं पृथ्वी, आकाश सब जगह घाम जल शीत म घूम आई। अब मैं अपने शरीर को वापी, कूप, सर के समान कब तक स्थिर रखूँ। बिना कृष्ण के मैंने बहुत दिन व्यतीत किये। अब तो नदी की भाँति ज्ञान रूपी पहाड़ को फोड़कर तथा लज्जा रूपी पेड़ों को काटकर मैं प्रेम रूपी समुद्र में जा मिलूँगी।

और भी—सवैया

जात भई सँग जाति लै कीरति, केशव है कुल सों हित फूट्यो।
गर्व्व गयो पुनि यौवन रूप को, सो तौ सबै पल ही पल खूट्यो।
कान्ह तिहारही आन किये कहौं, नीक ही लाज सों ना तोई छूट्यो।
छांड्यो सबै हम हेर तुम्हैं तुम, पै तन कौ कपटा नहिं छूट्यो ॥२०॥

मेरी कीर्ति तो मेरी जाति समेत चली गई और कुल से सारा प्रेम टूट गया। फिर यौवन गर्व चला गया और रूप का गर्व तो क्षण क्षण में कम हो रहा है। हे कृष्ण! तुम्हारी शपथ खाकर कहती हूँ कि लज्जा

से तो नाता ही टूट गया। तुम्हें देखकर मैंने सब कुछ छोड़ दिया परन्तु तुम्हारा कपट तनिक भी नहीं छूटा।

दोहा

अधिक अनूढा लाज ते, पिय पै जाय न आप।
कैहूँ कै सखि यों कहै, ताके तन को ताप ॥२१॥

यदि अधिक लज्जा के कारण अनूढा नायिका प्रियतम के पास नहीं जाती तो उसकी सखी किसी प्रकार उसके शरीर की तपन को जाकर कहती है।

उदाहरण—सवैया

जानै को केशव कौने कह्यो कब, कान्ह हमारे हिंडोरन झूलै।
पानन खाइ न पानी पियै, तब ते भरि लोचन लेत समूलै।
जाहु नहीं चलि बेग बलाय ल्यों, लेहु सकैस, कहा यह भूलै।
जानत हौं वह काम कली, कुम्हिलाय गये बहुरै फिर फूलै ॥२२॥

(नायक की सख नायक से कहती है कि , ज्ञात नहीं किसने कब कह दिया कि कृष्ण हमारे हिंडोले पर झूलते हैं। तब से न तो वह पान खाती है और न पानी पीती है और आखों को आँसुओं से भर लेती है। मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ, शीघ्र जाओ तथा उसे अपने वश मे करलो। तुम्हारी यह भूल कैसी है? मैं अच्छी तरह से जानती हूँ कि वह काम रूपी तरु की कली हैं जो मुरझा गई तो क्या फिर फूलेगी?

प्रथम मिलन-स्थान वर्णन—दोहा

जनी, सहेली, धाइ, घर, सूनै घरनि सँचार।
अति भय, उत्सव, व्याधि मिस, न्यौतो सुवन विहार ॥२३॥

नायक अपनी नायिका से दासी, सहेली, और धाय के घर में या सूने घर में या डर, उत्सव, और रोग के बहाने से, या निमंत्रण में अथवा वन-विहार में पहले-पहल मिलता है।

दोहा

इनहीं ठौरन होत है, प्रथम मिलन ससार।
केशव राजा रंक को, रचि राखो कर्त्तार ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि इन्हीं (उपरोक्त) स्थानों में राजा से लेकर रक तक सभी इस ससार में नायिका से प्रथम-मिलन करते है। करतार (ईश्वर) ने यही नियम ही बनाया है।

उदाहरण (दासी घर मिलन)—कवित्त

वेष कै कुमारिका को. ब्रज की कुमारिकान,
मांझ सांझ केशोदास त्रास पग पेलि कै।
काम की लता सी चल प्रेम पास सी अमल,
राधिका को बुद्धिबल कठ भुज मेलि कै।
दौरि दौरि दुरि दुरि पूरि पूरि अभिलाख,
लाख भांति के अनूप रूप बहु केलि कै।
जनी के अजिर आज रजनी मैं सजनी री,
सांची कीन्हीं श्याम चोरि मिहीचिन खेलि कै।२५॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि) आज ब्रज की कुमारियों ने श्रीकृष्ण का निडर होकर कुमारी वेष बना दिया और काम की लता के समान, तथा प्रेम-पाश सी सुन्दरी राधा के गले में, अपने बुद्धि बल से, बाहें डलवा दीं। उन्होंने दौड़-दौड़ तथा छिप-छिप कर केलि की लाखों सुन्दर अभिलाषओं को पूरा करा दिया। हे सखि! इस तरह आज दासी के घर में, रात के समय, श्रीकृष्ण ने चोर मिहींचनी का खेल सच्चा कर दिया।

दूसरा उदाहरण (सहेली गृह मिलन)—कवित्त

नैनन के तारिन में राखो प्यारे पूतरी कै,
मुरली ज्यों लाइ राखो दसन बसन मैं।
राखो भुज बीच बनमाली बनमाला करि,
चंदन ज्यों चतुर चढ़ाय राखो तन मैं।

'केशवदास कल कठ राखो बलि कठुलाकै,
करम करम कै हू आनी है भवन मैं।
चम्पक कली ज्यों सूंघि सूंघि कान्ह देवतासी,
लेहु मेरे लाल इन्हैं मेलि राखो मन मैं ॥२६॥

हे प्यारे ! इन्हें पुलती के समान अपनी आँखों के तारों मे बसालो और मुरली की तरह दाँतो मे दबालो। हे बनमाली ! भुजाओं के बीच मे बनमाला जैसी बनालो और चदन की भाँति शरीर पर चढालो। इन्हें गले का कंठहार बनालो, मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ। मैं बड़ी चेष्टा से किसी प्रकार इन्हें तुम्हारे घर लाई हूँ। अतएव, मेरे लाल ! इन्हें चंपक कली की भाँति सूंघ-सूंघ कर देवता की भाँति मन मे बसालो।

तीसरा उदाहरण (धाय-गृह-मिलन)—कवित्त

हँसत खेलत खेल मन्द भई चन्द द्युति,
कहत कहानी अरु बूझत पहेली जाल।
केशवदास नींद सिसु आपने आपने घर,
हरै हरै उठि गईं ग्वालिका सकल बाल।
घोर उठे गगन सघन घन चहूँ दिशि,
उठि चले कान्ह धाइ बोलि उठीतिहिं काल।
आधी रात अधिक अँधेरी मांझ जैहो कहां,
राधिका की आधी सेज सोइ रहौ नन्द लाल ॥२७॥

हँसते और खेल खेलते, कहानी तथा पहेली बूझते हुए चन्द्रमा की द्युति मन्द हो गई। बच्चे नींद में भर अपने-अपने घर सोने चले गये और सब ग्वाल कुमारियां धीरे-धीरे उठ गई। जब चारों ओर आकाश में घने बादल घिर आये और श्रीकृष्ण उठ चले तो धाय बोली—"हे कृष्ण ! अब आधी रात को कहां जाओगे ? राधिका की आधी शय्या पर सो रहो।"

चौथा उदाहरण (शून्य-गृह-मिलन)—कवित्त

देखत ही चित्र सूनी चित्र शाला बाला आजु,
रूप की सी माला राधा रूपक सुहाये री।
नू पुर के सुरन के अनुरूप तानै लेत पग,
तलताल देत अति मन भाये री।
ऐसे में दिखाई दीन्हीं औचक कुँवर कान्ह,
जैसे हैं ये गात तैसे जात न बताये री।
'केशवदास' कहै परे अलज सलजसे न,
जलज से लोचन जलद से ह्वै आयेरी ॥२८॥

चित्रों से शून्य चित्र शाला देखने ही आज रूप की माला जैसी राधा को रूपक अच्छे लगने लगे। वह नूपुरों के स्वरों के अनुरूप तानें लेने लगी और पगतल मन-भाये ताल देने लगे। इतने ही में अचानक कुंवर श्रीकृष्ण दिखाई पड़े। उन्हें देखते ही उसके शरीर की जो दशा हुई वह वर्णन नहीं की जा सकती। उसके जो नेत्र अजल थे, वे सलज हो गये और कमल जैसे नेत्र जलद (बादल) से हो आए अर्थात् आसू भर आये।

चौथा उदाहरण (निशि-मिलन)—सवैया

एक समय सब देखन गोकुल, गोपी गुपाल समेत सिधाये।
राति ह्वै आई चले घर को, दशहूँदिशि मेघ महा मढ़ि आये।
दूसरौ बोलत ही समुझै, कहि केशव यों छिति में तम छायो।
ऐसे मैं श्याम सुजान वियोग बिदा कै दियो सु किये मन भायो ॥२९॥

एक समय गोपियाँ तथा ग्वालें गोकुल देखने के लिए गये। जब रात हो आई तब घर को चले। दशों दिशाओं में महा मेघ घिर आये और ऐसा घना अन्धकार पृथ्वी पर छागया कि जब दूसरा कोई बोलता था तभी ज्ञात होता था कि कहाँ है। ऐसे में श्रीकृष्ण ने वियोग को दूर कर दिया और मन भाया काम किया।

पान्चवा उदादरण (अति-भय का मिलन)—कवित्त

जानि आगि लागी वृष भानु के निकट मौन,
दौरि ब्रजबासी चढ़े चहुं दिशि धाइ कै।
जहां तहां शोर भारी भीर नर नारिन की,
सब ही की छूटि गई लाज यहि भाइ कै।
ऐसे में कुंवर कान्ह सारी शुक बाहिर कै,
राधिका जगाई और युवती जगाइ कै।
लोचन विशाल चारु चिबुक कपोल चूमि,
चंपे कैसी माला लाल लीन्हीं उर लाइ कै ॥३०॥

यह जानकर कि वृषभानु के घर के पास आग लगी है, ब्रज वासी चारों ओर से दौड़े। जहा-तहा शोर होने लगा और नर-नारियों की भीड़ लग गई और मारे भय के सब की लज्जा छूट गई। ऐसे समय कुँवर श्रीकृष्ण ने मैना तथा तोते को बाहर करके, अन्य युवतियों को जगाने के बाद राधा जी को जगाया तथा विलाश लोचनों, सुन्दर चिबुक तथा कपोलों को चूम कर, चम्पक माला के समान, लाल (श्रीकृष्ण) ने उसे गले लगा लिया।

छठा उदाहरण (उत्सव का मिलन)—कवित्त

बल की बरसु गांठ ताकी 'रात' जागिबे को,
आई ब्रज सुदरी सँवारि तन सोनो सो।
केशवदास भीर भई नद जू के मंदिरनि,
आधो मध्य ऊरध वचोन काहू कोनो सो।
गावति बजावति नचत नाना रूप करि,
जहां तहां उमँगत आनँद को औनो सो।
सांवरे की सूनी सेज सोवत हीं राधिका जू,
सोये आनि सांवरेऊ मानि मन गौनो सो ॥३१॥

श्री बलराम जी की वर्ष गाठ की रात को जागने के लिए ब्रज सुदरिया अपने-अपने सोने जैसी देहों को सजाकर आई, नन्द जी के घर पर

भारी भीड़ हो गई और घर का निचला भाग, बीच का हिस्सा तथा ऊपरी भाग सब भर गया। यहा तक कि कोई कोना तक न बचा। स्त्रिया गाने बजाने और नाचने लगीं। जहा-तहा आनन्द का समुद्र सा उमड़ने लगा। श्रीकृष्ण की सूनी शय्या पर राधा जी के सोते ही श्रीकृष्ण भी आगये और मन में गौना सा समझ कर सो गये।

सातवा उदाहरण (व्याधि मिस मिलन)

सवैया

शोधि निदान निदान दिये, उपचार विचार किये न धिरानी।
वेद की शासन, व्याधि विनाशन. होम हुताशन हू न हिरानी।
केशव बेगि चलौ बलि बोलति, दीन भई वृष भानु कि रानी।
आये हौ मेंटि मरू करि कै, बहुरै उनको वह पीर पिरानी ॥३२॥

(सखी नायक से कहती है कि) निदान (लक्षणों) को खोजकर बहुत से दान दिये तथा अनेक उपचार भी किया परन्तु उसकी व्याधि धीमी नहीं पड़ी। वेद की आज्ञा के अनुसार, व्याधियों को दूर करने वाले होम तथा अग्नि होत्र भी किये पर फिर भी व्याधि न गई। हे कृष्ण! अब शीघ्र चलो। मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ, वृषभानु की रानी (राधा जी की माता) बेचारी दीन होकर कहती हैं कि जिस पीड़ा को तुम बड़ी कठिनता से दूर कर आये थे, वही पीड़ा उसको फिर सताने लगी है।

आठवां उदाहरण (निमंत्रण के मिस मिलन)—कवित्त

न्योति कै बुलाई हुती बेटी वृष भानु जू की,
जैबे को यशोदा रानी आनी हैं शिंगारि कै।
भोजन कै भवन विलोकिबे-को, पान खात,
ऊपर अकेली गई, आनंद विचारि कै।
देखति देखति हरि भावते को भागी देखि,

दौरि-गही ब्याल ऐसी बेनी डर डारि कै।
भेंटि भरि अंक मन भायो करि छाँडयो मुख,
केसरि सो माँड़ि लीनी बेसरि उतारि कै ॥२३॥

यशोदा जी ने वृषभानु की बेटी को निमंत्रण देकर बुलाया था और वह स्वयं उसे सजाकर लाई थीं। भोजन करके, पान खाती हुई वह ऊपर अकेली इस विचार से गई कि वहा आनन्द होगा। वहा अपने प्यारे श्रीकृष्ण को अपनी ओर देखते हुए देखकर भागी तो यह देख श्रीकृष्ण ने उसे पकड़ लिया और निडर होकर साप जैसी चोटी पकड़ली। फिर अंक मे लेकर मन-भाया किया। तब केसर से मुँह को पोतकर तथा बेसर को उतार कर उसे छोड़ दिया।

नवा उदाहरण (वन विहार मिलन)—सवैया

दैदधि कालिह गई कहि दैन, पसारहु ओलि भरौ पुनि फेटी।
ओड़ो नहीं मग छांड़ो जू पाये, छुड़ावै विलोकनि लाज लपेटी।
बात सम्हारि कहौ सुनि है कोउ, जानत हौ यह कौन की बेटी।
जानत हौं वृष भानु को है, पर तोहि न जानत कौन की चेरी ॥२४॥

श्री कृष्ण ने कहा—'जिस दही को कल देने के लिए कह गई थी, उसे दे' उसने उत्तर दिया—'ओली फैलाओ, फिर फेटी भर लो।' जब उसने कहा, छेड़ो मत, मार्ग छोड़े तो उत्तर दिया कि 'लज्जा भरी दृष्टि वाली तुम्हारी सखी छुड़ावे'। सखी ने फिर कहा—'बात सभाल के करो, कोई सुनेगा। तुम जानते हो, यह किसी की बेटी है?' इस पर श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया—'जानता हूँ, वृषभानु की है। पर तुझे नहीं जानता कि तू किस की चेरी है।'

दशवां उदाहरण (जल-विहार मिलन)—सवैया

हरि राधिका मान सरोवर के तट ठाढ़ेरी हाथ सों हाथ छिये।
प्रिय के शिर पाग प्रिया मुकता छर, राजत माल दुहून हिये।
कटि केशव काछनीश्वेत कसे, सबही तन चंदनचित्र किये।
निकसे जनुछीर समुद्र हीते सँग श्रीपति मानहुँ श्रीही लिये ॥२५॥

श्रीकृष्ण और राधा जी मान सरोवर के किनारे हाथ मे हाथ मिलाये खड़े ,हैं। प्रियमत के सिरपर पाग है और प्रिया के सिरपर मोतियों की लड़, माला दोनों के गलों मे सुशोभित है। 'केशवदास' कहते हैं कि श्वेत काछनी कसे हुए हैं और सारा शरीर चन्दन से चित्रित कर रखा है। ऐसा जान पड़ता है मानो लक्ष्मी पति (श्रीविष्णु भगवान्) क्षीर समुद्र से लक्ष्मी जी को लिए निकल आये हैं।

दोहा

यहि विधि राजा-रमण के, वरणो मिलन विशेष।
केशवदास निवास बहु, बुधि बल लीजहु लेख ॥३६॥
और जु तरुणी तीसरी, क्यों वर्णों यहि ठौर।
रस में विरस न बर्णिये, कहत रसिक सिर मौर ॥३७॥
प्रथम मिलन थल मैं कहे, अपनी मति अनुसार।
हाव-भाव वर्णन करौं, सुनि अब बहुत प्रकार ॥३८॥

इस प्रकार श्रीराधा-रमण (श्रीकृष्ण) के विशेष-मिलन स्थानो का मैंने वर्णन किया। इनके अतिरिक्त और बहुत से मिलन स्थान हैं। अपनी-अपनी बुद्धि के बल से पहचान लो। इसके अतिरिक्त जो तीसरी (गणिका या सामान्या) नायिका है उसका वर्णन यहा क्यों करूँ क्यों कि रसिक शिरमौर कहते हैं कि 'रस मे विरसो का वर्णन न करना चाहिए।'

(१)
दंपति-चेष्टा-वर्णन
प्रच्छन्न चेष्टा
प्रकाश चेष्टा
(२)
स्वयंदूतत्व
प्रच्छन्न
प्रकाश
(३)
मिलन स्थान
(१) दासी का घर
(२) सहेली का घर
(३) धाय का घर
(४) शून्य घर
(५) निशि-मिलन
(६) अति-भय मिलन
(७) उत्सव मिलन
(८) व्याधि मिस मिलन
(९) निमंत्रण मिस मिलन
(१०) वन विहार मिलन
(११) जल विहार मिलन

छठा प्रकाश

भाव लक्षण—दोहा

आनन लोचन वचन मग, प्रकटत मन की बात।
ताही सों सब कहत हैं, भाव कविन के तात ॥१॥

जब मुख, नेत्र और वचनों द्वारा मन की बात प्रकट होती है, तब सभी सुकविगण उसे भाव कहते हैं।

भाव-भेद—दोहा

भाव सु पांच प्रकार को, सुनु विभाव, अनुभाव।
स्थाई, सात्विक कहैं, व्यभिचारी कविराव ॥२॥

भाव पाच प्रकार के होते हैं। विभाव, अनुभाव, स्थायी सात्विक और सचारी।

विभाव वर्णन—दोहा

जिनते जगत अनेक रस, प्रकट होत अनयास।
तिनसों सुमति विभाव कहि वर्णत केशवदास ॥३॥

जिनसे संसार में अनेक रसों की अनायास उत्पत्ति होती है, उनको विभाव कह कर सुमति गण (बुद्धिमान्) वर्णन करते हैं।

विभाव-भेद—दोहा

सो विभाव द्वै भांति के, केशवदास बखान।
आलंबन इन दूसरौ, उद्दीपन मन आन ॥४॥

वह विभाव दो तरह के होते है। एक आलंबन और दूसार उद्दीपन।

पहला आलंबन—दोहा

जिन्हैं अनंत अवलंबई, ते आलंबन जान।
जिनते दीपति होत है, ते उद्दीप बखान ॥५॥

जिनका सहारा पाकर रस की उत्पत्ति होती है, उन्हें आलंबन समझना चाहिए और जिनसे उद्दीत होता है, वे उद्दीपन कहलाते हैं।

आलबन के स्थान—छप्पय

दपति जोबन रूप जाति लच्छण युत सखि जन।
कोकिल कलित वसत फूलि फल दल अलि उपवन।
जलयुत जलचर अमल कमल कमला कमलाकर।
चातक मोर सु शब्द तड़ित घन अबुद अबर।
शुभ-सेज दीप सौ गध गृह, पान खान परिधान मनि।
नव नृत्य भेद वीणादि सब आलबन केशव बरनि ॥६॥

युवादम्पति, रूप जाति और लच्छण युक्त सखिया, कोयल, सुन्दर वसन्त ऋतु, फूले हुए फूल, भौर, उपवन, जलचर युत सरोवर, निर्मल कमल, चातक, मोरो का शब्द, विजली, सजल बादल, आकाश, सुन्दर शैया, दीपक, सुगधित कमरा, पान चर्वण, सुन्दर पोशाक, नृत्य, वीणादि का वादन आदि आलम्बन के स्थान हैं।

उद्दीपन वर्णन—दोहा

अवि लोकन आलाप परि, रभन नख रद दान।
चुंबनादि, उद्दीप ये, मर्दन, पास, प्रवान ॥७॥

अवलोकन, आलाप, रंभन, नख तथा दाँत दान, चुम्बनादि, मर्दन, और स्पर्श ये उद्दीपन स्थान हैं।

अनुभाव वर्णन—दोहा

आलबन उद्दीप के, जे अनुकरण बखान।
ते कहिये अनुभाव सब, दपति प्रीति विधान।८॥

आवलंन और उद्दीपन विभावों के जो अनुकरण स्वरूप कार्य होते हैं, दपति के प्रेम विधान के समय होते हैं, वे अनुभाव कहे जाते हैं।

स्थायी भाव वर्णन—दोहा

रति, हासी, अरु शोक पुनि, क्रोध, उछाह सुजान।
भय, निंदा, विस्मय सदा थाई भाव प्रमान ॥९॥

रति, हास, शोक क्रोध, उत्साह, भय, निन्दा और विस्मय ये स्थायी भाव हैं।

सात्विक-भाव—दोहा

स्तभ स्वेद रोमांच सुर, भंग, कंप, वैवर्ण।
अश्रु प्रलाप बखानिये, आठो नाम सुवर्ण ॥१०।

स्तभ, स्वेद, रोमाञ्च, स्वर भग, कप, विवरणता, अश्रु और प्रलाप ये आठ सात्विक भाव है।

व्यभिचारी भाव—दोहा

भाव जु सबही रसन में, उपजत केशवराय।
बिना नियम तिन सो कहैं, व्यभिचारी कविराय ॥११॥

जो भाव सभी रसों म बिना किसी नियम के उत्पन्न होते है, उन्हें कवीन्द गण व्यभिचारी भाव कहते हैं।

व्यभिचारी भावों के भेद—दोहा

निर्वेद, ग्लानिन, शका तथा. आलस, दैन्य समोह।
स्मृति, घृति, व्रीडा, चपलता, श्रम, मद, चिंताकोह ॥१२॥
गर्व, हर्ष, आवेग पुनि, निंदा, नींद, विवाद।
जडता, उत्कंठा, सहित, स्वप्न, प्रबोध, विषाद ॥१३॥
अपस्मार, मति उग्रता, आश तर्क अति व्याधि।
उन्माद, मरण, भय आदि दै, व्यभिचारी युत आधि ॥१४॥

निर्वेद, ग्लानि, शंका, आलस्य, दैन्य, मोह, स्मृति, घृति, वीणा (लज्जा), चपलता, श्रम, मद, चिंता, क्रोध, गर्व, हर्ष, आवेग, निन्दा, नीद, विवाद, जड़ता, उत्कंठा, स्वप्न, प्रबोध, विषाद, अपस्मार, मति उग्रता, आश, तर्क अति व्याधि, उन्माद, मरण, भय और व्याधि (मानसिक व्याधि) व्यभिचारी भाव कहलाते हैं।

हाव-लक्षण—दोहा

प्रेम राधिका कृष्ण को, है ताते शृंगार।
ताके भाव प्रभाव ते, उपजत हाव विचार ॥१५॥

हेला लीला ललित मद, विभ्रम विहित विलास।
किलकिंचित विच्छित अरु, कहि बिब्वोक प्रकाश ॥१६॥
मोट्टाइत सुन कुट्टकित, बोधादिक बहु हाव।
अपनी अपनी बुद्धि बल, वर्णत कवि कवि राव ॥१७॥

श्री राधा और श्रीकृष्ण के शृंगार के प्रभाव से जो चेष्टाएं प्रकट होती हैं, उन्हें हाव समझना चाहिए। इनके कवियों तथा कवीन्द्रों ने, हेला, लीला, ललित, मद, विभ्रम, विहित, विलास, किलकिंचित, विच्छित, बिब्वोक, मोट्टाइत कुट्टमित, और बोध आदि अनेक भेद, अपनी अपनी बुद्धि के बल से बतलाये हैं।

१ हेलाहाव—दोहा

पूरण प्रेम प्रताप ते, भूलत लाज समाज।
सो हेला लिहि हरत हिय, राधा श्री व्रजराज ॥१८॥

जहाँ पूर्ण प्रेम के प्रभाव से लज्जा छूट जाती है और जो श्री राधा और श्रीकृष्ण के मनों को हरण कर लेता है, वह हेलाहाव कहलाता है।

उदाहरण—सवैया

अवलोकनि अंकुश ऐंचि अनुपम, भ्रू युग पास मलै गल मेली।
मृदुहास सुवास उठाय मिली बहु, जोन्ह की यामिनि मांझ अकेली।
अधरा रस प्याय किये वश केशव, राय करी रस रीति नवेली।
वन में वृष भानु सुता सुख ही हरि, को हरि लै गई हेल ही हेली ॥१६॥

श्रीराधा दृष्टि के अनुपम अंकुश से अपनी ओर खींच कर भ्रू रूपी पाश गले में डाल दी। कोमल हास तथा सुवास उठाकर चाँदनी रात में अकेली मिली। इस तरह ओठों का रस पिला कर श्रीकृष्ण को वश मे करके नवेली रस-रीति की और वन में सुख पूर्वक बातों ही बातों में ले गई।

२ दूसर लीला हाव लक्षण—दोहा

करत जहां लीलान को, प्रीतम प्रिया बनाय।
उपजत लीला हाव तहँ, वर्णत केशवराय ॥२१॥

जहा प्रियतम प्रिया की तथा प्रिया प्रियतम की लीला करती है अर्थात् उनका रूप धारण करती है वहा लीला हाव उत्पन्न होता है। अथवा 'केशवदास' कहते हैं कि जहां प्रियतम और प्रिया परस्पर लीलाएँ करते हैं वहा लीला हाव उत्पन्न होता है।

उदाहरण

प्रिया का लीला हाव—सवैया

पायन को परिबो अपमान, अनेक सो केशव मान मनैबो।
सीखो तमोर खवाइबो खैबो, विशेष चहू दिशि चौंकि चितैबो।
चील कुचीलनि ऊपर पौढिबो, पातन के खरकैं भजि ऐबो।
आखिन मूदि कै सखित राधिका, कुञ्जन के प्रति कुञ्जन जैबो ॥२२॥

(श्रीराधा जी श्रीकृष्ण का रूप रख कर) पैरों पड़ना, अनेक अपमानों को सह कर रूठना मनाना, पान खिलाना और खाना, चारों ओर से विशेषता के साथ चौंक कर देखना, मैली कुचैली स्थली पर लेटना, पत्तों के खड़कने से भागना और आखें मूद कर एख कुज से दूसरी कुंज को जाना सीख रही है।

२ उदाहरण

नायक का लीला हाव—सवैया

झांकि झरोखनि में चढ़ि ऊंचे, अवासिंन ऊपर देखन गावै।
निंदति गोप चरित्रन को, कहि केशव ध्यान ककैगुन गावै।
चित्रित चित्र में आपुन यों, अविलोकन आनँद सो उरझावै।
आँगन ते घर में घर ते फिर, आगन वासर को बिरमावै ॥२३॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि) श्रीकृष्ण श्रीराधा जी का रूप धारण करके झरखों में झांकते हैं और घर के ऊपर देखने को दौड़ते हैं। गोपों के चरित्रों की निंदा करके श्रीकृष्ण के ध्यान को कर करके गुण गाते हैं। उनके चित्रित चित्र को देखने में फिर आनंद सहित उलझ जाते हैं। इस प्रकार घर से आगन और आगन से घर में घूमते घूमते दिन बिताते हैं।

३ ललित-हाव-लक्षण— दोहा

बोलनि हँसनि विलोकिवो, चलनि मनोहर रूप।
जैसे तैसे बरणिये, ललित हाव अनुरूप ॥२४॥

जहा पर बोलने, हँसने, देखने और मनोहारिणी चाल चलने का जैसे का तैसा रूप वर्णन किया जाता है वहा ललित-हाव होता है।

उदाहरण

नायिका का ललित हाव—कवित्त

कोमल बिमल मन बिमला सी सखी साथ,
कमला ज्यों लीने हाथ कमल सनाल के।
नूपुर की ध्वनि सुनि भोरे कल हंसनि के,
चौंकि चौंकि परैं चारु चेटुवा मराल के।
कचन के भार कुच भारनि सकुच भार,
लचकि लचकि जात कटि तट बाल के।
हरैं हरै बोलत बिलोकत हरेंई हरैं,
हरैं हरै चलत हरत मन लाल के ॥२५॥

जिसका कोमल तथा विमल मन है, सरस्वती जैसी सखी जिसके साथ है और जो हाथ में सनाल कमल लिए हुए लक्ष्मी जैसी प्रतीत होती है। जिसके बिछुओं की ध्वनि सुनकर, हंसों के धोखे में, हंसों के बच्चे चौंक-चौंक पड़ते हैं, जिसकी कमर, बाल, कुच, तथा संकोच के भार से झुकी जाती है, वह बाला धीरें-धीरे बोलती, हँसती तथा धीरे-धीरे चलती हुई लाल (श्रीकृष्ण-नायक) का मन हरती है।

उदाहरण

नायक का ललित हाव—सवैया

चपला पट मोर किरीट लसै, मघवा-धनु शोभ बढ़ावत हैं।
मृदु गावत आवत वेणु बजावत; मित्र मयूर नचावत हैं।

उठि देखि भटू भरि लोचन चातक. चित्त की ताप बुझावत हैं।
घनश्याम घने घन वेष धरे, जु बने बनते ब्रज आवत हैं ॥२६॥

हे सखी! उठकर देख! आज घनश्याम (श्रीकृष्ण) बादलों जैसा रूप रखे हुए बन से ब्रज की ओर चले आरहे हैं, आँखें खोल कर अच्छी तरह देखले। उनका पीला वस्त्र बिजली जैसा लगता है। जो मोर किरीट है वह इन्द्र-धनुष सी शोभा बढाता है। जो वेणु बजाते हुए कोमल स्वर से गा रहे हैं वही मानो बादल का मित्र मयूर नाच रहा है।

४ मद-हाव लक्षण—दोहा

पूरण प्रेम प्रेभाव ते, गर्व बढ़ै बहु भाव।
तिनके तरुण बिकार ते, उपजत है मदहाव ॥२७॥

पूर्ण-प्रेम के प्रभाव के कारण जब गर्व बढने लगे और तारुण्य के बिकार से मद की उत्पत्ति हो, तब मद-हाव कहलाता है।

उदाहरण कवित्त

छबि सों छबीली वृषभानु की कुंवरि आजु,
रही हुती रूप मद मान मद छकि कै।
मारहू ते सुकुमार नन्द के कुमार ताहि,
आयेरी मनावन सयान सबनकि कै।
हँसि-हँसि सोहैं करि-करि पांय परि-परि,
केशोदास की सों जब रहे जिय जाकि कै।
ताही समै उठै घन घोर दामिनी सी धाइ,
आइ उर लागी श्याम घन सों लपकि कै ॥२८॥

हे सखी! अपनी छबि से छबीली वृषभानु की पुत्री (श्रीराधा जी) अपने रूप-मद तथा मान मद से छकी हुई बैठी थीं। (उसी समय) कामदेव से भी बढ कर सुन्दर नन्द जी के कुमार (श्रीकृष्ण) बड़ी चतुरता के साथ उन्हें मनाने के लिए आये। श्रीकृष्ण की शपथ, जब वह हँस-हँस तथा पैरों पड़-पड़ के मनाकर हार गये तब उसी समय घोर

बादल घिर आये तो वह बिजली की भाँति लपक कर श्याम-घन (श्रीकृष्ण) से लिपट गई ।

दूसरा उदाहरण नायिका का मद-हाव—सवैया

महि मोहिनी मोहि सकै न सखी, चपला चल चित्त बखानत है ।
रति की रति क्यो हूँ न कान करै द्युति चन्दकला घटि जानत है ।
कहि केशव और की बात कहा, रमणीय रमाहू न मानत है ।
वृषभानु सुताहित मत्त मनोहर, औरहि डीठ न आनत है॥२६॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि वृषभानु सुता (श्रीराधा जी) को देखने के बाद श्रीकृष्ण को पृथ्वी भर की कोई भी मोहनी (स्त्री) मोह नहीं सकती। वह चपला (बिजली) को अपने मन मे चन्चला समझते है। रति की कीर्ति को तो सुनते ही नही और चन्द्रमा की कलाओं को उनसे घटकर मानते हैं। और की तो बात ही क्या है, उनके आगे श्री लक्ष्मी जी को भी सुन्दरी नहीं मानते । वृषभानु-सुता (श्री राधा जी) के प्रेम मे मत्त होकर अन्य किसी स्त्री को दृष्टि में नहीं लाते ।

५. विभ्रम हाव-लक्षण—दोहा

बांक निभूषन प्रेम ते, जहां होहि विपरीत ।
दर्शन रस तन मन रसत, गणि विभ्रम के गीत ॥३०॥

जहाँ प्रेम के वश होकर बोकादि भूषण विपरीत (उल्टे पहन लिये जाते हैं और दर्शन से रस की उत्पत्ति होकर तन तथा मन द्रवीभूत होने लगता है, वहाँ विभ्रम हाव होता है ।

उदाहरण नायिका का विभ्रम-हाव—सवैया

कटि के तट हार लपेट लियो, कल किङ्किणिलै उर मैं उर भाई ।
कर नूपुर सों पग पौंची बनी, अँगिया सुधि अंचल की शिर माई ।
करि अञ्जन अञ्जित चारू कपोल, करी युत जावक नैन निकाई ।
सुनि आवत श्री ब्रजभूषण भूषण, भूषित ही उठि देखन धाई ॥३१॥

कमर में हार लपेट लिया और सुन्दर करधनी गले मे लटका ली। हाथ में बिछुए और पैरों मे पहुँचियां पहन ली। अगिया और अंचल की सुध भूल गई। सुन्दर कपोलों को काजल से अञ्जित कर लिया और नेत्रों की शोभा को जावक से बढाया। ब्रजभूषण (श्रीकृष्ण) को भूषणों से सज्जित होकर आता हुआ सुना तो उन्हें तुरन्त देखने के लिए दौड़ी।

दूसरा उदाहरण नायक का विभ्रम हाव—सवैया

नँद नन्दन खेलत हैं बन गात बनी छवि चन्दन के जल की।
वृषभन सुताहि बिलोकत ही, रूची चित्त में विभ्रक की झलकी।
गिरि जात न जानत पान न खात, बिरी कर पंकज के दलकी।
विहँसी सब गोपसुता हरि लोचन, मुँदि सुरोचि दग चलकी ॥२२॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) हे सखी! नन्द नन्दन श्रीकृष्ण-बन में खेल रहे थे। उनके शरीर पर चदन के जल की शोभा थी अर्थात् चंदन लगाये हुए थे। उसी समय श्रीराधा जी को देखते ही, उनके चित्त मे विभ्रम झलक आया। जो पान खाने के लिए हाथ मे लिए हुए थे, वे कब गिर गये, इसे वह जान न पाये और कमल के पत्ते (जिसमे पान का बीड़ा लपटा हुआ था) को पान का बीड़ा समझकर खाने लगे। यह देख सब गोपियाँ हँसने लगीं और श्रीकृष्ण ने नेत्र बन्द कर लिये। वहाँ उनके नेत्रों की कैसी शोभा बनी थी।

६ बिहित-हाव-लक्षण—दोहा

बोलनि के समये बिषे, बोलत देइ न लाज।
बिहित हाव नासों कहैं, केशवकवि, कविराज ॥२३॥

बात-चीत करते समय जब लज्जा बोलने न दे अर्थात लज्जा के मारे बोला न जाय, तब उसे केशव कवि तथा अन्य कविराज विहित-हाव कहते हैं।

उदाहरण (नायिका का विहित-हाव)—सवैया

मेरे कहे दहिये जु तऊ, फिर ग्रीष्म ज्यों हठ काठ दहौगी।
पैरबो प्रेम समुद्र पराये, कराये किये कत क्यों निबहौगी।
हौ समरै सजनी सिगरी, कबहूँ हरि सो हँसि बात कहौगी।
पी चित की चित्र सारी चढी, चित्र की पुतली भई कौलौ रहौगी ॥३४॥

(एक सखी नायिका से कहती है) अभी तो तुम मेरे कहने से जलती हो अर्थात् दुखी होती हो फिर तुम ग्रीष्म मे जलने वाले काठ की भाँति हठ-रूपी ईंधन से जला करोगी। प्रेम के समुद्र मे पैरने के बाद दूसरे के सहारे से कहा तक निर्वाह होगी। तुम्हारी सभी सखियाँ इसी लालसा मे मरी जाती हैं कि तुम श्रीकृष्ण मे हँसकर बाते कब करोगी। प्रियतम के मनरूपी अटारी पर चढ कर अब चित्र लिखी हुई पुतली के समान कब तक बनी रहोगी?

दूसरा उदाहरण (नायक का विहित-हाव)—सवैया

केशवदास सो आज सखी, वृषभानु कुमारि उराहनौ दीनो।
गारि दई अरु मार दई अरविदन, सों मनु कै हित कीनो।
सीख दई, सुख पाई लई, उर लाइ सुगंध चढाइ नवीनो।
उत्तर देइ को नन्दकुमार, कछू शिर नीचे वे ऊँचो न कीनो ॥३५॥

आज श्रीकृष्ण को वृषभानु कुमारि (श्री राधा जी) ने उलाहिना दिया। गाली दी और कमलों से मारा भी। परन्तु मन से प्रेम ही किया। फिर उन्हें शिक्षा दी जो उन्हों ने आनन्द पूर्वक मान ली। जो नवीन सुगधित पदार्थ दिये उन्हें हृदय पर चढा लिया। हे सखी! इतना होने पर भी उत्तर कौन दे, क्योंकि नन्दकुमार (श्रीकृष्ण) ने नीचे से ऊपर को शिर तक नही उठाया।

७ विलास-हाव-लक्षण—दोहा

खेलत बोलत हँसत अरु, चितवत चलत प्रकाश।
जल थल केशवदास कहि, उपजत विविध विलाश ॥३५॥

जहा खेलने, बोलने, हँसने, देखने और चलने में प्रकाश प्रकट हो और जहां जल, थल आदि में विविध विलास दिखाई पड़े वहां विलास-हाव होता है।

उदाहरण (नायिका का विलास-हाव)—कवित्त

किलक अलक युत तिलक चिलकनि मिस,
भौंहन में विभ्रमनि भौन भेद दीनो है।
लोचनि शोचन सकोचनि नचावति है,
दशन चमक ही चकित चित कीनो है।
मंदहास मुखवास अनियास दास करि,
लीने केशोदास जीय यद्यापि प्रबीनो है।
मोहन के तन मन मोहिबो को मेरी भटू,
तेरी मुख सुख ही अनंत व्रत लीनो है ॥२७॥

(एक सखी नायिका से कहती है कि) तुम्हारी अलकों और तिलक की चमक के बहाने तुमने यह भेद दिया है कि भौंहें विभ्रम का घर होगई हैं अर्थात् भौंहों में विभ्रम-निवास करता है। तुम्हारी आखे मारे संकोच के नाचती हैं। दाँतों की चमक ने उनका चित्त चकित्त कर दिया है। अपनी मंद हँसी और मुखवास से तुमने श्रीकृष्ण के मन को वश मे कर लिया है, यद्यपि वह बड़े प्रवीन हैं। हे सखी! मोहन (श्रीकृष्ण) के तन और मन को मोहने के लिए तुम्हारे मुख ने सुखी होकर मानो अनन्त व्रत ले लिया है (अर्थात् तुम इतना होने पर भी बोलती नहीं)।

दूसरा उदाहरण नायक का विलास-हाव—कवित्त

जिनन निहारे ते निहारिबे को निहोरत,
काहू न निहारे, जिन कैसे हू निहारे हैं।
सुर, नर, नाग नव-कन्यन के प्राणपति,
पति देवतानि हूँ के हियनि बिहारे हैं।
इहिविधि केशोदास रावरे अशेष अंग,

उपमा न उपजी विरचि पचिहारे हैं।

रूप मद मोचन मदन मद मोचन है,

तीय-व्रत-मोचन विलोचन तिहारे हैं ॥३८॥

(कोई सखी नायक से कहती है कि) हे लाल! (श्री कृष्ण) जिन्होंने आपके नेत्रों को नहीं देखा वे देखने की विनय करते है। सुर, नर, नाग तथा नवीन विवाहिताओं के प्राणपति हैं तथा पतिव्रता स्त्रियों तक के हृदयों मे बिहार करते हैं। हे श्रीकृष्ण! इसी प्रकार आपके अशेष अग हैं जिनकी उपमा ढूँटते ढूँढते ब्रह्मा भी हार कर थक गये। आपके ये नेत्र रूप के मद को, कामदेव के मद को और स्त्रियो के व्रत को छुड़ाने वाले हैं।

८ किलकिंचित-हाव-लक्षण—दोहा

श्रम अभिलाष सगर्व स्मित, क्रोध हर्ष भय भाव।

उपजत एकहिबार जहँ, तहँ किलकिंचित हाव ।३६॥

जहाँ श्रम, अभिलाष, गर्व, मुस्कराहट, क्रोध, हर्ष, तथा भय के भाव एक साथ ही उत्पन्न होते हैं, वहा 'किलकिंचित-हाव' कहा जाता है।

उदाहरण

प्रियाजी श्रीराधाजी) का किलकिंचित हाव – सवैया

कौन रसै विहँसे लखि कौनहिं, कापर कोपि कै भौंह चढ़ावै।

भूलति लाज भटू-कबहू, कबहूँ मुख अंचल मेलि दुरावै।

कौन की लेत बलाय बलायल्यौं, तेरी दशा यह मोहिं न भावै।

ऐसी तौ तू कबहूं न भई भव तोंहि दई जनि बाइ लगावै ॥४०॥

(सखी नायिका से कहती है कि) तू कौन को देखकर आन्दित होती हुई हँसती है। किस पर क्रोध करके भौंहें चढाती हैं। हे सखी! कभी तू लज्जा को भूल जाती है और कभी मुंह पर आचल डाल कर उसे छिपा लेती है। मैं तेरी बलाय लूँ, तू किसकी बलाय लेती है। मुझे तेरी यह दशा अच्छी नहीं लगती। तू तो ऐसी कभी न थी, ईश्वर अब तुझे वायु न लगावे अर्थात् पागल न बना दे।

२ उदाहरण

नायक का किलकिंचित् हाव—सवैया

ऐसी है गोकुल को कुल की जिन, दच्छिण नैन किये अनुकूले।
खजन से मन रजन केशव, हास-विलास लता लगि भूले।
बोलै झुकै उझकै अनबोलैं, फिरें बिझुके से हिये महँ फूले।
रूप भये सबके बिस ऐसे है, कान्ह कहौ रस कौन के भूले ॥४१॥

गोकुल की ऐसी कौन कुल वाली स्त्री है, जिसने आपके अनुकूल नयनों को दच्छिण किया है अर्थात् अपनी ओर खींचा है। केशवदास कहते है कि खजन पच्छी की तरह मन को प्रसन्न करने वाली है, हास-विलास के लता में झूल रही है। बोलती है, झुकती है, ऊपर उठती है, चुप हो जाती है, और फिर ह्रदय मे प्रसन्न होती सी चौंक उठती है। सब के ऐसे सुन्दर रूप हैं, फिर कहो कान्ह (श्रीकृष्ण) आप किस रस में भूले हो ?

९ बिब्बोक-हाव-लच्छण—दोहा

रूप प्रेम के गर्व ते, कपट अनादर होय।
तहँ उपजत बिब्बोक रस, यह जानै सब कोय ॥४२॥

जहाँ रूप और प्रेम के गर्व से कपट भरा अनादर किया जाता है, वहाँ बिब्बोक-हाव होता है, यह सभी जानते हैं।

उदाहरण

नायिका का बिब्बोक हाव—सवैया

आवत जानि कै सोय रही, हरुये हरि बैठ न जात जगाई।
साहस कै उर मध्य धरौ कर, जागति रोम किरोचि जनाई।
नीवी विमोचित चौंकि उठी, पहिचान झुकी बतियां कहिबाई।
बासर गाइ गमार चरावत, आवत हैं निसि सेज पराई ॥४३॥

श्री कृष्ण को आता हुआ जानकर नायिका सो गई। श्रीकृष्ण धीरे से जाकर बैठ गये और वह उनसे जगाई न गई। उन्होंने साहस करके ह्रदय पर हाथ रखा तो नायिका के रोमांच हो आया। जब वह नीवी

खोलने पर उतारु हुए तो चौक उठी और उन्हें पहचान कर फिर झुक गई और ऐसी बाते करने लगी जैसी बात के प्रभाव में की जाती हैं। वह बोली कि 'गॅवार दिन मे तो गाय चराता है और रात को पराई सेज पर आ जाता है।'

२ उदाहरण

नायक का बिव्वोक हाव—सवैया

एक समै इक गोपी सो केशव, कैसहु हाँसी की बात कही।
या कह तात दई तजि जाहि, कहा हमसों रस रीति नहीं।
को प्रति उत्तर देइ सखी, दृग आंसुन की अवली उमहीं।
उर लाय लई अकुलाय तऊ, अधिरातक लौ हिलकीन रही ॥४४॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) एक समय श्रीकृष्ण ने कुछ हँसी की बात एक गोपी से कही कि 'इसको इसके बाप ने छोड़ दिया तो हमसे क्या प्रीत करेगी ?' हे सखी ! इसका प्रत्युत्तर कौन देता ? उसके आखों मे आसुओं की धारा उमड़ चली। यह देख उन्होंने घबड़ा कर हृदय से लगा लिया परन्तु फिर भी आधी रात तक सिसकना बंद न हुआ।

१० बिच्छित्त हाव-लक्षण—दोहा

भूषण भूषब को जहाँ, होहि अनादर आन।
सो बिच्छित्त विचारिये, केशवदास सुजान ॥४५॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहा पर भूषणों की सजावट का (आदर के स्थान पर) अनादर होता है, वहां बिच्छित्त हाव समझना चाहिए।

उदाहरण

नायिका का बिच्छित्त हाव—सवैया

तन आपने भाये शृंगार नहीं, शृंगार शृंगार शृंगारै बृथाहीं।
ब्रज भूषण नैननि भूख है जाकी, सुतोपै शृंगार उतारै नगाहीं।

सब होत सुगध नहीं तौं सुगध, सुगध मै जाति सुगधि वृथाही ।
सखि तोहितैं है सब भूषण भूषित, भूषण तौ तुव भूषित नाहीं ॥४६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) शरीर पर तूने जो अपने मन-भाये शृ गार किये हैं, वे शृ गार, शृ गार नहीं हैं। तू जो-जो शृ गार कर रही है, वे व्यर्थ ही हैं। अपने नायक के भाये हुए शृ गार कर। जिन भूषणों की ब्रज-भूषण (श्रीकृष्ण) के नेत्रों को भूख नहीं है अर्थात् जिन्हें वे नहीं देखना चाहते, वे शृ गार क्या तुझसे उतारे नही जाते ? सब ससार तो तेरी सुगध से सुगधित है इसलिए तेरे सुगध लगाने पर सुगध मे सुगध व्यर्थ ही हो जाती है। हे सखि ! सब भूषण तो तुझसे सुशोभित होते हैं तू तो भूषणों से भूषित नही होती।

२ उदाहरण (नायक का विच्छित्त हाव)—सवैया

पान न खाय न पाग रची, पलटै पट चित्त कहां धरिकै।
कण्ठ सिरी वनमाल मनोहर, हार उतारे धरे अरिकै।
चन्दन चित्र कपोलनि लोपि, सुलोचन अंजन सों भरिकै।
अग सुभाइ सुवास प्रकाशित, लोपि हौ केशव क्यों करिकै ॥४७॥

(नायिका नायक से कहती है कि) तुमने जो पान नही खाये, न पगड़ी पहनी, वस्त्र बदल डाले, गले से कठ-श्री (गहना) तथा मनोहर वनमाला हठ पूर्वक उतार डाली, गालों से चंदन को चित्र दूर कर दिया, और अंजन भरी आखों से काजल पोंछ डाला, सो ठीक है परन्तु हे कृष्ण ! तुम्हारे अंगों की जो स्वाभाविक सुगंध है, उसे कैसे मिटाओगे ?

११ मोट्टाइत हाव लक्षण—दोहा

हेला लीला करि जहां, प्रकटत सात्विक भाव।
बुधि बल रोकत सोहिये, सो मोट्टाइत हाव ॥४८॥

जहाँ पर लज्जा और लीला के कारण जो सात्विक भाव प्रकट होते हैं, उन्हें बुद्धि-बल से रोका जाता है, वहाँ मोट्टाइत हाव कहलाता है।

उदाहरण (नायिका का मोट्टाइत हाव)

खेलत हैं हरि बागे बने जहां बैठी तियारति ते अति लोनी।
केशव कैसहू पीठि में, दीठि, परी कुच कुंकुम की रुचि रोनी।
मातु समीप दुराई भले जिनि, सात्विक भावन की गति होनी।
धूर कपूर की पूरि विलोचन, सूंघ सरोरुह ओढ़ि उढ़ोनी ॥४६॥

श्रीकृष्ण बाग मे खेल रहे थे, वही पर रति से भी बढकर सुन्दरी बैठीं हुई थी। उसी समय किसी प्रकार उसकी दृष्टि उनकी पीठ पर पड़ी जिस पर कुचों का कुकुम लगा हुआ था। माता के समीप अपने सात्विक भावो को अच्छी तरह से छिपाने के लिए उसने कपूर की धूल आँखों मे भर ली और कमल सूंघ कर ओढनी ओढ ली।

२ उदाहरण (नायिका का मोट्टाइत हाव—सवैया

भोजन कै बृषभानु सभामँह, बैठे हैं नद सदा सुखकारी।
गोप घने बलवीर बिराजत खात बनाइ बिरी गिरि धारी।
राधिका झांकि झरोखनि ह्वै, कवि केशव रीझि गिरेसु विहारी।
शोर भयो सकुचे समुझै हरवाहि कह्यो हरि लागि सुपारी ॥५०।

नद को सदा सुख देने वाले श्रीकृष्ण भोजन करके बृषभानु की सभा में बैठे थे। उनके चारों ओर गोप तथा बलवीर (श्री बलराम जी) बैठे हुए थे और श्रीकृष्ण पान का बीड़ा खा रहे थे। उसी समय श्रीराधा जी ने झरोखों होकर झाका तो वह रीझ कर गिर पड़े। (उन्हें सात्विक भाव हो आया)। यह देखते ही सभा मे शोर मचा तो उनकी समझ मे आया और वह सकुचित होकर (बात छिपाने के लिए) धीरे से बोले—'मुझे सुपाड़ी लग गई है।'

१२ कुट्टमित हाद-लक्षण - दोहा

केलि कलह में शोभिये, केलि कलह पट रूप।
उपजत है तह कुट्टमित हाव कहत कवि भूप ॥५१॥

जहा केलि-कलह मे कलह का केवल ऊपरी दिखावा हो, वहा कुट्टमित हाव कहा जाता है।

उदाहरण (प्रिया जी का कुट्टमित हाव)—सवैया

पहले हठि रूठि चली उठिपीठि दै, मैं चितई सखि तैं नलखीरी।
पुनि धाइ धरी हरिजू की भुजान नैं, छूटिबे को बहु भाँति भखीरी।
गहि कै कुच-पीडन दत नखक्षत, बैरिन की मरयाद नखीरी।
पुनि ताहि को पान खवावत हैं, उलटी कछु प्रीति की रीति लखीरी ॥५२॥

(एक सखी अपनी सखी से कहती है कि पहले तो वह हठपूर्वक रूठ कर तथा पीठ देकर उठ गई। हे सखि! यह कार्य मैने देखा, तू नही देख पाई। फिर श्रीकृष्ण ने उसे दौड़ कर पकड लिया और वह उनकी भुजाओं से छूटने की अनेक भाति चेष्टाएं करने लगी। उन्होंने उसे पकड़ कर कुच-पीड़न, दत-नख क्षत आदि से बहुत पीड़ित करते हुए बैरियों जैसा बर्त्ताव किया। परन्तु वह उसे फिर पान खिलाते हैं। हे सखी! यह प्रेम की कुछ उलटी रीति है।

२ उदाहरण (नायक का कुट्टमित हाव)—सवैया

देखतही जिहि मौन गही, अरु मौन तजे कटुबोल उचारे।
सौहै किये हू न सौहै कियो, मनुहार करे हू न सूधे निहारे।
हाहा कै हारि रहे मनमोहन, पांइ परे जिन्ह लातनि मारे।
मण्डतु है मुह ताही को अक लै, है कछू प्रेम के पाठ निन्यारे ॥५३॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि) पहले तो जिसे देखते ही चुप्पी साध ली और जब मौन छोड़ा तो कड़वे वचन कहे। शपथ दिलाने पर भी नेत्र सामने नहीं किये और विनती करने पर भी सीधी दृष्टि से नहीं देखा। मन मोहन (श्रीकृष्ण) गिड़गिड़ा कर हार गये। पैरों पड़े तो लातों से मारा। अब उसी का मुख गोद में लेकर भूषित कर रहे हैं, यह तो प्रेम का निराला पाठ है।

१३ बोध-हाव-लक्षण—दोहा

गूढ-भाव के बोध जहँ, केशव समुझत कोइ।
तासों बोधक हाव यों, कहत सयाने लोइ ॥५४॥

जहा पर एक के गूढ भाव को दूसरा समझ लेता है, वहा पर चतुर लोग बोध हाव कहते हैं।

उदाहरण (नायिका का बोध-हाव)—सवैया

बैठी हुती वृषभानु कुमारि, सखीन की मण्डली मण्डि प्रवीनी।
लै कुम्हिलान सो कज परी, इक पायन आइ गुवारि नवीनी।
चदन सों छिरकी वह वाकहँ, पानदये करुणा रस भीनी।
चदन चित्र कपोलन लोपि कै, अजन आँजि विदा कर दीनी ॥५५॥

प्रवीया वृषभानु कुमारि (श्रीराधा जी) सखियों की मण्डली मे भूषित होकर बैठी हुई थी। उसी समय एक मुरझाया हुआ कमल किसी ग्वालिन ने आकर उनके पैरों तले डाल दिया। इस पर श्रीराधा जी ने करुणारस मे भर कर उसके ऊपर चदन छिड़क दिया, पान खाने को दिये, चदन से कपोलों को चित्रित करके अच्छी तरह मुख पर उसे पोत दिया, आखों मे अंजन लगाया और तब विदा कर दिया।

२ उदाहरण नायक का बोध-हाव—सवैया

सखि मोहन गोप सभा महँ गोबिंद बैठे हुते द्युति को धरि कै।
जनु केशव पूरण चन्द्र लसै, चित चोर चकोरन को हरि कै।
तिन को उलटो करि आन दियो किछु नीरज नीर नयो भरि कै।
कहि काहे तैं नेकु निहार मनोहर, फेरि दयो कलिका करि कै ॥५६॥

हे सखी ! मोहन (श्रीकृष्ण) गोपों की सभा में शोभा धारण किये हुए बैठे थे। वह ऐसे ज्ञात होते थे मानों चकोरों का चित्त हरण करके पूर्ण चन्द्रमा बैठा हुआ है। उसी समय किसी ने आकर पानी भरा हुआ कमल उलटा करके दे दिया। उन्होंने उसे देखा और कली की तरह बनाकर लौटा दिया, यह क्यों ? बतला।

दोहा—*राधा राधा-रमण के, कहे यथा विधि हाव।*
ढिठई केशवदास की, छमियो कवि कविराव ॥५७॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैंने श्रीराधा जी और श्रीकृष्ण के हावों को यथा विधि कहा। मेरी इस धृष्टता को कवि तथा कवीन्द्रगण क्षमा करें।

केशवदास के अनुसार

(१) भाव

१ विभाव २ अनुभाव ३ स्थायीभाव ४ सात्त्विभाव ५ व्यभिचारीभाव

(२) विभाव

१—आलम्बन के स्थान

(१) युवादम्पति
(२) रूप जाति लक्षण युक्त सखिया
(३) कोयल
(४) वसंत ऋतु
(५) पुष्पित कुसुम
(६) भौंरे
(७) उपवन
(८) जलचर युक्त सरोवर
(९) निर्मल कमल
(१०) चातक
(११) भ्रमर-गुंजार
(१२) बिजली
(१३) सजल बादल
(१४) आकाश
(१५) सुन्दर शैय्या
(१६) दीपक
(१७) सुगंधित कमरा
(१८) पान चर्वण
(१९) सुन्दर वेशभूषा
(२०) नृत्य वीणादि वादन

२—उद्दीपन के स्थान

(१) अवलोकन
(२) आलाप (बात-चीत)
(३) रमन
(४) नख-दाँत-दान
(५) चुबन
(६) मर्दन
(७) स्पर्श आदि अनेक

३—स्थायी-भाव

(१) रति
(२) हास
(३) शोक
(४) क्रोध
(५) उत्साह
(६) भय
(७) निन्दा
(८) विस्मय

केशवदास जी ने इन्ही ८ स्थायी भावों का वर्णन किया है। निर्वेद का उल्लेख नहीं किया।

४—सात्त्विक भाव

[१] स्तंभ [२] स्वेद [३] रोमांच [४] स्वरभंग [५] कंप [६] विवरणता [७] अश्रु और [८] प्रलाप

५—व्यभिचारी भाव

[१] निर्वेद [२] ग्लानि [३] शंका [४] आलस्य [५] व्रीड़ा या लज्जा [६] चपलता [७] श्रम [८] मद [९] चिंता [१०] क्रोध [११] गर्व [१२] हर्ष [१३] आवेग [१४] निन्दा [१५] निद्रा [१६] विवाद [१७] जड़ता [१८] उत्कंठा [१९] स्वप्न [२०] प्रबोध [२१] विषाद [२२] अपस्मार [२३] मति उग्रता [२४] आश [२५] तर्क [२६] अति व्याधि [२७] उन्माद [२८] मरण [२९] भय [३०] आधि [मानसिक व्याधि]

केशवदास के अनुसार हाव

[१] हेला [२] लीला [३] ललित [४] मद [५] विभ्रम [६] विहित [७] विलास [८] किल किंचित [९] विच्छित [१०] बिब्वोक [११] मोट्टाइत [१२] कुट्टमित और [१३] बोध

सातवाँ प्रकाश

अष्ट नायिका वर्णन—दोहा

ये सब जितनी नायिका, वरणी मति अनुसार।
केशवदास बखानिये, ते सब आठ प्रकार ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि अपनी बुद्धि के अनुसार जितनी नायिकाओं का मैंने वर्णन किया है, वे सब आठ प्रकार की होती हैं।

दोहा

स्वाधिन पतिका, उत्कल, बासक शय्या नाम।
अभिसंधिता बखानिये, और खंडित वाम ॥२॥
केशव प्रोषित प्रेयसी, लब्धा विप्र सु-जान।
अष्ट नायिका ये सबै, अभि सारिका बखान ॥३॥

स्वाधीन पतिका, उत्का, वासक शय्या, अभिसधिता, खंडिता, प्रोषित पतिका, विप्रलब्धा और अभिसारिका ये सब आठ प्रकार की नायिकाएं हैं।

पहला भेद स्वाधीन पतिका लक्षण—दोहा

केशव जाके गुण बँध्यो, सदा रहै पति सग।
स्वाधिन पतिका तासु को, बर्णत प्रेम-प्रसग ॥४॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिस नायिका का पति उसके गुणों से बँधा हुआ सदा साथ रहता है, उसे स्वाधीन पतिका कहते हैं। मैं उसी के प्रेम-प्रसंग का वर्णन करता हूँ।

उदाहरण (प्रच्छन्न स्वाधीन पतिका)—सवैया

केशव जीवन जो ब्रज को, अरु जीवहु तें अति बापहि भावै।
जापर देव अदेव कुमारिनि, वारत भाइ न बार लगावै।
ता हरि पै तू अहीर की बेटी, महाउर पाँइ झवाँइ दिवावै।
मैं तो बची अब हाँसिन हीं, अस और जु देखै तो ऊतरु आवै ॥५॥

(एक सखी नायिका से कहती है कि) जो ब्रज के लोगों के जीवन हैं और जिनको उनके पिता प्राणों से भी बढ कर चाहते हैं। जिनकी माता देव और अदेव कुमारियों को उनपर निछावर करते देर नही लगाती। उन्हीं श्रीकृष्ण से, तू अहीर की बेटी, पैरों को झाँवे से साफ कर, महावर लगवाती है। मैं तो हँसी-हँसी मे उत्तर पाने से बच गई अर्थात् मुझे तो तूने हँस कर टाल दिया परन्तु ऐसा और कोई देखेगा तो तुझे उत्तर देना ही पडेगा।

दूसरा उदाहरण (प्रकाश स्वाधीन पतिका)—कवित्त

चोली के से पान तेहिं करत समार कोई,
मुकुट ज्यों तो ही माहँ मूरति समानी है।
तैं ही त्रिय देवता पै पायो पति केशोदास,
पतिनी बहुत पति देवता बखानी है।
तेरे मनोरथ रथ भागीरथ पाछैं-पाछैं,
डोलत गुपाल मेरो गंग कै सो पानी है।
ऐसी बात कौन जु न मानी सुन मेरी रानी,
उनके तौ तेरी बानी बेद कैसी बानी है ॥६॥

(एक सखी नायिका से कहती है कि) पिटारी के पान की भाँति वह तुझे सम्हालते रहते हैं और दर्पण की भाति तेरी मूर्ति उनके हृदय में समाई रहती है। वैसे तो अनेक पतिव्रता स्त्रियां वर्णित की गई हैं, परन्तु त्रिदेवता का व्रत करके तूने ही मन-चाहा पति पाया है। तेरे मनोरथ रूपी भगीरथ के पीछे पीछे मेरे गोपाल गंगा जी के पानी की भाति घूमते रहते हैं। हे मेरी रानी! सुन ऐसी तेरी कौन सी बात है जो उन्होंने न मानी हो। उनके लिए तेरी वाणी वेद-वाणी जैसी मान्य रहती है।

दूसरा भेद उत्का नायिका लक्षण — दोहा

कौन हूँ हेत न आइयो, प्रीतम जाके धाम।
ताको शोचति शोच हिय, केशव उत्का वाम ॥७॥

(कोई नायिका अपनी सखी से कहती है कि) या तो उन्हे मेरा स्मरण नहीं रहा या किसी ने भुलावा दे दिया या मार्ग भूल गये जिसमें भटकते फिरते है या भयभीत होगये या किसी से भेट हो गई अथवा कोई स्त्री मन मे बस गई। हे सुख दायिनी सखी! बतला, वह मार्ग मे आरहे हैं अथवा आगये अथवा आवेगे? नन्द कुमार (श्रीकृष्ण) अभी तक नही आये, सोच तो, किस विचार से उन्होंने देर लगाई है?

तीसरा भेद वासकशय्या लक्षण—दोहा

वासक शय्या होइ सो, कहि केशव सविलास।
चितै रहै गृह द्वार त्यौं, पिय आवन की आस ॥१०॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो नायिका विलास युक्त होकर प्रियतम के आने की आशा मे, गृह द्वार की ओर देखती रहे, वह वासक शय्या कहलाती है।

उदाहरण—कवित्त

चन्दन विटप वपु कोमल अमल दल,
कलित ललित लटा लपटी लवंग की।
केशौदास तामें दुरी दीप की शिखा सीदौरि,
दुराक्त नील वास द्युति अंग-अग की।
पौन पान पक्षी पशु शब्द जित तित होत,
तित-तित चौंकि-चौंकि चाहे चोप संग की।
नन्द लाल आगम विलोकै कुज जाल बाल,
लीन्ही गति ते ही काल पजर पतग की ॥११॥

(एक सखी नायिका के सम्बन्ध में दूसरी सखी से कहती है कि) जहाँ चदन वृक्ष मे कोमल स्वच्छ पत्ते हैं और उसमें सुन्दर लौंग की लताएँ लिपटी हुई है, वहीं पर वह दीप शिखा जैसी नायिका दौड़ कर छिप गई और अपने नीले वस्त्र मे अंगों की द्युति छिपाने लगी या उसका

नीला वस्त्र उसके अंगों की द्युति को छिपाने लगा। जिधर-जिधर वायु, पत्ते, पक्षी और पशु के शब्द होते हैं उधर-उधर चौंक-चौंक कर देखती है तथा उसे प्रियतम के संग की लालसा है। नंदलाल (श्रीकृष्ण) के आगमन को देखते-देखते कुंजों के जाल में छिपी हुई उस बाला की दशा पिंजड़े में पड़े हुए पक्षी जैसी हो गई है।

दूसरा उदाहरण (प्रकाश वासकशय्या)—सवैया

भावत है सुख बैन सखी सहुलास हिये अभिलाषन जोहै।
कोमल हासनि नैन विलासनि अंग सुवासनि कै मन मोहै।
मूरति वंत किधौं तुलसी-तुलसी वन में रति भूरति कोहै।
कुंज विराजति गोपबधू, कमला जनु कुंज कुटी महं सोहै ॥१२॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) हे सखी! जो यह सुख देने वाले वचन कहती है और अभिलाषाओं से भरे हुए आनन्दित हृदय से देखती है। जो अपने कोमल हास-विलास तथा अंग की सुगंध से मन मोह रही है, कौन है। या तो यह मूर्त्तिमान तुलसी है अथवा कोई तुलसीवन में रति है? कुंजों में सुशोभित होती हुई यह गोपबधू ऐसी ज्ञात होती है मानों कुंज कुटी में लक्ष्मी जी शोभायमान हैं।

चौथा भेद अभिसंधिता लक्षण—दोहा

मान मनावत हू करै, मानद को अपमान।
दूनो दुखता बिनल है, अभिसंधिता बखान ॥१३॥

जो नायिका मान करने पर मनाने वाले का अपमान करे और फिर उसके बिना दुखी हो, वह अभिसंधिता कहलाती है।

उदाहरण (प्रच्छन्न अभिसंधिता) कवित्त

बार-बार बोले जब बोल्यो नाहिं बासिसतू,
बालक ज्यों बोलिवे को कत बिललातु है।
ज्यों-ज्यों पांइ परे, त्यों-त्यों पाहन तैं चीन भयो,
होत कहा अब किये माखन ज्यों गातु है।
केशौदास सब छाँड़ि कियो हठ ही सों हेत,

ताहू छाँडि जिय, जिये बिन कहा जातु है ।
ऐसे प्यारे पियहि सा मान्यो न मनायो तब,
ऐसी तोहि बूझये तू पीछे पछितातु है ॥१४॥

(अपने मन को सम्बोधित करती हुई नायिका कहती है कि) हे मन ! जब वह (प्रियतम) बार-बार बोले तब तो तू मूर्ख नहीं बोला, अब बच्चो की भाति बोलने के लिए क्या रो रहा है । जैसे जैसे वह तेरे पैरों पड़े, वैसे-वैसे तू पत्थर से भी कठोर हो गया, अब मक्खन जैसा कोमल बनने से क्या होता है । उस समय तो तूने सब कुछ छोड कर केवल हठ ही किया, अब उसे भी छोड़ कर जी, बिना जिये तेरा क्या बिगड़ता है ? प्रियतम ने तुझे इतना मनाया पर तू नहीं माना । तुझे ऐसा करना चाहिए कि अब पीछे पछताता है ।

दूसरा उदाहरण (प्रकाश अभिसंधिता)—सवैया

पाइ परै हू तैं प्रीतम त्यों, कहि केशव क्योंहूँ न मैं दृग दीनी ।
तेरी सखी शिष सीखी न एक हू, रोष ही की शिष सीख जु लीनी ।
चन्दन चन्द समीर सरोज, जरै दुख देह भई सुख हीनी ।
मैं उलटी जु करी, विधि मोकहँ न्या नहीं उलटी विधि कीनी ॥१५॥

(नायिका अपनी सखी से कहती है कि) प्रियतम के मेरे पैरों पड़ने पर भी मैंने उनकी ओर दृष्टि तक नहीं की । हे सखी ! मैंने तेरी शिक्षा नहीं मानी और क्रोध की ही शिक्षा को मान लिया । अब तो चदन, चंद्रमा और कमल से देह जली जाती है और मारे दुखों के देह सुख हीन होगई है । मैंने जो उल्टी बात की थी उसका भगवान् ने उल्टा फल उचित ही दिया है ।

पाँचवा भेद खंडिता लक्षण—दोहा

आवन कहि आवै नहीं, आवै प्रीतम प्रात ।
ताके घर खंडिता, कहै सुबहु विधि बात ॥१६॥

जब (रात को) आन की बात कहकर प्रियतम न आकर प्रात.काल उसके घर आवे और वह उसे अनेक बातें सुनावे तब वह नायिका खंडिता कहलाती है ।

उदाहरण (प्रच्छन्न खंडिता)—कवित्त

आँखिन जो सूझत, न कानन तैं सुनियत,
केशौदास जैसे तुम लोकन में गाये हौ ।
बश की विसारी सुधि, काग ज्यों चुनत फिरै,
जूठे सीठे सीथ ईठ ढीठ ठाये हौ ।
दूरि-दूरि करत हू, दौरि-दौरि गहो पांइ,
जानो ना कुठौर ठौर जान जिय पाये हौ ।
काको घर घालिबे को, बसे कहाँ घनश्याम,
घू-घू की घुसन प्रात भये ग्रह आये हौ ॥१७॥

(नायिका प्रात. काल आये हुए श्रीकृष्ण की भर्त्सना करती हुई कहती है कि) वैसे तुम जैसा तुम्हारा गान इस लोक मे होता है, वैसा मैंने न आखों से देखा और न कानों से सुना । तुमने अपने वंश की मर्यादा को भी भुला दिया और कौओं की तरह जूठे तथा फीके टुकड़े चुन चुन कर खाते फिरते हो । दूर दूर करने पर भी तुम दौड़-दौड़ कर पैर पकड़ते हो । तुम्हें उचित अनुचित स्थान का ज्ञान नहीं है । हे घनश्याम ! किसके घर मे रात भर बसे रहे जहा से प्रात. काल होने पर घुग्घू की तरह घुसने के लिए मेरे घर पर आये हो ।

दूसरा उदाहरण (प्रकाश खंडिता)—सवैया

आजु कछू अखियां हरि और सी, मानो महावर माहँ रँगी हैं ।
मेरी सौं मोसहु मानहु बेगि, हिये रस रोष की रीति जगी हैं ।
मोहन मोही सी लागति मोहिं, इते पर मोहन मोहिं लगी है ।
मेरे वियोग के तेज तची किधौं, केशव काहू के प्रेम पगी है ॥१८॥

(नायिका श्रीकृष्ण को सम्बोधित कर कहती है कि) हे कृष्ण ! आज मुझे तुम्हारी आखे कुछ और भाति की लग रही हैं, मानो महावर के रंग मे रगी हुई हैं। तुम्हें मेरी सौगध मेरे सामने स्वीकार करो, तुम्हारे हृदय मे रोष का रग जमा हुआ सा लगता है। मोहन ! मुझे तो ये मोही हुई सी जान पड़ती हैं। इतने पर भी मुझे मोहने पर लगी हुई है। ये मेरे वियोग मे तप्त हुई हैं या किसी के प्रेम मे पगी हुई हैं ?

छठा भेद प्रोषित पतिका लक्षण—दोहा

जाको प्रीतम दै अवधि, गयो कौन हू काज।
ताको प्रोषित प्रेयसी, कहि वर्णत कविराज ॥१६॥

जिसका प्रियतम लौटने की नियत अवधि देकर किसी कार्य वश बाहर गया हो, उसे प्रोषति पतिका या प्रोषित प्रेमसी नायिका कह कर कविराज गण वर्णन करते हैं।

उदाहरण—सवैया

केशव कैसहूँ पूरब पुएय मिल्यो मन भावतो भाग भलोरी।
जानै को माइ कहाभयो कैसेहूँ, औधिको आधिक घौस ढलोरी।
ताकहँ तू न अज्यों हँसि बोलै, जऊ मेरो मोहन पांइ पलोरी।
काठहु ते हठ तेरो कठोर, इवै विरहानल हू न जलोरी ॥२०॥

(नायिका की सखी उससे कहती है कि) ज्ञात नही किस पूर्वजन्म के पुएय से आज तेरा भाग्यवान् मन चाहा पति मिला है। न जाने किस कारण से क्या हो गया जिससे नियत अवधि से आधा दिन अधिक लग गया। (अब उसी अपराध के कारण) तू अब भी उनसे हँस कर नहीं बोलती, यद्यपि मेरा मनमोहन तेरे पैरों पड़ रहा है। तेरा हठ तो, ज्ञात होता है कि, काठ से भी अधिक कठोर है जो इतने दिनों की वियोगाग्नि मे भी नहीं जला।

दूसरा उदाहरण (प्रकाश प्रोषित पतिका)—सवैया

औधि दै आये उहा उनको, यह भोजन कै अब ही हम ऐहैं।
ताकहँ तौ अबलौं बहराइ कै, राखी स्ववाइ मरुकरि सैहैं।

बैठे कहा इनके ढिग केशव, जा उनही कोऊ जाउजु कैहै।
जानत हौ उन आँखिन ते अंसुवा उमहे बहुलो पुनरै हैं ॥२१॥

(सखी श्रीकृष्ण के पास जाकर नायिका की ओर से कहती है कि) आप तो उसे अवधि देकर यह कह कर आये थे कि "मैं भोजन करके अभी आता हूँ।" उसे मैंने किसी तरह बहला कर अब तक रखा और बड़ी कठिनाई से सुला कर आई हूँ। आप अब इनके पास क्या बैठे हैं, जाइए। कोई आपसे यह न कहेगा कि आप जाइए। आप तो जानते ही हैं कि उन आखों मे आँसू उमड़ने पर फिर कभी रुकते हैं?

सातवा भेद विप्रलब्धा लक्षण—दोहा

दूती सो सकेत बढ़ि, लैन पठाई आप।
लब्ध विप्र सोजानिये, अन आये सताप ॥२२॥

जब दूती से संकेत स्थान पर आने की बात कहकर नायक न आवे, और उसके न आने पर उसे दुःख हो तब वह विप्रलब्ध नायिका कहलाती है।

उदाहरण (प्रच्छन्न विप्रलब्धा)—सवैया

शूल से फूल सुबास कुबास सी, भाकसी सेभये मौन सुभागे।
केशव बाग महाबन सो, जुर सी चढी जोन्ह सबै अँगदागे।
नेह लग्यो उर नाहर सों, निशि नाह घरीक कहूँ अनुरागे।
गारी से गीत बिरी बिषुसी, सिगरेई शृंगार अँगार से लागे ॥२३॥

(एक सखी अपनी दूसरी सखी से नायिका के सम्बन्ध मे कहती है कि) आज रात घड़ी भर के लिए नायक कहीं पर अनुराग में लीन हो गये तो उसे फूल शूल जैसे ज्ञात होने लगे, सुगंधित वस्तुएं, दुर्गन्धित जॅचने लगीं और घर भाड़सा प्रतील होने लगा। बाग घोर जंगल से लगने लगे और चादनी बुखार सी प्रतीत होकर शरीर को जलाने लगी। गीत गाली के समान, पान का बीड़ा विष सा और सोलही शृंगार अंगार से लगने लगे।

दूसरा उदाहरण प्रकाश विप्रलब्धा—कवित्त

देखत उदधि-जात, देखि-देखि निज गात,
चंपक के पात कछू लिख्यो है बनाइकै।
सकल सुगंध ढारि फूल माल तोरि डारि,
दूतिका को मारि पुनि बीरी बिगराइकै।
लै-लै दीह सांस तजि विविध विलास हास,
केशोदास है उदास चली अकुलाइ कै।
सेइ कै संकेत सूनो कान्ह जूसों बोल ऊनो,
मोसों कर जोर दूनों-दूनों दुख पाइ कै ॥२४॥

(नायिका सकेत स्थल पर गई तो उसे सूना पाया और चन्द्रमा को देखा तो दूनी दुखी हुई। उसी का वर्णन करती हुई सखी से कहती है कि) चन्द्रमा को देखते ही उसने अपने अंगों की ओर देख-देख कर चंपक के पत्ते पर कुछ बनाकर लिखा। जितनी सुगधित वस्तुए थीं उन्हें फेंक दिया, फूल-माला तोड़ डाली, दूती को मार लगाई और फिर पानों के बीड़ों को छितरा दिया। तब विविधि हास-विलासों को छोड़ लम्बी सास भरी और व्याकुल होकर उदास-मना हुई तथा संकेत स्थल को सूना पाकर और कृष्ण की ध्वनि से रहित देखकर, मुझसे दोनों हाथ जोड़े (कि धन्य है सखी तेरी ही शिक्षा से तो यहाँ आई थी) और दूना दुख पाती हुई चली गई।

आठवा भेद अभिसारिका लक्षण—दोहा

हित तैं कै मद मदन तैं, पिय सों मिलैजु जाइ।
सो कहिये अभिसारिका, बरणी त्रिविधि बनाइ ॥२५॥

जो नायिका प्रेम से, गर्व से और काम से पीड़ित होकर प्रियतम से जाकर मिलती है, वह अभिसारिका कहलती है। ये तीन प्रकार की वर्णित की गई हैं। प्रेम से मिलने वाली प्रेमाभिसारिका, गर्व से मिलने वाली गर्वाभिसारिका और कामवश मिलने वाली कामाभिसारिका।

उदाहरण प्रच्छन्न प्रेमाभिसारिका—कवित्त

लीनै हमैं मोल अनबोले जान्यो मोह,
मोहिं घनश्याम घन माला बोलि ल्याई है।
देखो ह्वै है दुख जहाँ देह ऊन देखी परै,
देखो कैसे बाट केशो दामिनी दिखाई है।
ऊँचे नीचे बीच कीच कटकन पीडेपग,
साहस गयद गति अति सुखदाई है।
भारी भयकारी निशि निपट अकेली तुम,
नाहीं प्राणनाथ साथ प्रेम जोस हाई है ॥२६॥

नायक नायिका से कहता है कि—'तुमने मुझे मोल लेलिया जो तुम बिना बुलाये आगई, तुम्हारा प्रेम मैंने जान लिया।' नायिका उत्तर देती है कि—"हे घनश्याम! मुझे तो घनमाला बुलालाई है" नायक ने कहा—'तुम्हे बड़ा दुख हुआ होगा और जहाँ देह भी नहीं दिखलाई पडती वहाँ तुमने मार्ग कैसे देखा होगा?' नायिका ने उत्तर दिया—'मुझे बिजली ने मार्ग दिखलाया।' नायक ने फिर कहा—'ऊँचे नीचे मार्ग मे कीच तथा काँटों से तुम्हारे पैर पीड़ित हुए होंगे।' नायिका बोली 'साहस तथा हाथी जैसी मेरी चाल ने मुझे बड़ा सुख दिया।' नायक ने कहा—'इस भयकरी घोर निशा में तुम बिलकुल अकेली हो।' नायिका ने कहा—'नही प्राणनाथ! मेरा सहायक जो प्रेम है।'

दूसरा उदाहरण प्रकाश प्रेमा भिसारिका—कवित्त

नैनन की अतुराई बैननि की चतुराई,
गात की गुराई ना दुरति द्युति चालकी।
आपनै चरित्रन कै चित्रित विचित्रित चित्र,
चित्रिनी ज्योसो है साथ पुत्रिका गुवाली की।
चन्द्र के समान चारु चाय सों चढी फिरत,

करिकै तिहारे मृगनैननि की पालकी।
कीजै पयपान अरु खैये प्राण प्यारे,
आई है जू आई है अलबेली ग्वालिकालिकी ॥२७॥

(सखी नायक से कहती है कि) जिसके नेत्रों की आतुरता, वचनों की चतुरता, शरीर की गुराई तथा चाल की द्युति छिपाये नहीं छिपती। जो अपने चरित्रों से विचित्र रूप से चित्रित है और जिसके साथ चित्रिसी जैसी गोपी सुशोभित है। जो आपके मृग जैमे नेत्रों की पालकी पर चन्द्रमा के समान चढी हुई फिरती है, वही कल की ग्वालिन आज आई है अत हे प्राणनाथ! आप पानी पीजिए तथा पान खाइए।

उदाहरण प्रच्छन्न गर्वाभिसारिका—सवैया

लाडिली लीली कलोरी लुरी, कहं लाललुके कहाँ अगिलगइ कै।
आजु तौ केशव कैसहूँ लेरुवै, लागन देत न कैसहूँ आइकै।
वेगि चलौ चलि आई बुलावन, दौरि अकेलियौ हौं अकुलाइ कै।
भूलहू गोकुल गांउ में, गोविंद, कीजै जरुर न गाइ चराइकै ॥२८॥

(नायिका की सखी नायक से कहती है कि) जो नीली, कलोर आदि प्यारी गाये हैं, उन्हें अग लगाकर कहाँ छिप गये? हे केशव! आज तो बछड़े किसी प्रकार भी गायों से नहीं लगते। इसलिए शीघ्र चलो! मैं घबड़ाकर तुम्हें अकेली ही बुलाने को दौड़ी आई हूँ। हे गोविंद, इस गोकुल गाँव में गाये चराकर भूलकर भी अभिमान न कीजिए।

दूसरा उदाहरण प्रकाश गर्वाभिसारिका—कवित्त

चन्दन चढाइ चारु अम्बर कै उर हार,
सुमन शृ गर सो है आनँद के कद ज्यों।
वारौ कोरि रतिनाथ बीन मैं बजावैं गाथ,
मृगय मराल साथ बानी जग बन्द ज्यों।
चौंक-चौंक चकई सी सौतिन की दूती चलीं,

सोतैं भई दीन अरविंद गति मन्द ज्यों।
तिमिर वियोग भूले लोचन चकोर फूले,
आई ब्रज चन्द्र चंद्रावलि चलि चन्द ज्यों ॥२९॥

केशवदास शुक्ला गर्वाभासारिका का वर्णन करते हुए कहते हैं कि) उस नायिका ने चन्दन लगाया, सुन्दर वस्त्र पहने, हृदय मे हार पहना, और फूलों की आनन्ददायक माला सुशोभित की। (प्रियतम) ने उस पर सैकड़ो रतियो को निछावर किया। वह जब वीणा बजाती तो जग वन्दिनी वाणी (सरस्वती) की वीणा सी प्रतीत होती और सैकड़ो हिरन, हस, उसके साथ चलते थे। सौतो की दूतिया चकई की भाँति (क्योंकि रात का समय था) चौंक-चौंक कर चली गई। सौतों की द्युति कमल की द्युति की भाँति मन्द पड़ गई। लोचन रूपी चकोर तिमिर वियोग व्यथा को भूल गये। वह ब्रजचन्द (कृष्ण) के पास इस प्रकार चली जैसे चाँदनी चन्द्रमा के पास जाती हो।

उदाहरण प्रच्छन्न कामा भिसारिका—कवित्त

उरझत उरग चपत चरणनि फणि,
देखत विविधि निशिचर दिशि चारिकै।
गनत न लागत मुसल धार वरषत,
झिल्ली गन घोष निरघोष जल वारिकै।
जानति न भूषण गिरत पट फाटत न,
कन्टक अटकि डर उरज उजारिकै।
प्रेतनी पूछै नारि कौन पै तै सीख्यो यह,
योग कैसोसार अभिसार-अभिसारकै ॥३०॥

(नायिका जिस समय अभिसार को गई उस समय) उसके पैरों में साप उलझ गये। बहुतेरे उसके चरणों से दबकर कुचल गये। उसे इस तरह जाते देख निशाचर चारो ओर से देखने लगे। मूसल धार वर्षा को वह कुछ भी नहीं गिनती थी, झिल्लियों की झकार तथा बादलों की कड़क पर भी ध्यान न देती थी। गिरते हुए गहनों तथा

फटते वस्त्रों का उसे ध्यान न था। हृदय मे काटे लग-लग कर उरोजों (कुचों। को जो उजाड़े डालते थे, उसका भी ध्यान न था। उसे इस प्रकार जाते देख प्रेतिनी नारिया पूछने लगी कि "हे अभिसारिका! तू ने योग का सार यह अभिसार कहा सीखा?"

दूसरा उदाहरण कामाभिसारिका—सवैया

गोप बडे बडे बैठे अथाइनि, केशव कोटि सभा अवगाहीं।
खेलत बालक जाल गलीन मैं, बाल बिलोकि बिलोकि बिकाहीं।
आवति जाति लुगाई चहूं दिशि, घू घुट मैं पहिचानत छाही।
चंद सो आनन काढ़ि कहा चली, सूझत है कछु तोहि कि नाहीं॥३१॥

(नायिका की सखी उससे कहती है कि) बड़े-बड़े गोप (जन्होंने करोड़ो सभाए देखीं हैं, अथाइयों (चौपालों) मे बैठे हुए हैं। बालको का समूह गलियों मे खेल रहा है और स्त्रिया देख-देख कर बिकी जाती हैं (आश्चर्य करती हैं)। अथवा जिन बालकों को देखकर स्त्रिया बिक जाती है, वे गलियों में खेल रहे हैं। स्त्रियाँ चारों ओर आ-जा रही हैं, वे घूघट मे तेरी छाया को पहचान रही हैं। यह अपना चन्द्रमा सा मुख निकाल कर कहाँ जा रही हैं, तुझे कुछ सूझता है या नही?

दोहा

केशवदास सु तीन विधि, बरणी स्वकिया नारि।
परकीया द्वै भांति पुनि, आठ आठ अनुहारि॥३२॥

केशवदास' कहते हैं कि मैने स्वकीया नायिका के तीन प्रकारों का वर्णन किया। परकीया के फिर दो भेद होते हैं और फिर उनके आठ-आठ प्रकार होते हैं।

दोहा

उत्तम मध्यम अधम अरु, तीन तीन विधि जानि।
प्रकट तीन सै साठ त्रिय, केशवदास बखानि॥३३॥

'केशवदास' कहते हैं कि ये सभी नायिकाए तीन प्रकार की उत्तम, मध्यम और अधम होती हैं। इनके सब मिलाकर तीन सौ साठ

भेद होते हैं। (स्वकीया के तीन भेद और तीनों के चार-चार प्रकार हुए तो कुल मिलकर बारह हुई। दो भेद परकीया के हुए तो चौदह हो गई। एक सामान्या को जोड़ा तो पन्द्रह हुए। फिर आठ भेद जोड़े एकतो सौ बीस हुए। वे एक सौ बीस भेद उत्तम, मध्य, अधम भेदों को जोड़ने पर तीन सौ साठ हुए)।

उत्तमालक्षण—दोहा

मान करै अपमान तैं, तजै मान तैं मान।
पिय देखे सुख पावही, ताहि उत्तमा जान ॥३४॥

जो नायिका प्रियतम के अपमान करने पर भी उसका मान करे और मान करने पर अपना मान छोड़ दे तथा प्रिय को देखने पर सुख पावे, उसे उत्तमा समझना चाहिये।

उदाहरण—सवैया

होहि कहा अब के समुझे, समुझै न तबै जब हौं समुझाये।
एक ही बंक विलोकन मांह, अनेक अमोल विवेक बिकाये।
जान पनौ न जनावहु जू जन, मावधि लौं उहि जानिहौं पाये।
बात बनाइ बनाइ कहा कहौ, लेहु मनाइ मनाइ ज्यों आये ॥३५॥

(सखी नायक से कहती है कि) अब समझने से क्या होता है, तब तो तुम नहीं समझे, जब मैंने तुम्हें समझाया था। उसकी एक ही तिरछी चितवन में अनेक अमूल्य विवेक बिक जाते हैं। अब अपना अज्ञानपन न जनाओ, उसे जन्मावधि मे अच्छी तरह जान पाओगे। बाते बना-बना कर क्या कहते हो, जैसे मनाते आये हो वैसे उसे मना लो।

मध्यमा नायिका लक्षण—दोहा

मान करै लघु दोष तैं, छोडे बहुत प्रणाम।
केशवदास बखानिये, ताहि मध्यमा बाम ॥३६॥

'केशवदास कहते हैं कि' जो नायिका थोड़े दोष के लिए भी मान करे और बहुत विनती-प्रणाम करने पर उस मान को छोड़े, उसे मध्यमा

नायिका कहा जाता है।

उदाहरण—सवैया

भूलहूँ सूघे नहीं चितयो, इहि कान्ह कियो लचि लालचके तौ।
हा हा कै हारि रहे मनमोहन, पांय परे त्यों परेई रहे तौ।
हौंतौ कहै तबहीं की विलोकति, हो तो गुमान क्यों याहिधौं के तौ।
लांबी लटै अरु पातरी देह, जु नेक बडी विधि आंखिन दे तौ ॥३७॥

(एक सखी अपनी दूसरी सखी से कहती है कि) इसने भूलकर भी सीधी दृष्टि से नहीं देखा, तभी कान्ह (श्रीकृष्ण) ने नम्र होकर कितना ही लालच दिया। मनमोहन (श्रीकृष्ण) हा-हा करके (गिड़-गिड़ाकर) हार गये और पैरों पड़े तो पड़े ही रह गये। मैं तो यह तभी से देख रही हूँ कि इसे इतना गुमान कहाँ से हो गया। जैसे विधि ने इसे लम्बी लटें और पतली देह दी है वैसे कहा बड़ी आँखे भी देता तो क्या बात थी। (यह उनके प्रेम को देख पाती)।

अधमा नायिका लक्षण—दोहा

रूठै बारहिं बार जो, तूठै बैही काज।
ताही को अधमाकरण, कहैं महाकविराज ॥ ३८॥

जो नायिका बिना कारण बार-बार रूठे और संतुष्ट हो, उसे बड़े-बड़े कविराज अधमा कहते हैं।

उदाहरण—सवैया

कारौ कपट्ट जु कान्ह सों कीजैरी, बाँरौ वे बोल कुबोल कसाई।
फाटौ जु घूंघुट ओर और सोई, दीठि फुरौ अधि कौजु धँसाई।
केशव ऐसी सखीन को मारौ, सिखै कै करैहित ही जु हँसाई।
बारहि बार को रूसि बो वारो, बहाउ जु बुद्धि वियोग बसाई ॥३९॥

उस कपट को काट डालना चाहिए जो नायक से किया जाय। उन दुर्वचनों को पीस देना चाहिए जो कसाई जैसे कठोर हों। उस घूघुट को फाड़ देना चाहिए जो प्रियतम की ओट करे। उस दृष्टि को फोड़ देना चाहिए जो अधिक धँसे अर्थात् अच्छी न लगे। 'केशवदास' कहते

है कि ऐसी सखियों को मार डालना चाहिए जो प्रेम की शिक्षा देकर हँसी करावें। बार-बार के रूठने को जला देना चाहिए और उस बुद्धि को बहा देना चाहिए जो वियोग करावे।

दोहा

इहिविधि नायक नायिका, वर्णों सहित विवेक।
देश, काल, वय भावतें, केशव जानि अनेक ॥४०॥

'केशवदास' कहते हैं कि इस प्रकार मैंने विवेक सहित नायक नायिकाओं का वर्णन किया जिन्हे देश, काल और वय के अनेक प्रकार का जानना चाहिए।

अगम्या—दोहा

तजि तरुणी सम्बन्ध की, जानि मित्र द्विजराज।
राखि लेइ दुख भूखते, ताकी तिय तैं भाज ॥४१॥
अधिक वरण अरु अग घरि, अंत्यज, जन की नारि।
तजि विधवा अरु पूजिता, रमियहु रसिक विचारि ॥४२॥

जो स्त्री अपने सम्बन्ध की हो, मित्र की हो, ब्राह्मण की हो, जिसे दुख या भूख से रख लिया हो, उन्हें छोड़ देना चाहिए अर्थात् उनके साथ संभोग नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार हे रसिकगण! अपने से ऊँचे वर्ण की, कम या न्यून अंगवाली अंत्यज की, विधवा और पूजनीया स्त्रियों को समझ बूझकर रमण करना।

दोहा

यह संयोग शृंगार की, केशव वरणी रीति।
विप्रलभ शृगार की, रीति कहौं करि प्रीति ॥४३॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैंने संयोग शृंगार की रीतियों का वर्णन कर दिया। अब प्रेम के साथ विप्रलम्भ शृंगार की रीति का वर्णन करता हूँ।

(१) अष्ट नायिकाएँ

(१) स्वाधीनपतिका (२) उत्का (३) वासकशय्या (४) अभिसंधिता

(५) खंडिता (६) प्रोषित प्रेयसी (७) विप्रलब्धा (८) अभिसारिका

(स्वकीया, परकीया तथा सामान्या)

प्रेमाभिसारिका गर्वाभिसारिका कामाभिसारिका
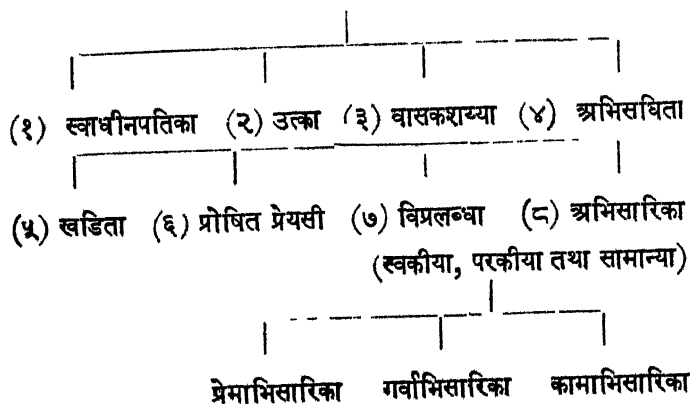
(२)—(१) उत्तमा, (२) मध्या (३) अधमा तीन भेद

(३) अगम्या

(१) उत्तम वरण वाली

(२) न्यून वरण वाली

(३) अंत्यज जन की स्त्री

(४) विधवा

(५) पूज्य व्यक्ति की स्त्री

आठवाँ प्रकाश

विप्रलम्भ शृंगार लक्षण—दोहा

बिछुरत प्रीतम प्रीतमा, होत जु रस तिहिं ठौर।
विप्रलम्भ तासो कहैं, केशव कवि शिर मौर ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि प्रियतमा के एक दूसरे से बिछुड़ने पर जिस रस की उत्पत्ति होती है, उसे विप्रलम्भ कहते हैं।

विप्रलम्भ शृंगार के भेद—दोहा

विप्रलम्भ शृंगार को, चारि प्रकार प्रकाश।
प्रथम पूर्व अनुराग पुनि, करुणा मान प्रवाश ॥२॥

विप्रलम्भ शृंगार के चार भेद होते हैं। पहला पूर्वानुराग दूसरा करुणा, तीसरा मान और चौथा प्रवास।

पूर्वानुराग लक्षण—दोहा

देखत ही द्युति दम्पतिहि, उपज परत अनुराग।
बिन देखे दुख देखिये, सो पूरब अनुराग ॥३॥

जहाँ दम्पति को एक दूसरे की द्युति देखते ही अनुराग उत्पन्न हो जाता है और बिना देखे दुख होता है, वहाँ पूर्वानुराग कहलाता है।

उदाहरण नायिका का प्रच्छन्न पूर्वानुराग—कवित्त

फूलन दिखाउ शूल, फूलत है हरि बिन,
दूरि करि माला बाला व्याल सो लगति है।
चॅवर चलाउ जिन बीजन हलाउ मति,
केशव सुगन्ध वायु वाइ सी लगति है।
चन्दन चढ़ाउ जिन ताप सी चढति तन,

कुमकुम न लाउ अग आग सी लगति है।
बार-बार बरजति बावरी है वारौ आन,
बिरी ना खवाउ वीर विष सी लगति है ॥४॥

(नायिका अपनी सखी से कहती है कि) मुझे फूल न दिखला, वे मुझे शूल जैसे लगते हैं। पुष्प माला को दूर रख, वह मुझे साँप जैसी लगती है। चँवर मत चला, पंखा मत झल, इनकी सुगन्धि वायु से पागलपन सा सवार होता है। चन्दन मत चढा, क्यों कि उससे, ज्वर सा चढ जाता है। कुकुम मत लगा, उससे आग सी लगती है। मैं तुझे बार-बार मना करती हूँ, क्या तू बावली (पागल) है। हे सखी ! पान का बीडा न खिला, मुझे विष जैसा लगता है।

दूसरा उदाहरण नायिका का प्रकाश पूर्वानुराग—सवैया

केशव कैसहू ईठन दीठ हू, दीठ परै ईठ कन्हाई।
ता दिन ते मन मेरो को आनि, भई सो भई कहि क्योंहूँ न जाई।
हो हिंगी हांसी जो आवै कहू कहि, जानिहि तू हित बूझन आई।
कैसे मिलौंरी मिलै बिन क्यों रहों, नैननि हेत हिये डरु माई ॥५॥

(नायिका अपनी सखी से कहती है कि) जब से किसी प्रकार मेरे इष्ट कन्हाई (श्रीकृष्ण) मेरी दृष्टि मे पड़े, तब से मेरे मन की कुछ दूसरी ही दशा हो गई है जो कही नहीं जाती। यदि तू इस बात को कहीं कह आवेगी तो हँसी होगी। तुझे अपना हितू (हित चाहने वाली) जानकर तुझ से हित की बात पूछने आई हूँ। मैं उनसे कैसे मिलूँ, न मिलूँ तो रहूँ कैसे। हे सखी ! नेत्रों में तो उनके प्रति प्रेम है पर हृदय मे डर लगता है।

तीसरा उदाहरण नायक का प्रच्छन्न पूर्वानुराग – कवित्त

एक समै वृषभानु सुता, सजनी गन में जननी सँग बैसी।
जात उहैं चितयो जिहि रीति, सु प्रीति हिये कहि जाइ न तैसी।
ता दिन ते जग की युवतीनि, लगावत केशव बात अनैसी।
चाहि फिर्यो चित चक्र चहू, न कहू द्युति देखिए वा मुख कैसी ॥६॥

(नायका अपनी सखी से कहता है कि) एक समय वृषभानु सुता (राधा) अपनी सखिया के बीच में, माता के साथ बैठी थी। मै उधर से जा रहा था। उसने जिस ढग से मुझे देखा और मेरे लिए अपने हृदय म प्रेम दिखलाया वह कहा नहीं जा सकता उसी दिन से जग की जितनी युवतिया हैं, वे अनेक अटपटी बाते लगाती फिरती हैं। मै चारों ओर चितरूपी चक्र पर घूमता फिरा अथवा मेरे चितरूपी चक्र ने चारों ओर चक्कर लगाकर देखा, परन्तु उसके मुख जैसि द्युति कहीं भी दिखलाई न पड़ी।

चौथा उदाहरण नायक का प्रकाश पूर्वानुराग—सवैया

भाँति भली वृषभानु ललीं, जब ते अँखियाँन सों जोरी।
भौंहे चढ़ाइ कछू डरपाइ, बुलाइ लई हँसि कै बश भोरी।
केशव काहू सों ता दिन ते, रुचि कैन बिलोकति के त्यों निहोरी।
लीलति है सब ही के शृंगरा, अँगारिन ज्यों बिन चन्द चकोरी ॥७॥

(श्रीकृष्ण अपनी सखी से कहते हैं कि) जिस समय से वृषभानु लली (राधा) ने मेरी आँखों से अपनी आँखें मिलाई हैं और भौंहें चढाकर तथा कुछ डराकर इन आँखों को बुला लिया और हँसकर इम भोली आँखों को अपने वश में कर लिया, उस समय से ये किसी को रुचि पूर्वक नहीं देखतीं, यद्यपि मैंने इनकी कितनी बार विनती की है। मेरी ये आँखें अब सब ही के शृंगार को इस प्रकार लील (निगल) लेती हैं जिस प्रकार चन्द्रमा के बिना चकोरी अगारों को लील लेती है।

दोहा

अवलोकन आलाप ते, मिलिबे को अकुलाहि।
होत दशा दश बिन मिले, केशव क्यों कहि जाहिं ॥८॥

जब देखने और आलाप सुनने से मिलने की व्याकुलता होती है तब बिना मिले दश दशाए होती हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि वे कैसे कहीं जा सकती हैं।

दशों दशाओं के नाम—दोहा

अभिलाषसु चिंता गुण कथन, स्मृति उद्वेग प्रलाप।
उन्माद व्याधि जडता भये, होत मरण पुनिआप ॥६॥

अभिलाषा, चिन्ता, गुण कथन, स्मृति, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, और जड़ता की दशा होने पर दशवी दशा मरण अपने आप हो जाती है।

पहली दशा अभिलाष लक्षण—दोहा

नैन बैन मन मिलि रहे, चाहै मिलन शरीर।
करि केशव अभिलाष यह, वर्णत हैं मति धीर ॥१०॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब नेत्र, वचन और मन मिल जाते हैं तब शरीर भी मिलना चाहता है। धीर-बुद्धि वाले इसी दशा को अभिलाष कहते हैं।

उदाहरण नायक की प्रच्छन्न अभिलाष—सवैया

सुधि बुद्धि पटी द्यु ति देह मिटी, दिन हीं दिन चाहिये बाढति सी।
कछु केशव आपने पेट की पीर, दुरावत पै मुख काढ़ति सी।
बिसलो सुख भूख सखी निशि नींद परी चित चाहत आढ़ति सी।
गिरिगो कछू गांठिते छूट छबीली, सुकाहे तैं डोलत डाढ़ति सी ॥११॥

(एक सखी दूसरी सखी से नायिका के सम्बन्ध में पूछती है कि) उसकी सुधि बुद्धि सब लुप्त हो गई है, देह की द्युति मिट गई है, यद्यपि उसे दिन प्रति दिन बढना चाहिए। वह अपने मन की पीड़ा को छिपाना तो चाहती है पर वह मुख से निकली सी पड़ती है। हे सखी! उसका सुख, उसकी भूख प्यास तथा रात की नींद सब विस्मृत हो गई है, ऐसा ज्ञात होता है अपने परिचित से मिलने के लिए संकेत-स्थल चाहती है। मानो कुछ गाठ से छूटकर गिर पड़ा है, ज्ञात नही वह छबीली दुखी सी होकर क्यों घूमती है।

उदाहरण दूसरा नायक की प्रकाश-अभिलाष—सवैया

जो कहौ देखे लगै दिख-साध, दिखावत हीं दिन ही दुख पैहौं।
याही में केशव देखिये बोलन, देखिहौं देखि सखी अब कैहौं।
जो उनकी दुरि देखिहौ देह ज्यों आपनी देहन देखन दैहौं।
देखिबे को बहरावति मोंहि सुहौं व कहा कछू देख ही लैहौ ॥१२॥

(नायिका सखी से कहती है कि) जो तू यह कहती है कि 'एक बार देखने पर देखने की चाट लग जायगी, और दिखलाने पर (उनके बिना देखे) तू दूना दुख पावेगी' सो इसके मेरे वचन को देख (उन पर विश्वास कर), हे सखि, इसबार देखकर फिर देखने की इच्छा न करूँगी। मै उनको छिपकर कर देख लूँगी और अपनी देह उन्हें न देखने दूँगी। तू मुझे देखने के लिए बहराती (भुलावे मे डालती) है, सो मैं क्या उन्हें अभी देख ही लूँगी।

उदाहरण तीसरा नायिका की प्रच्छन्न अभिलाष—सवैया

पांइ परौ बलि जाउँ मनोहरि, आपुन सी न करौ अब ताहू।
देखे आघत नहीं तिनके फिरि, बारिक धौं अन देख ही जाहू।
मोसों कही सु कही अब केशव, कैसहू कान्ह पत्याउ न काहू।
डाठहुगे जु कहूकहती चिरू, तातो हौ नेक सिराई धौं खाहू ॥१३॥

(सखी नायक के कहती है कि) मै तुम्हारे पैरौ पड़ती हूँ, बलिहारी जाती हूँ अब अपना जैसा उसे भी न बनालो। तुम उसे देखते-देखते अघाते नहीं, फिर कई बार तुम्हें बिना देखे ही लौटना पड़ेगा। हे केशव (श्रीकृष्ण) मुझसे जो कहा सो कहा—अब तुम तो किसी का विश्वास ही नहीं करते। इतनी रुचि दिखलाने से पछताओगे गर्म वस्तु को ठड़ा करके ही खाना अच्छा होता है।

उदाहरण चौथा नायक की प्रकाश अभिलाष—सवैया

है कोउ भाई हितू इनको, यह जाइ कहै किहिं वायु बहे हैं।
न्याय ही केशव गोकुल की, कुलटा कुल नारिन नाउ लहे हैं।

देंखिरी देखि लगाइट की, इत सोने सो धालिजु चाहि रहे है ।
को है री को जैसे जानत नाहि, न कालिह ही वाके सॅदेश कहे है ॥१४॥

(एक सखी दूसरी सखी से कृष्ण को सुनाती हुई कहने लगी कि) हे सखी ! कोई इनका ऐसा हितू है जो जाकर यह कहे कि ये किस वायु में बह रहे हैं। गोकुल की कुल नारियां और कुलटाए इनका नाम उचित ही लेती हैं। देख सखी, देख ! मार्ग में सोना सा डालकर कैसी टकटकी लगाकर देख रहे हैं (अर्थात् जैसे ठग मार्ग म सोना डाल-कर इस फिराक म रहते हैं कि जो कोई इसे उठावे, उसे पकड़े, वही इनकी दशा है)। यह सुन पास मे खड़े श्रीकृष्ण ने कहा—'ऐसा कौन है ?' सखियों ने उत्तर दिया—'जैसे तुम जानते नही, अभी कल ही तुम किसका सदेश कह रहे थे।'

दूसरी दशा चिन्ता लक्षण—दोहा

कैसे मिलिये मिले हरि, कैसेधौं बश होइ ।
यह चिंता चित चेत कै, बरणत हैं सब कोइ ॥१५॥

'श्रीकृष्ण से किस प्रकार मिला जाय, जिससे वह मिल जायं और किस प्रकार वश में आजावें' जब इस प्रकार की चिंता मन में होने लगती है तब सब कोई उसे 'चिंता' कहते हैं।

उदाहरण नायिका की प्रच्छन्न चिंता—दोहा

आपुनही तू आपनो, होत न देखे जाहि ।
आपुनही ते आपुनो, क्यों मन करि है ताहि ॥१६।

हे मन ! जब तू अपना होता हुआ भी अपना होता हुआ नहीं दिखलाई पड़ता (अर्थात् तू अपना होकर भी जब अपने वश में नहीं है) तब तू अपने आप (दूसरे को) अपना कैसे बनावेगा ?

दूसरा उदाहरण नायिक की प्रच्छन्न चिंता—कबित्त

प्रेम भय भूप रूप सचिव सॅकोच शोच
बिरह बिनोद फील पेलियत पच्चिकै ।
तरल तुरग अविलोकनि अनन्त गति,

रथ मनोरथ रहे प्यादे गुन गचिकै।
दुहूँ ओर परी जोर घोर घनी केशोदास,
होइ जीत कौन की को हारे जिय लचिकै।
देखत तुम्हें गुपाल तिहि काल उहि बाल
उर शतरज कैसी बाजी राखी रचिकै ॥१७॥

(सखी नायक से कहती है कि) हे गोपाल ! तुम्हें उह समय देखते ही उस बाला ने उसी समय से मन में शतरज जैसी बाजी रचा रखी है। उसका प्रेम ही उस शतरज का बादशाह है, सॅकोच और शोच मत्री हैं और बिरह विनोद फील (हाथी) हैं, उसकी तरस चितवन उस शतरज के घोड़े और मनोरथ गुणी प्यादे हैं। दोनो ओर भारी जोर पड़ा है। देखू किसकी जीत होती है और कौन नरम पड़ कर हारता है।

उदाहरण तीसरा नायिका की प्रच्छन्न चिंता—कवित्त

केशवदास सकल सुवास को निवास तन,
कहि कब भृकुटी बिलास त्रास छोलि है।
कैसो है सुदिन बड भागी अनुरागी जिहिं,
इंगवाके संग-सग लागी-लागी डोलि है।
ऐसी हू है ईश पुनि आपनै कटाक्ष मृग,
मद घन सार सम मेरे उर ओलि है।
दीप के समीप पुनि दीपति विलोक वह,
चित्र कैसी पूतरी सु क्यों हू हँसि बोलि है ॥१७॥

(नायक मन ही मन सोचता हुआ कहता है कि) ऐसा दिन कब आवेगा जब वह यह कहकर कि—'मेरा शरीर तो सभी तरह की सुगंधों का निवास है (सुगंध लगाने की आवश्यकता नहीं) अपने भृकुटी-विलास से मेरे त्रास को दूर करेगी। वह दिन कैसा भाग्यशाली और अनुरागी होगा जब वह मेरे संकतों पर मेरे साथ घूमती हुई फिरेगी। हे भगवान ! कभी ऐसा भी होगा जब वह अपने मृग मद (कस्तूरी) और कपूर जैसे

श्याम और श्वेत-नेत्र मेरे हृदय में बसा देगी। (फिर ऐसा दिन कब आवेगा) जब चित्र जैसे पुतली वह दीपक के निकट प्रकाश को देखकर मुझसे किसी प्रकार हँस-हँस कर बात चीत करेगी।

उदाहरण चौथा (नायक की प्रकाश चिंता)—सवैया

राधिका की जननी को जनी, कोऊ क्यों हूँ स्वयबर बात जनावै।
देवकुमार से गोप कुमारनि, मान दै दै वृषभानु बुलावै।
केशव कैसहू बालभली बहु, मालसु मेरे हिये पहिरावै।
तोहिं सखी समदै सँग वाके, सु क्यो सबे बनि आवै ॥१८॥

(नायक सखी से कहता है कि) कहीं ऐसा होजाय कि राधा की माता से कोई उसका स्वयंबर करने की बात कहे और देवकुमारों जैसे गोपकुमारों को वृषभानु जी आदर दे देकर बुलावे और वह सुन्दरी बाला राधा मेरे गले में जप माला पहनादे और तुझे दहेज में साथ भेजदें।

(तीसरी दशा गुण-वर्णन)—लक्षण

दोहा

जहँ-गुणगण मणि देह द्युति, वर्णत वचन विशेष।
ता कहँ जानहु गुण कथन, मनमथ मथन सुलेष ॥१६॥

जहां गुणों तथा देह की द्युति का वर्णन कामवश होकर किया जाता है वहाँ गुणकथन दशा होती है।

उदाहरण (नायिका का प्रच्छन्न गुण वर्णन) कवित्त

कीरति सहित नित केशव कुंवर कान्ह,
केवल अकीरति नृपति सोम मानिये।
छुवत चपक पात कुम्हि लात जात तन,
अति हरषित गात हरिजू को जानिये।
कोमल सुवास युत प्यारे के परम पाणि,
कंटक कलित नाल नलिन बखानिये।

लोचन विशाल चारु मदन गुपाल जू के,
मदन सरन दरशन रसहानिये ॥२०॥

(नायिका अपने मन मे श्रीकृष्ण की प्रशंसा करती हुई कहती है कि कुवर कान्ह (श्रीकृष्ण) कीर्त्ति सहित हैं और चन्द्रराज अकीर्त्ति वाले हैं (कलङ्कयुत हैं)। चपक के पत्ते का स्पर्श करते ही वह मुरझा जाता है और श्री कृष्ण का शरीर स्पर्श करने पर हर्षित होता है। प्यारे (श्री कृष्ण) के हाथ कोमल और सुगध युक्त हैं और कमल के काटेदार नाल हैं। मदन गोपाल (श्री कृष्ण) के नेत्र बड़े-बड़े हैं और कामदेव दर्शन रस से हीन है, उसे दिखलाई नही पड़ता (अतः सब तरह से मेरे प्रियतम ही श्रेष्ठ हैं)

उदाहरण दूसरा नायिका का प्रकाश गुण कथन—सवैया

खंजन हैं मन रंजन केशव, रंजन नैन किधौं मति जीकी।
मीठी सुधा की सुधारस की द्युति दंतन की किधौं दाड़िम हीकी।
चंद भलो मुख चंद सखी, लखि सूरति कामकी कान्ह की नीकी।
कोमल पंकज कै पद पंकज, प्राण प्यारे की मूरति पीकी ॥२१॥

(नायिका अपनी सखी से कहती है कि) हे सखी! बतला, खंजन के नेत्र मनरजन हैं या उनके नेत्र मनोहर हैं? उनके ओठ अधिक मीठे हैं या अमृत अधिक मीठा है? उनके दाँतों की चमक विशेष है या दाडिम (अनार) की? चन्द्रमा अच्छा है या उनका चन्द्रमा सा मुख अच्छा है? कामदेव की मूर्ति अच्छी है या श्रीकृष्ण की? कमल कोमल है या प्राण प्यारे के कमल जैसे चरण कोमल हैं? सखी उत्तर देती है कि तुम्हारे प्राण प्यारे प्रियतम की मूर्ति ही सबसे अच्छी है।

उदाहरण तीसरा नायक का प्रच्छन्न गुण कथन—सवैया

जो कहौं केशव सोम सरोज, सुधाधर मृणालि देह दहे हैं।
दाड़िम के फल श्रीफल विद्रुम हाटक कोटिक कष्ट सहे हैं।
कोक कपोत करी अहि केहरि, कोकिल कीर कुचील कहे हैं।
अंग अनूपम वा त्रिय के, उनकी उपमा कहँ वेई रहे हैं ॥२२॥

(नायक अपने मन से कहता है कि) यदि मै उसके मुख को चन्द्रमा जैसा कहूँ तो यह ओठों का उपमान मात्र है और यदि सरोज जैसे नेत्र कहूँ तो उन्हें भौंरे नित्य उनकी देह जलाते रहते हैं। यदि दाड़िम (अनार) जैसे उसके दाँत, श्रीफल से कुच, विद्रुम से ओठ बतलाऊँ तो ये बाजार मे बिककर करोड़ों कष्ट सहते हैं। यदि कोक (चकवा) से नेत्र, कपोत सी गर्दन, हाथी सी चाल, साँप सी चोटी, सिह जैसी कमर, कोकिल सी वाणी, कीर (तोते) जैसी नाक कहूँ तो ये सभी मलीन बतलाये गये हैं, इसलिए उस नायिका के सभी अग अनुपम हैं, और उनकी उपमा के लिए वे ही कहे जा सकते हैं।

उदाहरण चौथा नायक का प्रकाश गुण-कथन—सवैया

लोचन बीच चुभी रुचि राधे की, केशव कैसहूँ जात न काढी।
मानहु मेरे गही अनुरागिनि, कुंकुम पक अलंकित गाढ़ी।
मेरो यो लागि रही तनुता जनु यों द्युति नील निचोलकी बाढ़ी।
मेरे ही मानौ हिय कहं सूंघति, यों अरविंद दिये मुख ठाढ़ी ॥२३॥

(नायक सखी से कहता है कि) राधा की शोभा मेरे हृदय मे चुभ गई है जो किसी प्रकार निकाले नहीं निकलती। उसके शरीर मे जो कुकुम की पंक लगी हुई है वह मानों मेरा अनुराग लगा हुआ है। उसके नीले वस्त्र की जो शोभा है वह मानों मेरे शरीर का रंग ही है। वह जो कमल लिये हुए खड़ी हुई सूघती है वह मानो मेरे हृदय को ही सूघ रही है।

चौथी दशा स्मृति लक्षण

दोहा

और कछू न सुहाय जहँ, भूलि जाहि सब काम।
मन मिलिबे की कामना, ताहि स्मृति है नाम ॥२४॥

जब नायक या नायिका को परस्पर मिलने की कामना को छोड़कर और कोई कार्य अच्छा नही लगता और वे अन्य सब कामों को भूल जाते हैं तब उस दशा का नाम स्मृति है।

उदाहरण नायिका की प्रच्छन्न स्मृति—सवैया

बोल्यो सुहाइ न खेल्यो हँस्यो अरु देख्यो सुहाइ न दुःख बढ्यो सो।
नीकी यों बात सुनै समुझै न, मनो मन काहू के मोद मढ्यो सो।
केशव ढूंढत यों उर में मन मूढ भयो गुण गूढ़ पढ्यो सो।
कोक रै साज बजावै को बीनहि, वाको कछू चित चाक चढ्यो सो ॥२५॥

(एक सखी नायिका की दशा का वर्णन करती हुई दूसरी से कहती है कि) उसे न तो बोलना अच्छा लगता है न खेलना, न हँसना सुहाता है और न देखना अच्छा लगता है उसका दु:ख बढा हुआ सा रहता है। वह कोई की भली बात न तो सुनती है और न समझती है, उसका मन सदा किसी के मोद मे लगा हुआ सा रहता है। उसका मन किसी की ओर इस प्रकार ढूढता रहता है जिस प्रकार पढकर मूढ बन जाय। कौन साज सजावे, कौन वीणा बजावे, उसका चित्त तो मानो चाक पर चढा हुआ सा घूमता रहता है।

उदाहरण दूसरा नायक की प्रकाश स्मृति—सवैया

मेरे मिलाये ही ये मिलिहौं, मनमोहन सों मनमोहि न दीजै।
मौनहि मौन बने न कछू अब क्यों मन मानद के रस भीजै।
ऐस ही केशव कैसे जियो अहो पान न खात तौ पान्यो न पीजै।
जानि है कोऊ कहा करिहै तब सोचिन एक सकोच तौ कीजै ॥२६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) मेरे मिलाने से ही मिलोगी, मन मोहन (श्रीकृष्ण) से मोहित होकर अपना मन न दे डालो। मौन ही मौन रहने से कुछ काम न बनेगा, इसलिए उनके प्रेम में क्यों डूबी रहती हो। तुम पान नहीं खाती तो पानी भी क्या न पीना चाहिए, ऐसे कब तक जियोगी? तुम्हारे इस रहस्य को कोई जान लेगा तब क्या करोगी? नायिका बोली—'इसका एक भी शोच नहीं है।' तब सखी ने उत्तर दिया 'शोच नहीं तो सकोच तो करना ही चाहिये।'

उदाहरण तीसरा नायक की प्रच्छन्न स्मृति—सवैया

घोरि घनो घनसार घरयो, घनश्याम सुचदन छ्वै तन तूल्यो।
केशव कुन्ज को कूल चितै प्रतिकूल भये शुभ फूलन फूल्यो।
भूले से डोलत बोलत हू उत जात किते मन से भ्रम भूल्यो।
जानति हौं यह काहू को आजु मनोहरि हारहिं डोरन भूल्यो॥२७॥

(सखी नायक से कहती है कि) हे घनश्याम ! जो कहुत सा कपूर घिस कर चंदन लगाया, वह तुम्हारे शरीर में छूकर तुम्हारे ही शरीर के समान (जल कर) श्याम हो गया। सुन्दर फूलों से फूला हुआ कुन्ज तुम्हारे लिए प्रतिकूल हो गया। तुम भूले हुए से, बड़बड़ाते उधर ही चले जाते हो। तुम्हारा मन किस सभ्रम में भूला हुआ है। इन सब लक्षणों से यही समझती हूँ कि किसी मनोहरिणी के हार के डोरों में तुम्हारा मन झूल रहा है।

उदाहरण चौथा श्री कृष्ण की प्रकाश स्मृति—सवैया

वासन वास भयो विस केशव डासन डासन की गति लीने।
चंदन चांदनी ज्यों चित चाहै न चंद्रक वद चिता रस भीने।
पान न खात न पान करै कछु, हास विलास विदा कर दीने।
ऐसी है गोकुल को कुल की, जिन गोकुल नाथ के ढंग कीने॥२८॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि) उन्हें वस्त्र, भवन आदि विष से हो गये हैं और सुन्दर बिछौने डाँस (मच्छर) की भाँति काटते हैं। चंदन और चाँदनी को मन में चाहते तक नहीं और कपूर तो उन्हें चिता जैसा भयंकर लगता है। न तो वह पान खाते हैं, न कुछ पीते हैं और सभी आमोद-प्रमोदों को उन्होंने विदा कर दिया है। ऐसी गोकुल में कौन कुलवाली है जिसने गोकुल नाथ (श्रीकृष्ण) की ये दशायें कर दी हैं।

पाँचवीं दशा उद्वेग लक्षण

दुख दायक कहै जात जहँ, सुखदायक अनयास।
सो उद्वेग दशा दुसह, जानहु केशवदास॥२९॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब सुख देने वाली वस्तुएं दुखदायक बन

जाती हैं, तब उस दशा को 'उद्वेग' समझना चाहिए।

उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न उद्वेग—सवैया

चन्दन हीं विष कन्द है केशव, राहु यही गुण लीलिन लीनों।
कुभज पावन जानि अपावन, धोखे पियो पचि जानि न दीनों।
यासों सुधाकर शेष विषाधर नाम धरो विधि है विधि हीनो।
सूर सो भाई कहा कहिये, जिन पापु लै आपु बराबरि कीनो ॥३०॥

(नायिका अपने मन को सम्बोधित करती हुई कहती है कि) यह चन्द्रमा नहीं है, विष की जड़ है। इसके इसी दुर्गुण के कारण राहु ने इसे नहीं निगला। पावन अगस्त्य ऋषि ने इस अपावन को धोखे से पी तो लिया परन्तु पच नहीं जाने दिया। विधि (ब्रह्माजी) नियम विरुद्ध बातें करते जान पड़ते हैं जिन्होंने इसे सुधाधर और शेष जी को विषाधर नाम दिया है। और सूर्य से क्या कहा जाय जिन्होंने इस पापी को अपने बराबर का बना लिया है।

दूसरा उदाहरण नायिका का प्रकाश उद्वेग

केशव काल्हि विलोकि भजी वह, आजु विलोके बिनासो मरैजू।
बासर बीस बिसे विष मीड़िये, रात जुन्हाई की ज्योति जरैजू।
पालिक तैं भुव भूमि तैं पालिक, आलि करोरि कलाप करैजू।
भूषण देहि कछू ब्रजभूषण, दूषण देहि को हेरि हरैजू ॥३१॥

(सखी नायक से कहती है कि) जो कल आपको देखकर भाग गई थी, वह आज आपको बिना देखे मरी जा रही है। दिन में बीसों बिस्वे (पूर्ण रूपेण) विष में डूबी रहती है और रात को चाँदनी की ज्योति से जली जाती है। कभी पलंग से भूमि पर और कभी भूमि से पलंग पर आती है और अनेक कलाप करती है। हे ब्रजभूषण (श्रीकृष्ण)! आप उसे कुछ भूषण दीजिए, जिसे देख-देखकर वह अपनी देह का दूषण दूर करे।

तीसरा उदाहरण नायक का प्रच्छन्न उद्वेग—सवैया

मेघन ज्यों हँसि हंसन हेरत, हंसन ज्यों घनरूप न पीवें।
कंजन ज्यों चित चन्द न चाहत, चन्द ज्यों कंजनि क्यों हूँ न छीवें।

ताल तैं बागनि बाग तैं तालनि, ताल तमाल को जात निसोवे ।
कैसी है केशव वे युवतीं सुनि ऐसी दशा पिय की पल जीवें ॥३२॥

(प्रियतम की दशा को सुनाती हुई सखी नायिका से कहती है कि) जैसे बादल कभी हसों को हंस कर नही देखते और हॅस जैसे बादलों के रूप को नहीं चाहते। कमल जैसे चन्द्रमा को मन से नहीं चाहते और चन्द्रमा जैसे कमल को छूना नहीं चाहता। ताल से बाग और बाग से ताल को जाती हैं, जहाँ ताल और तमाल दोनों हैं वहाँ नही जाती। वे युवतियाँ कैसी हैं, जो अपने प्रियतम की ऐसी दशा देखकर एक पल भी जीवित रहती हैं।

चौथा उदाहरण नायक का प्रकाश उद्वेग—सवैया

शोचि सखी भरि लेत विलोचन, कांपत देखत फूले तमालहि ।
भूले से डोलत बोलत नाहिंन, बाग गये किधौं तेरेई तालहि ।
देख्यो जु चाहति देखे न आवति, ऐसे मैं हौं न दिखाउ री लालहि ।
आजु कहा देखे साधि लगी, जब देख्यो सुहाइ कछू न गुपालहि॥३३॥

(सखी नायिका से कहती है कि) हे सखी ! वह मेरे शोच में आँखें भर-भर लेते हैं और तमाल वृक्ष को फूला हुआ देखकर कापने लगते हैं। भूले से इधर-उधर घूमते फिरते हैं, कुछ बोलते नहीं, कभी बाग को जाते हैं, कभी तेरे तालाब पर। यदि तू देखना चाहती है तो देख क्यों नहीं आती ? मैं तो ऐसी दशा में गोपाल (श्रीकृष्ण) को न दिखाऊँगी। तुझे उनको आज ही देखने की लालसा क्यों लगी है, जब कि उन्हें कुछ नहीं सुहाता।

छठी दशा प्रलाप—दोहा

भ्रमत रहै मन भौंर ज्यों, है तन मन परताप ।
वचन कहै प्रिय पक्ष सों, तासो कहत प्रलाप ॥३४॥

जब किसी नायक या नायिका का मन भौंरे की तरह चक्कर खाता रहे और तन मन में दुख व्याप्त हो जाय तथा अपने प्रिय पक्ष की ओर से बातें करे तब उसे प्रलाप कहते हैं।

उदाहरण नायिका का प्रच्छन्न प्रलाप—सवैया

खेल न हासी न खोरि अटा उन, हेतु न बैर हियो कपै होसों।
लेनो न देनो हलाऊ भला उर, ना तो न गोत कहा कहौं तोसों।
आनि दियो सुख में दुख केशव, कैसे हँसोरी कहा कहौ तोसों।
नैननि नीर भरे कहै ग्वालिनि, देख्यो तै कान्ह कहा कह्यो तोसों ॥३५॥

(ये ऊपर लिखे हुये शब्द नायिका की प्रलाप दशा मे कहे हुए हैं, अत असबद्ध और निरर्थक हैं) अत उसकी दशा की चर्चा करती हुई एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि वह इन शब्दों मे बड़बड़ाती हुई कहती थी कि न खेल, न हासी, न भलाई, बुराई, न प्रेम न बैर। मेरा हृदय कँपता है। न लेना न देना, न नाता न गोत्र तुझसे क्या कहूँ? केशव (श्रीकृष्ण) ने मुझे सुख मे आकर दुख दे दिया। मैं कैसे हँसू, तुझसे क्या कहूँ?" इस तरह आँखों में आँसू भरे वह ग्वालिनी पूछने लगी कि 'तूने देखा, कृष्ण ने मुझसे क्या कहा?'

दूसरा उदाहरण नायिका का प्रकाश प्रलाप—सवैया

आलिन मांझ मिली हुती खेलत, जानै को कान्ह धौं आपे कहातैं।
डीठिहि डीठि पर्‌यो न कछू, सु ढिढाई गही हठि पीठ की घातैं।
गई गड़ि लाज नहीं हिय हौं तो, उठी जरि को सब कॉपनी यातैं।
इती रिस मैं न सही कबहू, पैरही बचिहौं अँखियान के नातैं ॥

(नायिका प्रलाप पूर्ण बचन अपनी सखी से कहती हुई कहती है कि) मैं सखियों के बीच में खेलती थी, पता नहीं कान्ह (श्रीकृष्ण) कहाँ से आ गये और मेरी दृष्टि से दृष्टि मिल गई और उन्होंने धृष्टता की। मैं तो लाज के मारे गड़ सी गई और जलने उठी, और इसी से शरीर में कंपनी छूट गई। मैंने तो इतना क्रोध कभी नहीं सहा। पर हाँ, बची तो आँखों के नाते ही बच पाई।

तीसरा उदाहरण नायक का प्रच्छन्न प्रलाप—सवैया

नील निचोल दुराइ कपोल, विलोकति हीं किये ओलिक तोही।
जानि परी हँसि बोलत भीतर, भाजि गई अवलोकति मोही।

बूझिबे की जक लागी है कान्हहि केशव कैरुचिरू पलिलोही।
गोरस की सों बबा की सों तोहि, कि बार लगी कहि मेरी सों कोही ॥३७॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) आज वह नीले वस्त्र मे अपने कपोलों को छिपाये हुए मुझे देखते ही भीतर भाग गई। रूप की लालचिन उसे कृष्ण को जानने की धुन लगी है। तुझे गोरस की सौगंध, बाबा की सौगंध मेरी सौगध बतला, किबाड़ के सहारे लगी हुई वह कौन थी ?

उदाहरण चौथा नायक का प्रकाश प्रलाप—कवित्त

मोहन मरीचिका सो हांस घनसार कैसो,
बास मुख रूप कैसी रेखा अवदात हैं।
केशौदास बेणी तौ त्रिवेणी सी बनाइ गुही,
जामें मेरे मनोरथ मुनि से अन्हात हैं।
नेह उरझे से नैन देखिबो को बिरुझे से,
बिझुकी सी भौंहैं उझके से उरझात हैं।
देवी सी बनाई विधि कौन की है जाई,
यह तेरे घर जाई आजु कहि कैसी बात है ॥३८॥

(इस कवित्त मे भी प्रलाप की सी असंबद्ध बातें हैं) मोहन मरीचि-का (किरण) जैसे हैं, उनकी हँसी कपूर जैसी है, मुख में सुन्दरता की सुन्दर सी रेखा है। बेणी त्रिबेणी जैसी बनाकर गूथी है जिसमें मेरे मनोरथ रूपी मुनि स्नान करते हैं। नेह मे उलझे हुए मेरे नेत्र देखने को व्याकुल से हैं। उलझाने वाली भौंहे, देखते ही उलझा लेती हैं। ब्रह्मा ने जिसे देवी जैसा बनाया है वह किसकी बेटी है। उसने तेरे घर जाकर आज क्या-क्या बातें कहीं।

सातवीं दशा उन्माद लक्षण—दोहा

तरकि उठै पुनि उठि चलै, चितै रहै सुख देखि।
सो उन्माद मनाव ही, रोवे हँसे विशेखि ॥३९॥

जब नायक या नायिका तर्क करे, फिर उठ कर चल दे, कभी सुख

देखकर एक टक देखने लगे, कभी रोने और हँसने लगे, तब उसे उन्माद कहा जाता है।

उदाहरण नायिका का उन्माद—सवैया

केशव सुबुद्धि सिद्धि हरि तुम बिन, वृथा अगाध राधिहि बाढ़ी।
छूटी लट लटकति करि तट चितवति नीठ-नीठ ठाढ़ी।
तरकि तोरति तनु तलकति, अति अपार उपचार निडाढी।
रुकसक काति लै श्वास अचेत, सुचेत तु प्रेत प्रेम गहि गाढी॥४०॥

उदाहरण दूसरा नायिका का प्रकाश उन्माद—सवैया

केशव चौंकति सी चित वैचिति पाघर कै तरकै तकि छाहीं।
बूझिये और कहै मुख और सु और की और भई छण माहीं।
डीठि लगी किधौ बाइ लगी, मन भूलि पर्यो कै कर्यो कछु काहीं।
घूघट की घट की पट की हरि आजु कछू सुधि राधि कै नाहीं॥४१॥

वह मन में बारबार चौंक उठती है और पृथ्वी पर पैर लड़खड़ाते हैं तथा छाया देखकर भड़क उठती है। मुख से कुछ और कहती है तथा समझती कुछ और है; छण भर में ही कुछ और की और हो गई है। न जानूँ उसे दृष्टि लग गई है या वायु लगी है, मन कहीं भटक गया है या किसी ने कुछ कर दिया है। हे कृष्ण आज तो राधा को घूघट की, घड़े की तथा वस्त्रों की कुछ सुध ही नहीं है।

उदाहरण तीसरा नायक का प्रच्छन्न उन्माद—सवैया

गूढ़ अगूढ़ प्रकाशित बातनि लोक अलोक की बात सरीसी।
रोवत हैं कबहूँ हँसि गावति, नाचत लाज की छाँह छरीसी।
काहू को शोचु सकोचु न केशव, देखति आवति देह नरीसी।
बाम कि बाइ कि काम की बाइ, किहै हरिकी भांति काहू हरीसी॥४२॥

(कृष्ण की उन्माद-दशा का वर्णन करती हुई सखी कहती है कि) वह गूढ़-अगूढ़ तथा लोक-अलोक बातों को प्रकाशित करते हैं और कभी रोते हैं, कभी हँसकर नाचने गाने लगते हैं मानो उन्होंने लज्जा की छाया तक को कुचल डाला है (लज्जा जैसे रह ही नहीं गई है)। उन्हें न किसी

का शोच है और न किसी का सकोच, उन्हे देखते ही देह भर सी आती है। पता नहीं कि उन्हें स्त्री की वायु लगी है या काम की वायु लगी है या किसी ने उनकी बुद्धि को हरण कर लिया है।

उदाहरण चौथा नायक का प्रकाश उन्माद—कवित्त

सजल चकित चितवत चित चहू दिशि,
चाइ चाइ रहैं मुख चपल चलत धाइ।
शोचत से मन मन कपत तपत तन,
केशौदास रोवत हँसत उठैं गाइ गाइ।
चलहि दिखाऊं तोहि देखत ही भयो मोहिं,
भयो सु कहन आई तो सों अलि अकुलाइ।
जैसे कछु आकु वाकु बकत है आजु हरि,
तैसे जिन नाव मुख काहू को निकसि गाइ ॥४३॥

(सखी कृष्ण की उन्माद दशा का वर्णन करती हुई दूसरी सखी से कहती है कि) वह आँखों को सजल किये हुये चारों ओर देखते हैं और बार-बार मुख खोल-खोलकर चंचलता के साथ दौड़ते हैं। कभी मन में कुछ सोचते से हैं, कभी उनका शरीर काँपने लगता है कभी रोते हैं, कभी हँसते हैं और कभी गाने लगते हैं। हे सखी! चल, मैं तुझे दिखाऊँ, उन्हें देखकर मेरी जो दशा हुई सो मैं घबड़ाकर तुझसे कहने के लिए आई हूं। आज जिस तरह श्रीकृष्ण अंटसंट बक रहे हैं, उस दशा में उनके मुख से कहीं किसी का नाम न निकल जाय।

आठवीं दशा व्याधि दशा लक्षण—दोहा

अंग बरण बिबरण जहां, अति ऊँची उश्वास।
नैन नीर परताप बहु, व्याधि सु केशवदास ॥४४॥

केशवदास कहते हैं कि जब अंग फीके पड़ जायं, ऊंची सांस आने लगे तथा आँखो में पानी आ जाय और बहुत दुःख हो तब व्याधि दशा कहलाती है।

उदाहरण नायिका का प्रच्छन्न व्याधि सवैया

बैन तज्यो उन बीन तैं बोल्योन बोलि विलोकति बुद्धि भगी है ।
बैन सुनै समुझै न तु बात हि, प्रेत लग्यो किधौं प्रीति जगी है ।
केशव वे तुहि तोहि रहै रट, तोहि इतै उनहीं की लगी है ।
वे भषैं-पान न पान्यो न तू सुतौं कान्ह ठगे कि तू कान्ह ठगी है ॥४५॥

(सखी नायिका के सम्बन्ध मे सशय करती हुई कहती है कि) उन्होंने वशी बजाना छोड़ दिया है और कुछ बोलते तक नहीं, मानो उनकी बुद्धि कहीं भाग गई है। न तो वह बातों को सुनते हैं और न समझते हैं। पता नहीं उन्हें प्रेत लग गया है या प्रीति जग उठी है। वे कृष्ण तुझे ही रटते रहते हैं और तुझे इधर उन्हीं की रट लगी है। वे न तो पान खावे हैं और न पानी पीते हैं; कृष्ण ने तुझे ठग लिया है या तूने कृष्ण को ठगा है।

उदाहरण दूसरा नायिका की प्रकाश व्याधि—सवैया

उनके तन ताप तैं तापि यै ह्यां, इनके तन तो अँसुवान अन्हैयें ।
ह्वां उनके उड़ जैये उसासनि, ह्यां इनके उपचार जुडैयें ।
केशव वे वृषभानु लली, नँद लाल नये पै निदान न पैयैं ।
एकहां बेर दूहूनि कहा भयो, भाई यहै चलि देखि डरैयैं ॥४६॥

(सखियाँ आपस में नायक नायिका की दशाओं का वर्णन करती हुई कहती हैं कि) उनके तन की तपन से यहाँ दुखी होना पड़ता है और यहाँ इनके शरीर को देखकर आँसुओं से नहाना पड़ता है। वहाँ उनकी दीर्घ श्वासों में उड़ना पड़ता है और यहाँ इनके लिए उपचारो का प्रबन्ध करना पड़ता है। वे वृषभानु लली-राधा हैं और ये नन्द के लाल श्रीकृष्ण हैं—दोनों का निदान समझ में नहीं आता। एक ही बार में दोनों को क्या हो गया। सखी ! चलकर देख, देखने पर डर लगता है।

नवीं दशा जड़ता लक्षण—दोहा

भूलि जाय सुधि बुधि जहां, सुख दुख होय समान ।
तासों जडता कहत हैं, केशवदास सुजान ॥४७॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब सुधि-बुधि भूल जाय और सुख-दुख समान जान पड़ने लगे तब वह जड़ता कहलाती है।

उदाहरण प्रिया की प्रच्छन्न जड़ता—सवैया

खरे उपचार खरी सियरी, सियरे तै खरोही खरोतन छीजै।
ऐसे मैं और किये तैं कछू, उपजै तैं सकेल कहा हम लीजै।
देखत ही यह कामलता, कुम्हिलानि यै जात कहा अब कीजै।
कौन पै जाउँ कहा करौं केशव, कैसे जियै वह, क्यों हम जीजै ॥४८॥

(एक सखी नायिका की दशा का वर्णन करती हुई श्रीकृष्ण से कहती है कि) वह गर्म उपचारों से शीतल हो जाती है और शीतल उपचारो से उसका शरीर गर्म हो-होकर क्षीण होने लगता है। ऐसी दशा में कुछ और का और हो जाय तो मैं क्या कर लूगी। मेरे देखते-देखते यह कामलता मुरझाई चली जाती है, मैं क्या करूँ, किसके पास जाऊँ? हे केशव! वह कैसे जीवित रहे, हम कैसे जियें?

दूसरा उदाहरण प्रिया की प्रकाश जड़ता—सवैया.

अँखियानि मिली, सखियान मिली, पतियान मिली बतियां तजिमोने।
ध्यान विधान मिली मनहीं मन, ज्यों मिले एक मनोमिल सोने।
केशव कैसहूं वेगि मिलौ, तन है है वहै हरि जो कछु होने।
पूरण प्रेम समाधि मिलै, मिलि जैहै तुम्हैं मिलि हौ तब कौने ॥४६॥

(सखी नायिका की दशा का वर्णन करती हुई श्रीकृष्ण से कहती है कि) आपके नेत्रों से उसके नेत्र मिलें, सखियाँ भी मिली, और मौन छोड़कर ध्यान विधान से मन ही मन मेल भी हुआ जैसे सोना मिलकर एक हो जाता है। हे कृष्ण! अब तो शीघ्र चलो; नहीं तो वही होगा जो होनहार है। पूर्ण प्रेमवश जब वह समाधि में आपसे मिल जायगी तब आप किससे मिलेंगे?

उदाहरण तीसरा नायक की प्रच्छन्न जड़ता—सवैया

पलही पल शीतल होत शरीर, विचारे सबै उपचार निदानें।
जौ करिये तन खंडन मंडन, चित्त कछू सुख दुःख न आनें।

केशव कान सुनै समुझै नहिं, बूझिये कौनहि को यह मानै।
योग लियो कै वियोग है काहू को, लोग कहा इन रोगनि जानै॥५०॥

(सखी नायक की दशा का वर्णन करती हुई कहती है कि) उनका शरीर पल-पल शीतल होता जाता है, जितने उपचार और निदान थे, सभी पर विचार किया जा चुका। उनकी यह दशा हो गई है कि शरीर पर कुछ भी खडन मडन किया जाय, उनके मन सुख-दुख कुछ भी नहीं होता। श्रीकृष्ण न तो कानों से सुनते हैं और न कुछ समझते हैं। अब किससे पूछा जाय, कौन इस बात को मानेगा। उन्होंने योग लिया है या उन्हे किसी का वियोग है, बेचारे लोग इन रोगों को क्या जाने!

उदाहरण चौथा नायक की प्रकाश जड़ता—सवैया

कान्ह के आसन वासन हीन, हुताशन मीत को प्राशन कीजै।
केशव इन्द्रिय शोधि सबै मन साधि समाधिन के रस भीजै।
जौ लौं भये हरि सिद्ध प्रसिद्धन, तौ लौं विलोकि अलोकन लीजै।
देवी करै तपि तो लगि वे, वरदान जो जिय-दान तौ दीजै॥५१॥

(सखी नायक की दशा का वर्णन करती हुई कहती है कि) श्रीकृष्ण आसन वस्त्र रहित होकर केवल वायु का आहार करते हैं। अपनी इन्द्रियों को शोधकर तथा मन को साध कर समाधि के रस में भीगे रहते हैं। जब तक वह प्रसिद्ध सिद्ध नहीं हुई तब तक जाकर दर्शन क्यों नहीं करतीं। देवी! जब तक वे तप करते है तब तक बरदान, नहीं तो प्राण दान तो दे आओ।

दशवीं दशा मरण लक्षण—दोहा

बनैं न केहूं मिलन जहँ, छल बल केशवदास।
पूरण प्रेम प्रताप तैं, मरण होहि अनयास॥५२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब छल-बल करके किसी प्रकार से भी मिलन नहीं हो पाता, तब मरण अनायास हो जाता है।

दोहा

मरण सु केशवदास पै, वरणों जाइ न मित्त।
अजर अमर तासौं कहैं, कैसे प्रेत चरित्त ॥५३॥

'केशवदास' कहते हैं कि हे मित्र ! मुझसे मरण दशा वर्णन नही की जा सकती। जिन्हें (जिन श्रीकृष्ण को) अजर-अमर कहते हैं, उनके प्रेत-चरित्र कैसे वर्णन करूँ। अथवा उनके प्रेत-चरित्र कैसे वर्णन किये जा सकते हैं।

दोहा

रति उपजै रमणीन के पहिले केशवदास।
तिनकी इङ्गित जान सखि, करन सुप्रेम प्रकाश ॥५४॥

'केशवदास' कहते हैं कि पहले तो रमणियों की रति भावना प्रकट होती है, तब उनका संकेत पाकर सखियाँ प्रेम का प्रकाश कर देती हैं।

दोहा

अति आदर अति लोभ तैं, अति संगति तै मित्त।
साधुन हूँ को होत है, केशव चंचल चित्त ॥५५॥

'केशवदास' कहते हैं कि अति आदर, अति लोभ और अतिसंगति से, हे मित्र !, साधुओं का भी स्वभाव चंचल हो जाता है।

दोहा

सुभग दशादश मैं कहीं, उपजै पूरण राग।
जिहिं विधि उपजै मान मन, वर्णहुं सुनहुं सुभाग ॥५६॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैंने पूर्ण प्रेम वश जो दश दशाएँ प्रकट होती हैं उनका वर्णन कर दिया। अब जिस प्रकार से विविधिमान उत्पन्न होते हैं उनका वर्णन करता हूँ। हे सुभाग ! सुनो।

—०—

नवाँ प्रकाश

मान लक्षण—दोहा

पूरण प्रेम प्रताप ते, उपज परत अभिमान।
ताकी छवि कै छोभ सो, केशव कहियत मान ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि पूर्ण प्रेम के प्रभाव वश जो शोभा का क्षोभ होता है, उसे 'मान' कहा जाता है।

मान भेद

मान भेद प्रकटहिं प्रिया, गुरु, लघु मध्यम जान।
प्रकटहि प्रीय प्रियान प्रति, केशव दास सुजान ॥२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो मान प्रियतम के प्रति प्रिया और प्रिया के प्रति प्रियतम प्रकट करते हैं, उसके गुरु, लघु और मध्यम ये तीन भेद होते हैं।

पहला उदाहरण प्रच्छन्न गुरुमान—सवैया

आजु मिले बृषभानु कुमारिहि, नन्द कुमार वियोग बितैके।
रूप की राशि रस्यो रस केशव, हास विलासनि रोसरितै के।
बागे के भीतर देखि हिये, नख नैनन वाइ रही सुइतै के।
फूलहिं में भ्रम भूलि मनो, सकुचै सरसी सह चन्द चितै के ॥४॥

आज वृषभानु कुमारि (राधा) से नन्द कुमार (श्रीकृष्ण) वियोग बिता कर मिले। उन्होंने रूप की राशि (राधा) के साथ हास-विलास पूर्वक रोष को दूर करके, रस कीड़ा का आनन्द लिया। इतने ही में उनके कुरते के भीतर उसने हृदय पर जो नख चिन्ह देखा तो आँखें फाड़ कर रह गई।

दूसरा उदाहरण नायिका का प्रकाश गुरु मान—सवैया

बूझत ही वह गोपी गुपालहि, आजु कछू हँसि कै गुण गाथहिं।
ऐसे में काहू को नाम सखी कहि, कैसे धौं आइ गयो व्रजनाथहिं।

खाति खवावति ही जु बिरी, सुरही मुख की मुख हाथ की हाथहिं ।
आतुर ह्वै उन आँखिन तै, अँसुवा निकसे अखरानि के साथहि ॥५॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि) आज वह गोपी गोपाल (श्रीकृष्ण) से हँसकर गुणो की चर्चा कर रही थी कि इतने मे, हे सखी ! ब्रजनाथ (श्रीकृष्ण) के मुँह से किसी काम नाम न जाने कैसे आ गया । अथवा 'सखी' कहकर किसी का नाम उनके मुह से न जानें कैसे निकल गया । बस, वह जो पान का बीणा खाती और खिलाती थी सो वह मुँह का मुह मे और हाथ का हाथ मे रह गया । वह आतुर हो गई और उसकी आँखों से नाम के अक्षरों के साथ ही साथ आँसू आ गये ।

तीसरा उदाहरण नायिका का प्राच्छन्न गुरुमान—दोहा

लोक लीक उल्लघि कछु, प्रिया कहै जब बैन ।
उपजत है गुरु मान तहँ प्रीतम के उर ऐन ॥६॥

जब नायिका लोक मर्यादा का उल्लंघन करके कुछ बात कहती है तब प्रियतम के हृदय मे गुरुमान उत्पन्न होता है ।

चौथा उदाहरण श्रीकृष्ण का प्रच्छन्न गुरुमान—कवित्त

ऐसी ऐसी रति राचे सोहन के साँचे श्याम,
देखौं आनि बाँचि किधौं कौन की यह चाठी है ।
सुनहु सभाग पाई रावरी ये पाग मँह,
कागद के रूपहू सुहाग की अँगीठी है ।
जानति हौं एही मग पायो है जनम जग,
औहू अबि लोकिन की बीथी तुम दीठी है ।
काहे को कहावत कटुक कालकूट सीए,
कह्यौ हरि हरै हाँसि हमको तो मीठी है ॥७॥

पाँचवा उदाहरण नायक का प्रकाश गुरुमान – कवित्त

आपनै सो आपने हीं आगे कहियत किधौं,
खोर के खजानै खोर ही में खेलियत हैं ।

डीठ हूँ तौरो कियत जोर कहू जाइकेशो,
और कहू नैन लै छूरी सों छोलियत है।
वेई घनश्याम जिन बिन घनी घरनीनि,
घरीहू में घने घनसार घोलियत है।
बोलत हौ कैसे ऐसे बोलौ जैसे बोलियत,
मोलहू लिये सों ऐसे बोल बोलियत है ॥८॥

(नायिका सखी से कहती है कि) जो अपना होता है उसके आगे बातें कहनी ही पड़ती हैं। गलियो के खजाने गलियो मे ही खोले जाते हैं। दृष्टि को तो हठपूर्वक रोकती हूँ, और क्या नेत्र कहीं छुरी से छोले जाते हैं। ये वे ही घनश्याम हैं जिसके बिना बहुत सी घरनियाँ घड़ी भर में ही बहुत सा कपूर घोलती हैं, इस पर सखी कहती हैं तुम कैसे बोल बोल रही हो, जैसे वचन कहने चाहिये, वैसी बातें करो, मोल लेने पर भी ऐसी बातें नही कही जाती।

दूसरा भेद लघुमान लक्षण—दोहा

देखत काहू नारि त्यों, देखै अपने नैन।
तहँ उपजै लघुमान कै, सुनै सखी के बैन ॥९॥

जब नायिका नायक को किसी अन्य स्त्री की ओर देखता हुआ अपनी आँखों से देखे या सखी की बातों से सुने तब लघुमान उत्पन्न होता है।

उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न लघुमान—सवैया

कान्ह तिहारी वे प्रान प्रिया के अयान सयान सबै मन माहीं।
मान किधौं अपमान अबै यह, मान लखौ अनुमाने न जाहीं।
सुख दु.ख केशव जानि परै, समुझै रिस हाँसी नही अरु माहीं।
यो सियरी खिन ह्वै खिन तातो है, ज्यौं बादलै बदरान की छाहीं ॥१०॥

हे कृष्ण तुम्हारी वे प्राण प्यारी के अयान और सयान सभी मेरे मन मे हैं। यह मान है अथवा अपमान है, स्वयं देखो, अनुमान से तो समझे नहीं जा सकते। हे कृष्ण! उसके सुख-दुख कुछ जान नहीं पड़ते। न हँसी और क्रोध मे क्या है यह जान पड़ता है। वह क्षण ही शीतल और

क्षण ही में गर्म होती है जैसे बादलों की छाया बदला करती है।

उदाहरण दूसरा नायिका का प्रकाश लघुमान - कवित्त

झूठे हू न रूठियै री ईठ सोई कहाव नेकु,
पीठ देइ ईठ कौन के भए अली।
काल्ह के तो नन्दलाल मोसों घालि लालि करै,
काल्हि न आई ग्वारि जो पै तूं हुती भली।
आजु हीं जु बीच परी बीच परिवे को माई,
आन रग आन जिय ज्यों कनेर की कली।
तेरे ही कहे की कोऊ साख है जू बूझियै री,
देखिये जु आँखि ताहि साखि की कहा चली ॥११॥

(सखी नायिका से कहती है कि) झूठ-मूठ व्यर्थ न रूठो, तुम्हारे वे ही इष्ट हैं। नायिका ने उत्तर दिया 'हे सखी! तनिक भी पीठ देने पर कौन किसका इष्ट हुआ है?' सखी बोली 'नन्दलाल' (श्रीकृष्ण)। नायिका ने कहा 'हे ग्वालिन! जो तू भली थी तो फिर कल ही क्यों न आई? अरी सखी तू आज ही हम लोगों में मत भेद उत्पन्न करने को आई है। कनैल की कली की तरह तेरा ऊपर कुछ और रंग है और भीतर मन में कुछ और?' सखी ने उत्तर दिया—'तेरे कहने की क्या साख (विश्वास) है जो माना जाय।' नायिका बोली—'जो बात आँखों से देखी है, उसके लिए साख (विश्वास) की क्या आवश्यकता है?'

उदाहरण तीसरा प्रिया का प्रच्छन्न लघुमान— दोहा

प्रिय को कह्यो कर्यो नहीं, प्रिय को नाहीं लाज।
उपजत है लघुमान तहँ, वर्णत है कविराज ॥१२॥

कविराज कहते हैं कि जहाँ प्रिया प्रियतम का कहा न करे और प्रियतम प्रिया की बात की लज्जा न रखे, वहाँ लघुमान उत्पन्न होता है।

उदाहरण चौथा प्रियतम का प्रच्छन्न लघुमान—सवैया

आगे कहा करिहौ अबहीं तौ, इतौ दुख दीनौ कह्यो बिन कीने ।
केशव कौन हूँ लाज की लाड़ते, भूलि गई तौ भई हित हीने ।
भेटत ही भरि अंक लला भरि जीभरि बोलीन बोल नवीने ।
देखे नहीं कबहूँ भरि आँखिनि, आजुही कैसे चलौ चितु दीने ॥१३॥

(सखी नायिका से कहती है कि) तुम आगे क्या करोगी; अभी तो उनका कहना मान कर तुमने इतना दुख दिया है । किसी लज्जा या प्रेम मे इतनी भूल गई कि प्रेम शून्य हो गई । लला (श्रीकृष्ण) तुम्हें जी भर अग लगाते हैं पर तुम मन से उनसे नई बात तक नही करती । तुमने तो उन्हें कभी आँख भर के देखा तक नहीं, अब आज ही तुम्हारा मन कैसे चलायमान हुआ है ?

उदाहरण पाँचवां प्रिया का प्रकाश लघुमान—सवैया

बोलि ज्यौं आए त्यौं बोलत नाहिन, मोसों कहा कछू चूक तिहारी ।
केशव कैसहू देख्यौ सुने बिन, जाने कहा कोऊ जीकि बिहारी ।
खीर सिराइ न जानति खाइ, नई यह भूख कि भांति तिहारी ।
कांचि ही दालहि चाहत चाखौ, सु आनत हूँ तुम कुंज बिहारी ॥१४॥

(सखी नायक को समझाती हुई कहती है कि) जैसे तुम मुझसे बोलते आये हो, उस तरह नही बोलते; मुझसे क्या तुम्हारी कुछ चूक हो गई है । हे बिहारी (श्रीकृष्ण) कोई बिना देखे-सुने, तुम्हारे मन की क्या जाने ? तुम खीर को ठंडा करके खाना नहीं जानते, यह तुम्हारी नई तरह की भूख है । हे कुञ्ज बिहारी ! तुम सामने आते ही कच्ची दाख ही चखना चाहते हो ।

तीसरा मध्यम मान लक्षण—दोहा

बात कहत तिय और सों, देखै केशवदास ।
उपजत मध्यम मान तहँ, मानिनि केसविलास ॥१५॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब नायिका किसी और स्त्री से बात करते हुए प्रियतम को देखती है, तब माननी के विलास पूर्ण मध्यम मान की

उत्पत्ति होती है।

उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न मध्यम मान—सवैया

कहो कान्ह कहाँ सिगरी निशि नाशी, सु तौ तुमहीं कहँ चाहतहीं।
तनु में नख रेख लिखी कहि केशव कटक कानन गाहतहीं।
कछु राती सी आंखि कहा भई ताती, तिहारे वियोग के दाहतहीं।
हिय वचक रीति रची जब रंचक, लाइ लई उरनाहतहीं ॥१६॥

जब नायिका ने पूछा कि—'कहो कृष्ण ! रात कहां बिताई ?' तो श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया—'तुम्हें चाहते-चाहते बिता दी।' नायिका बोली—'तुम्हारे शरीर में नख की रेखा कैसी है ?' उन्होंने उत्तर दिया—'जगल मे काटों के लगने से।' नायिका ने फिर कहा 'तुम्हारी आखे कुछ कुछ लाल और गर्म कैसी है ?' उन्होंने उत्तर दिया—'तुम्हारे वियोग मे जलते रहने से।' जब इस तरह ठगपने की बातें कहीं तब कहीं जाकर उन्होंने उसे तनिक सा हृदय से लगा पाया।

उदाहरण दूसरा प्रिया का प्रकाश मध्यम मान सवैया

ज्यों उनको तू बकावत मोहिं सो, आई बकावत है गरई।
अब याही तैं तो सहु बात कछू, कहिबे की हुती न कही थरई।
कहि केशव आपनी जाँघ उघारिकै, आपही लाजन को मरई।
इक तौ सबतैं हरए हरिहैं अब हौहू कह हरि तैं हरई ॥१७॥

(जिससे श्रीकृष्ण बातें कर रहे थे वही स्त्री नायिका को जब मनाने के लिए आई तब वह कहने लगी कि) जैसे तू उनको बकाती थी वैसे ही अब मुझे गुरु बनकर बकाने आई है। इसीलिए अब तुझसे कुछ बात कहने की थी सो स्थिरता पूर्वक नहीं कही। अपनी जाँघ खोल के स्वयं ही कौन लज्जा से मरना चाहेगा ? एक तो कृष्ण ही सबसे हलके हैं अब मैं क्या उनसे भी बढकर हलकी हो जाऊँ ?

उदाहरण तीसरा प्रियतम का मध्यम मान लक्षण— दोहा

जहाँ न मानै मानिनी, हारै पिय जु मनाइ।
उपजत मध्यम मान तहँ, प्रीतम के उर आइ ॥१८॥

जहा मानिनी नायिका प्रियतम के मनाने पर न माने और वह मना कर थक जाय तब उसके हृदय मे मध्यम मान की उत्पत्ति होती है।

उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न मध्यम मान—कवित्त

बार बार बरजी मै सारस सरस मुखी,
आरसी लै देख मुख या रस में बोरि है।
शोभा के निहोरेतें निहारत न नेंक कहूं,
तू हारी है निहोर सब कहा काहूँ खोरि है।
सुख को निहोरो जो न मानो सो भली करी,
तें केशोदास कीसों अब जो तू मुख मोरि है।
नाह के निहोरे किन मानति निहोरति है,
नेह के निहारे फिर मोहि जू निहोरि है ॥१६॥

(सखी नायिका से मान छोड़ने का अनुरोध करती हुई कहती है कि) हे कमल से भी बढकर सुन्दर मुख वाली ! मैंने तुझे बार-बार मना किया। (परन्तु तू मान नहीं छोड़ती) तनिक दर्पण लेकर अपना मुख देख (जिससे मान का तुझे आभास मिले)। तू फिर अपने मुख को इसी प्रेम-रस में डुबोएगी। (अभी मान किये बैठी है)। शोभा देखने के बहाने तू नायक की ओर तनिक भी नही देखती। हम सब मना करके हार गईं (पर तू नहीं मानती)। इसमे अब किसी का दोष नहीं। अपने ही को सुख देने वाली बातों को तू नहीं मानती, यह अच्छा नहीं करती। तुझे सौगंध है जो मान छोड़े। अभी तो तू नायक के मनाने पर मानती नहीं फिर (जब नायक चला जायगा तब ; प्रेम में आकर, तू (नायक को मनाने के लिए) मुझसे बिनती करेगी।

दूसरा उदाहरण प्रिय का प्रकाश मध्यम मान—सवैया

मानहिं मानतें मानिन केशव, मानस तें कछू मान रहैगो।
मान है री सुजु माने नहीं, परिमान नखे अभिमान भरैगो।

ह्वै है सहेली समान तबै, जब सौतिन में अपमान करैगो ।
आपु मनावत मानहिरी, बहुरो जो मनावन तोहिं परैगो ॥२०॥

(सखी नायिका से कहती है कि) जो मानिनि हैं वे मान (आदर) से मान जाती हैं और नहीं तो मनुष्यों से कहीं किसी का मान दूर हुआ है । मान वही है जो मनाने पर मान जाय अन्यथा सीमा से बाहर जाने पर वह अभिमान समझा जाता है । हे सहेली ! जब सौतों मे तुम्हारा अपमान होगा तब क्या वह तेरा सम्मान होगा ? अभी तो जब नायक तुम्हें स्वय मनाता है तब मान जाओ, (नही तो उसके रूठ जाने पर) तुम्हें उसको मनाना पड़ेगा ।

दोहा

राधा राधारमण के, बरणों मान समान ।
तिन को मान बनाइबो, कहियत सुनहु सुजान ॥२१॥

हे सुजान सुनो ! श्रीराधा जी और श्रीराधा-रमण (श्रीकृष्ण) के मान का सामान्य वर्णन हो चुका । अब उनके मान को दूर करने का वर्णन किया जायगा ।

दसवाँ प्रकाश

मान-मोचन लक्षण—दोहा

मान तजहिं प्रीतम प्रिया, कहि केशव करि प्रीति ।
बरणि सुनाऊ सो सबै, मैं जु सुनी षट रीति ।।१।।

'केशवदास' कहते हैं कि अब मैंने प्रियतम और प्रिया के प्रीति पूर्वक मान छोड़ने की जो छ रीतिया सुनी है, उन सबों को वर्णन करता हूँ।

मान मोचन के छ. भेद—दोहा

साम, दाम अरु भेद पुनि, प्रणति उपेक्षा मानि ।
अरु प्रसग बिध्वंस पुनि, दंक होहि रस हानि ।।२।।

साम, दाम, भेद, प्रणति, उपेक्षा और प्रसंग बिध्वंस ये मान मोचन के छ. प्रकार हैं। 'दण्ड' को इसलिए स्थान नहीं दिया कि उससे रस-हानि होती है।

पहला साम उपाय लक्षण—दोहा

ज्यों केहू मन मोहिये, छूटि जाय जहँ मान ।
सोई साम उपाय कहि, केशवदास बखान ।।३।।

'केशवदास' कहते हैं कि जब किसी (प्रेमिका) का मन मोहित होकर मान छूट जाय तब उसी को साम उपाय कहते हैं।

उदाहरण प्रिया का साम उपाय—सवैया

केशवदास सदा किये आश, रहै सुख की दुख ताहि न दीजै ।
ताहू सों रोष न मानिये मानिनि, भूलिहू आपनो मानि जु लीजै ।
हौ तुमहीं तुम हो सुनि सुंदरि, मूरति द्वै जिय एक ही जीजै ।
मान है भेद को मूल यहां, अपने सहुं सो सपने नहिं कीजै ।।४।।

जो सदा तुम्हारे सुख की आशा किये रहता है, उसे दुःख नहीं देना चाहिए। हे मानिनि ! उससे किसी प्रकार का रोष न मानो, जिसे भूल

से भी अपना मान लिया है। हे सुदरी ! सुनो मै तुम एक ही हैं, अत दो शरीर और एक प्राण होकर जियो। मान भेद (आपस मे अन्तर डालने) का बड़ा भारी भूल है, अतः उसे अपने के साथ कभी न करना चाहिए।

उदाहरण दूसरा प्रियतम का साम उपाय—सवैया

कहि आवत है जु कहावत हौ, तुम नाहीं तौ ताकि सके हमसौंहीं।
तिहि पैंड़े कहा चलिये कबहू, जिहि कांटो लगै पग परि दुखोहीं।
प्रीति कुम्हेड़े की जैंहे जई, सम होति तुम्हैं अगुरी पसरौं हीं।
कीजै कछू यह जानि कै केशव हौं तुमहीं तुमतो हरि हौ हीं ॥५॥

जो तुम मुझसे कहलाते हो तो मुझे कहना पड़ता है कि तुम कभी मेरी ओर तक न देख सके। उस मार्ग पर कभी क्यों चला जाय, जिस पर चलने से काटा लगे और पैरों में दुखदाई पीड़ा होने लगे। मेरी तुम्हारी प्रीति कुम्हड़े की बतिया के समान हो जायगी जो उँगली दिखलाते ही मुर्झा जाती है। हे हरि (श्रीकृष्ण) ! इसलिए यह समझ कर कुछ करो कि 'मैं तुम हो और तुम मैं हूँ' अर्थात् हम दोनों भिन्न न होकर एक ही हैं।

दूसरा उपाय दान लक्षण—दोहा

केशव कौनिहुं ब्याज कछु, दै जु छुड़ावै मान।
वचन रचन मोहै मनहिं, ताको कहिये दान ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब किसी बहाने से कुछ देकर मान छुड़ाया जाता है या बातें बना कर मन को वश मे कर लिया जाता है, तब उसे 'दान' उपाय कहते हैं।

उदाहरण नायक का दान उपाय—कवित्त

कोमल अमल दल दीन्हैं कमल भव,
अरुण अरुण प्रभु जू को सुखदाइये।
केशोदास शोभाघर अधर सुधा के घर,
मधुर अधर उपमा तौ इन पाइये।

उरज मलय शैल शील सम सुनि, देखि,
अलक बलित व्याल, आशा उरआइये।
निपट निगंध यह हार बंधु जीव को सु,
चाहत सुगंध भयो नेक ग्रीव नाइये ॥७॥

(नायिका की सखी, नायक की ओर से, बन्धु जीव या दुपहरिया के पुष्पो का हार लाकर नायिका से पहनने का अनुरोध करती हुई कहती है कि) इसके कोमल तथा स्वच्छ दल हैं जो श्री ब्रह्मा जी के दिए हुए हैं, रग मे लाल हैं और श्री सूर्य भगवान् को सुखदायी हैं। ये सुधाधर ओठों की शोभा रखते हैं, इसलिये मधुर ओठो की उपमा इन्ही मे पाई जाती है। आपके उरोजो (कुचों को मलयाचल के समान सुनकर तथा उन्हें अलक रूपी साँपो से घिरा देख कर इनके मन मे आशा का उदय हुआ है (कि मलयाचल पर्वत पर जिस तरह सब वस्तुएं सुगन्धित हो जाती हैं, उसी तरह हम भी हो जायगे)। यह गंधहीन बंधुजीव (दुपहरिया के पुष्पों) का हार सुगंधमय होना चाहता है, तनिक ग्रीवा को झुकाइए।

दूसरा उदाहरण—सवैया

मत्त गयंदन साथ सदा इहि, थावर जंगम जंतु बिदार्‌यो।
तादिन ते कहि केशव बेधन, बन्धन कै बहुधा दिधि मार्‌यो।
सो अपराध सुधारन शोधि, इहै इनि साधन साधु विचार्‌यो।
पावन पुंज तिहारे हिये यह, चाहत है अब हार बिहार्‌यो ॥८॥

(सखी नायिका से कहती है कि) इस गज मोतियों के हार ने मतवाले हाथियों के साथ रहकर अनेक चर अचर जीव-जंतुओं का नाश किया। उसी दिन से श्री ब्रह्माजी ने दंड स्वरूप इन गजमुक्ताओं का वेधन कराया और बन्धन में डाल दिया। उसी अपराध का प्रायश्चित्त करने का इन्होंने बड़ा सुन्दर साधन सोचा है कि तुम्हारे पवित्र हृदय पर अब ये बिहार करना चाहते हैं।

उदाहरण तीसरा प्रिया का दान उपाय--कवित्त

हँसत हँसत .आई इक गाथ गाई,
कहहु कन्हाई या को भाउ समुझाय कै।
पीबै क्यों अधर मधु दम्पति एक ही बार,
रदन करन थल दीजहि बताय कै।
यह परिरंभण कहावै कौन केशोदास,
मेरी सों जो मोसों तुम राखहु डराय कै।
राधिका की अधिकाई कहा कहौं तीनो आजु,
आपनो पियारो पिउ आपुही मनाय कै ॥१०॥

(एक सखी दूसरी से कहती है कि । आज तो श्रीराधा जी हँसते हँसते आईं और एक गाथा कहती हुई कहने लगीं "हे श्रीकृष्ण ! इसका भाव मुझे समझाइए" यदि दम्पति एक ही बार में अधर-मधु पान करना चाहें तो कैसे करें। दाँतों और नखों के क्षत का स्थल भी बतला दीजिए। यह जो परिम्भण कहलाता है, वह क्या है ? आपको मेरी शपथ है, जो मुझसे छिपाइए। श्री राधाजी की बड़ाई मैं तुमसे कहाँ तक कहूँ। उन्होंने अपना प्रियतम स्वयं ही मान लिया।

चौथा उपाय भेद लक्षण—दोहा

सुख दै के सब सखिन कहँ, आप लेइ अपनाइ।
तब सु छुड़ावै मान को, वरणो भेद बनाइ ॥१०॥

जब नायिका सब सखियों को सुखी करके अपनी ओर करले और सब मान छुड़ावे उसे भेद उपाय कहा गया है।

उदाहरण नायिका का भेद उपाय—सवैया

केशव धाइ खवासिन तोहि, सखी सकुचै सब आप नि घातैं।
मोहिं तौ माई कहे ई बनै अब, बाँधि दई विधि ती कहैं तातैं।
नेक हरे-हरे बोलि बलाइ लौ, हौं डरपौं गड़ि जाय न यौतें।
माखन सो मेरे मोहन कोमल, काठ सी तेरी कठेठी ये बातें ॥११॥

(नायिका से नायक की ओर से खवासिन कहती है कि) धाय, खवा-

(नायिका की सखी उससे कहती है कि) 'तू अब उदास हो रही है और दिन भर अपनी दुख-दशा प्रकट करती है। रात मे तो आधी रात तक बंधु तथा वन्धुओं आदि ने तेरी बड़ी विनती की (तो भी तू न मानी)। तब धाय ने समझाया, सखियों ने शिक्षा दी पर कुछ न काम न चला। हे मानिनी! जब तक प्रियतम पैरों पड़ा रहा, तब तक तूने क्यों किसी की बात नहीं मानी?

उदाहरण चौथा प्रिय का प्रणति उपाय—सवैया

नीर ही तौ बिन मीन मरै बरु, मान तौ नीरहि के जिय जीजै।
जा बिन और सुहाइ न केशव, ताहि सुहाइ सुनौ सब कीजे।
जा लगि मो पग लागत है, सुलगी पग अक लगाय न लीजे।
हौं सिखवों अपने सपने हूँ, तो आवत लच्छ किवार न दीजै ॥१७॥

(सखी नायक से कहती है कि) कहीं पानी के बिना मछली का काम चल सकता है! यदि मानो तो वह नीर ही के बल जीवित रहती है। हे श्रीकृष्ण! जिसके बिना तुम्हें कुछ अच्छा नहीं लगता, उसे जो अच्छा लगे, वही करो। जिससे लिए तुम मेरे पैरों पड़ते थे, वही अब तुम्हारे पैरों पड़ी है, उठाकर अंक क्यों नहीं लगा लेते? मैं तो यही शिक्षा देती हूँ। कि 'अपने घर आई हुई लक्ष्मी को देखकर किवाड़ न बन्द करना चाहिए।'

छठा उपाय उपेक्षा लक्षण—दोहा

मान मुचावन बात तजि, कहिये और प्रसंग।
छूटि जाइ जहँ मान तहँ, कहत उपेक्षा अंग ॥१८॥

जहां पर मान छुड़ाने वाली बात को छोड़ कर कुछ दूसरी बात ऐसी कही जाय जिससे मान छूट जाय, वहाँ उपेक्षा कहा आता है।

उदाहरण प्रिया का उपेक्षा उपाय—कवित्त

चपला न चमकति चमक हथ्यारन की,
बोलत न मोर बदी सयन समाज कै।

जहां-तहां गाजत न बाजत दमामे दीह,
देत न दिखाई दिन मणि लीने लाज के।
चलि-चलि चन्द्रमुखी सामरे सखा पै बेगि,
शोषक जु केशोदास अरि सुख साज के।
चढि-चढि पवन तुरङ्गन गगन घन,
चाहत फिरत चद योधा यमराज के ॥१६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) तू जिसे बिजली समझती है वह बिजली नहीं हथियारो की चमक है। ये मोर नहीं बोलते, प्रत्युत सेना दल के बन्दी जन बोल रहे हैं। जहाँ-तहा बादल नही गजरते युद्ध के ढोल बज रहे हैं। जो सूर्य नहीं दिखलाई पड़ते वह लज्जा से छिपे हुए हैं। इसलिए हे चन्द्रमुखी, सावरे सखा (श्रीकृष्ण) के पास चल जो अरियों (शत्रुओं) के सुखों का शोषण करने वाले हैं। पवन के घोड़ों पर चढे हुए आसमान के बादल मानों यमराज के योधा हैं जो चन्द्रमा को ढूढते फिरते हैं।

उदाहरण दूसरा प्रिया का उपेक्षा उपाय—कवित्त

केशवदास दिनरात के तकी की भावै भाँति,
जिय में बसति जाति नैनन में नलिनी।
माधवी को पिये मधु सूझत न अध कहुं,
सेवती सें बन कहीं सेई गध फलिनी।
और हौं कहति बात कान्ह काहे को लजात,
ऐसे तौ खिस्यात जो होइ मन मलिनी।
देखहुं धौं प्राणपति निलज अली की गति,
मालती सों मिल्यो चाहे लीने साथ अलिनी ॥२०॥

(नायिका श्रीकृष्ण से कहती है कि) देखो, इसे दिनरात केतिकी अच्छी लगती है और मन तथा नेत्रों में कमिलिनी बसती जाती है। माधवी का मधु पीकर इस अंधे को कुछ नहीं सूझता। कभी सेवती के बन मे घूमता है, कभी गन्ध फलिनी (चपकली) की सेवा करता है।

(यह सुनकर श्रीकृष्ण लज्जित से हुए तो सखी ने कहा कि हे कृष्ण ! मै तो भौरे की बात कहती हूँ, तुम किस लिए लज्जित होते हो ? तुम तो ऐसे खिसियाते हो जैसे तुम्हारा मन मलिन हो। हे प्राणपति ! इस निर्लज्ज भौरे की दशा देखो, साथ मे भ्रमरी को लेकर भी मालती से मिलना चाहता है।

सातवा उपाय प्रसग विध्वस लक्षण—दोहा

उपज परै भय चित्त भ्रम, छूट जाय जहँ मान।
सो प्रसग विध्वन्स कवि, केशवदास बखान ॥२१॥

जब चित्त मे भ्रम उत्पन्न होने के कारण मान छूट जाय तब 'प्रसग विध्वश' उपाय माना जाता है।

उदाहरण—सवैया

केकिन केशव काम के किंकर, बोलत डोलत देत दुहाई।
काम निशा यह कामिन कोऊ, रिसाइगी ता कहु ह्वै है रिसाई।
गाजति नाहिं ने मेघ घटा यह, बाजत डोंड़ी सखी सुखदाई।
भोर भये फिर कीवौ अबोलौ, सुबोलौ अबै बलि बोल कन्हाई ॥२२॥

(सखी नायिका से कहती है कि) ये मोर नहीं बोलते, किन्तु काम के सेवक जो उनकी दुहाई देते हुए यह कहते फिरते हैं कि 'इस काम-निशा में जो-जो कामिनी रूठेगी, उस पर उनका क्रोध होगा।' यह मेघ नहीं गरजते प्रत्युत सुखदाई डुग्गी पीटी जा रही है।' जब सवेरा हो तो फिर रूठकर न बोलना, मैं बलिहार होती हूँ. अभी तो कृष्ण बोल रहे हैं, उनसे बोलो।

उदाहरण दूसरा प्रिया का प्रसग विध्वंस—कवित्त

कोकन को कारिका कहत काहू शारिकासों,
दुरि-दुरि हित चित चौगुनो चढ़ायो है।
सूकि रही सकुचनि बापुरी शुकी तौ कहि,
काहू सों न सकै देह दुखन उठायो है।
उठि चलो न्याय कीजै अबकै मनाय दीजै,

नेकही में केशवदास कलह बढायो है।
मानत न एते पर उलटो मनावै बस,
ऐसो सयान श्याम शुकहि पढ़ायो है ॥२३॥

(सखी नायिका से कहती है कि) देखो कोक की कारिका को कोई शुख सारिका (मैना) से कहता है और उसने छिपे-छिपे उससे चौगुना प्रेम बढा लिया है। वह बेचारी शुकी सकोच के मारे सूखी जा रही है, किसी से कुछ कह नही सकती और शरीर से अनेक दु ख उठातीं है। इसलिए उठिए और उसे मना लीजिए उन्होंने तनिक ही में कलह बढा रखा है। इतने पर भी वह नही मानता, वह बेचारी उल्टा मना रही है। हे श्रीकृष्ण ! तुमने यही सयानपन शुक को भी पढा दिया है।

दोहा

इहि विधि मान छुड़ावहीं, आपुस में नर नारि।
पल-पल प्रीति बढ़ावही, 'केशवदास' विचारि ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि इस प्रकार प्रियतम और प्रियतमा के आपस के मान को सखियाँ छुड़ाया करती हैं और तरह-तरह की बाते सोचकर उनके प्रेम को पल-पल बढाया करती हैं।

दोहा

प्रिया न प्रीतम सों करै, अति हठ केशवदास।
बहुर्यो हाथ न आवई, जो है जाय उदास ॥२५॥

'केशवदास' कहते हैं कि प्रियतमा को प्रियतम से अति हठ न करना चाहिये, क्योकि जब वह उदासीन हो जायगा तो फिर हाथ न आवेगा।

दोहा

बारहि बार न कीजिये, बारक कीजै मान।
कहि केशव ज्यों आपमें, सदा बढै सनमान ॥२५॥

'केशवदास' कहते हैं कि बार-बार मान न करके एक बार ही मान करना चाहिए जिससे आपस में सनमान बढेगा।

दोहा

प्रीति बिना भय होय नहिं, भय बिन होहि न प्रीति ।
प्रीति रहै जहँ भय रहै, यहै मान की रीति ॥२६॥

बिना भय के प्रीति नही होती और बिना प्रीति भय नही होता। जहाँ भय रहता है वही प्रीति रहती है। यही मान की रीति है।

दोहा

गर्व, व्यसन, धन, त्यागते, निष्ठुरबच प्रवास।
लालच विप्रिय करन ते, तिय पिय होइ उदास ॥२७॥

गर्व, व्यसन, धन, त्याग, निष्ठुर वचन, प्रवास, लालच और अप्रिय कार्य से स्त्री तथा पति का मन उदास हो जाता है।

दोहा

मान बिरह बरणों विविध, जहाँ विविध बुधवास।
केशव करुण कहि कछू, कीजत विरह प्रवास। २८॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैं अनेक प्रकार के मान विरह का वर्णन कर चुका। अब मैं करुण विरह का वर्णन करता है।

मान-मोचन

(१) साम (२) दाम (३) भेद (४) प्रणति (५) उपेक्षा (६) प्रसंग विध्वंस
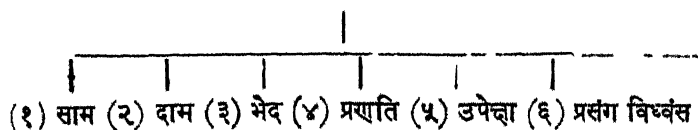
एकादशवाँ प्रकाश

करुण-विरह लक्षण—दोहा

छूटि जात केशव जहाँ, सुख के सबै उपाय।
करुण-रस उपजत तहा, आपुन ते अकुलाय ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ पर सुख के सभी उपाय समाप्त हो जाते हैं, वहाँ पर अपने आप करुण रस की उत्पत्ति हो जाती है।

दोहा

सुख में दुख क्यों वर्णिये, यह वर्णत व्यौहार।
तदपि प्रसंगहि पाय कछु, वर्णत मति अनुसार ॥२॥

यद्यपि सुख मे दुख का क्यों वर्णन किया जाय तथापि प्रसंग-वश, अपनी मति के अनुसार कुछ वर्णन करना पड़ता है।

उदाहरण नायिका का प्रच्छन्न करुणा विरह—सवैया

मै पठई मति लेन सखी, सुरही मिलि को मिलिबे कहँ आने।
जाय मिले दिन ही दृग दूत दयाल सो देह दशा न बखाने।
प्रेरत पैज किये तन प्राणनि, योग के और प्रयोग निषाने।
लाज ते बोलन पाऊं न केशव, ऐसे ही कोऊ कहा दुख जाने ॥३॥

(नायिका अपने मन को सम्बोधित करती हुई कहती है कि) मैंने अपनी मति रूपी सखी को उन्हें लिवा लाने के लिए भेजा, परन्तु वह वहीं मिल कर रह गई, मुझसे मिलाने के लिए कौन उन्हें लावे। नेत्र रूपी दयालु दूत तो दिन ही में जा मिले, मेरी देह की दशा का वह भी वर्णन नहीं करते। अब तो शरीर हठपूर्वक प्राणों को भेजने की प्रेरणा करता है क्योंकि मिलने के सभी उपाय समाप्त हो चुके हैं। लज्जा वश मैं कुछ बोल नहीं पाती, मेरे दुख को ऐसे ही कोई क्या समझे।

उदाहरण दूसरा प्रिया का प्रकाश करुणा विरह—कवित्त

हरित-हरित हार हेरत हियो हरत,
हारी हों हरिन नैनी हरि न कहू लहों।
बन माली ब्रज पर बरसत बनमाली,
बनमाली दूर दुख केशव कैसे सहों।
हृदय कमल नैन देखि के कमल नैन,
होंहुंगी कमल नैनि और हौ कहा कहों।
आप घने घनश्याम घन हीं से होत घन,
श्याम के दिवस घनश्याम बिन क्यों रहों ॥४॥

(एक सखी से अपनी विरहावस्था का वर्णन करती हुई नायिका कहती है कि) जिन हरे-हरे जगलों को देख कर हृदय विमुग्ध होता है, उन्हें देख-देख मैं हरिन जैसे नेत्र वाली हार गई परन्तु हरि (श्रीकृष्ण) न मिले। बन माली (बन से घिरे हुए) ब्रज पर बनमाली (बादल) बरस रहे हैं और वनमाली (श्रीकृष्ण) दूर हैं, मैं इस दुःख को कैसे सहूं ? और यदि हृदय-कमल के नेत्रों से कमल नयन (कमल जैसे नेत्र वाले) श्रीकृष्ण को देखकर स्थिर रहूँ तो कमल-नैनी (जल से भरे नेत्र वाली) हो जाऊँगी अर्थात् ध्यान पूर्वक देखने पर और भी रोऊँगी। और अधिक क्या कहूँ आप (पानी) के भरे घनस्याम (बादल) मेरे लिए तो घन (हथौड़े) के ममान ही रहे हैं। मैं सावन के दिनों में घनश्याम (श्रीकृष्ण) के बिना कैसे रहूँ ?

उदाहरण तीसरा प्रिया का प्रच्छन्न करुणा विरह—कवित्त

ऐसे मिल्यौ प्रथम श्रवण मग जाइ मन,
श्रवन भवन कीने अलिक अलक मैं।
मन मिले-मिले नैन केशौदास सा विलास,
छवि आस भूलि रहे कपोल फलक मैं।
नैन मिले मिल्यो ज्ञान सकल सयान सजि,
तजि अभिमान भूल्यो तन की झलक मैं।

तैसे छल बल साधि राधि कै मिलन कहँ,
चाहत कियो पयान प्राणहू पलक मैं ॥५॥

(नायक श्रीकृष्ण अपने मन को सबोधित करते हुये कहते हैं कि) जैसे पहले कानो के मार्ग से (चर्चा सुनकर) मन जा मिला, फिर उसने अलंकों में निवास किया। मन मिलने पर विलास पूर्वक नेत्र मिल गये और छवि दर्शन की आशा से कपोल फलक मे भूल गये। नेत्र मिलने पर अभिमान और चतुराई त्याग कर सारा ज्ञान भी जा मिला और शरीर की शोभा मे भूल गया। उसी प्रकार छल-बल करके यह प्राण भी राधा से मिलने के लिए पल भर मे प्रयाण करना चाहते हैं।

उदाहरण चौथा प्रिया का प्रकास करुण विरह—सवैया

है तरुणाई तरगिन पूर अपूरब पंख राग रंगे पय।
केशवदास जहाज मनोरथ सभ्रम निभ्रम भूर भरे भय।
तर्क तरङ्ग तरङ्गित तुंग तिमिङ्गल शूल विशालनि के चय।
कान्ह कछू करुणा मय हे सखि, तै ही किये करुणालय ॥६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) श्रीकृष्ण तो करुणामय थे, तू ने ही उन्हें वरुणालय (समुद्र) बना दिया। जो तरुणाई है, वही मानो नदी है और तेरा अपूर्व पूर्वानुराग ही उसका जल है। जो मनोरथ हैं वे ही उसके जहाज हैं। भय उस समुद्र के भँवर हैं! तर्क ही ऊँची-ऊँची लहरे हैं तथा जो (विरह के) बड़े-बड़े शूल हैं वे ही उस समुद्र की तिमिंगल (मछलियाँ) हैं।

दूसरा प्रवास विरह लक्षण—दोहा

केशव कौनहु काज ते पिय परदेशहि जाय।
तासों कहत प्रवास सब, कवि कोबिद समुदाय ॥७॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब किसी कार्य वश प्रियतम परदेश चला जाता है, तब उस विरह को कवि और कोविद समुदाय प्रवास विरह कहता है।

उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न प्रवास बिरह—सवैया

तू करि है कबि धौं कहि गौनहिं, नंद कुमार तौ गौन कियोई।
मोहि महा उरु तो उर कौन, रहै लरि लै जिन कैधौं लियोई।
ऐसी न बूझिये केशव तोहि, विचारै जु बीच विचार वियोई।
तेरे ही जीय जियै जिनको, जियरे जिय ता बिन तू व जियोई ॥८॥

(नायिका अपने मन को सम्बोधित करती हुई कहती है कि। हे मन! नन्द गुमार श्रीकृष्ण ने तो गमन कर दिया, (चले गये) अब तू कब गमन करेगा ?

उदाहरण दूसरा प्रिया का प्रकाश प्रवास विरह – कवित्त

कौन के न प्रीति कौन प्रीतमहि बिछुरत,
तेरे ही अनोखे पति ब्रत गाइयतु है।
यतन करे हीं भले आवे हाथ केशवदास,
और कहौ पछिन के पाछे धाइयतु है।
उठि चलौ जो न माने काहू की बलाइ,
जानै मान सो जो पहिचाने ताके आइयतु है।
थाके तौ है आजु ही मिलों कि मारि जाउ माई,
आगि लगे मेरी आली मेह पाइयतु है ॥६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) कौन ऐसी स्त्री है जिसके प्रियतम नहीं हैं और कौन ऐसी है जिसके प्रियतम बिछुड़ते या विदेश नहीं जाते। तेरा ही कुछ अनोखा पतिव्रत नहीं हैं। यत्न करने पर पत्नी ही हाथ आता है, पत्नी के पीछे कहो कौन दौड़ता है ? (फिर वह दूसरी सखी से बोली कि) यदि यह नहीं मानती (और प्राण देने पर उतारू है तो) चल हम उठ चलें, हमारी बला समझावे। जो माने और पहचाने उसी के यहाँ आना चाहिए। यह तो यह चाहती है कि प्रियतम आज ही मिले अन्यथा यह मर जायगी। भला बताओ सखी, आग लगने पर कहीं तुरन्त ही मेह मिलता है ?

उदाहरण दूसरा विरह मय विभ्रम—सवैया

कोकिल केकी कुलाहल हूल उठी उर में गति की गति लूली।
केशव शीत सुगंध समीर गयो उड़ि धीरज ज्यों तन तूली।
जै मुनि जै मुनि कै बचि जोन्ह की यामिनी पै नअजों सुधि भूली।
क्यों जियै कैसी करै विसु सी, बहुर्यो बिनसी विस वासिन फूली॥१०॥

(नायिका अपने मन से कह रही है कि) कोयल और मोर के कोलाहल से हृदय में सहूल (पीड़ा) उठी है कि बुद्धि की गति भूल गई है अर्थात् बुद्धि काम नहीं देती। शीतल सुगन्ध समीर देख-देख कर धैर्य ऐसा उड़ गया है जैसे रुई। चाँदनी रात मे 'जयमुनि-जयमुनि' कहकर किसी प्रकार बची, वह सुधि अब तक नहीं भूलती। मै क्या करूँ, कैसे जियूँ, यह विषैली विनाश कारिणी नलिनी फिर फूल उठी।

तीसरा उदाहरण प्रिया का प्रच्छन्न प्रवास विरह—सवैया

जिन बोलि सुबोल अमोल सबै, अंग केलिक लोलनि मोल लिये।
जिनको चित लालची लोचन रूप, अनूप पियूष सु पीय जिये।
जिनके पद केशव पानि छिपे, सुखि मानि सबै दुख दूर किये।
तिनको संग फूटत ही फिटिरे फटि कोटिक टूक भयो न हिये॥११॥

(नायक अपने हृदय से कहता है कि) जिस प्रिया ने केलि समय मीठी और अमोल बातें कह-कह कर अंगों को मोल ले लिया। जिन नेत्रों का लालची मन अनुपम अमृत पीकर जीवित रहा। जिसके चरणों का स्पर्श करके सभी दुखों को दूर करके सुख माना। उनका साथ छूटते ही तू करोड़ो टुकड़े क्यों न हो गया, तुझे धिक्कार है।

चौथा उदाहरण प्रिया का प्रकाश प्रवाह विरह—सवैया

केशव क्यों हूं चलै चलि कोरि, सदेश कहैं फिर पैंडक दूपर।
आगे धरैं अपनो सुकै साहस, पाछहीं पैल परैं पग भूपर।
होत जहीं-तहीं ठाढ़े ठगे से, चलो न कछो परै कान्ह हितू पर।
लोक की लाज फिर्यो न परै, पै मिलान करे दश कोसक ऊपर॥१२॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) वह किसी प्रकार मिलने के

लिए चले परन्तु दो कदम चलते ही करोड़ों संदेश कहने लगे। फिर साहस करके आगे पैर रखा तो वह पृथ्वी पर पीछे पड़ने लगा। वह जहाँ-तहाँ मन्त्र मुग्ध की भाति खड़े हो गये है, और प्रेमी कृष्ण से 'चलो' कहते नही बना। लोक-लज्जा के मारे लौटते तो बना नही पर एक दिन मे दश कोस की चाल से चले।

पाँचवा उदाहरण श्रीकृष्ण का विरहमय विभ्रम--सवैया

प्रेत की नारि ज्यो तारे अनेक, चढ़ाय चलै चितवै चहुधातो।
कोढ़ि निसी कुकरे कर कजनि, केशव श्वेत सबै तन तातो।
भेंटत ही बरही अबही तौ बरयाइ गई ही सुखे सुख तातो॥
कैसी करौ कहि कैसे बचो, बहुरो निशि आई किये मुख सातो॥१३॥

प्रेत की स्त्री (चुडैल) की भाँति यह भी अनेक तारो को चढा कर तथा चारों ओर देखती चलती है। कोढ़ियों के समान इसके कमल रूपी हाथ सिकुड़ गये हैं और कोढ़ियों ही की भाति इसका सारा शरीर श्वेत है। इससे भेंट होते ही सारा हृदय जलने लगता है, मेरे सातों सुखों को यह छीन चुकी है। अब क्या करूँ, कैसे बचूं, वही (चुडैल रूपी रात लाल मुंह किये फिर आ गई है।

छठा उदाहरण प्रिया की निद्रा—सवैया

आये ते आवैगी आँखिन आगे ही, डोलिहै मानहु मोल लई है।
सो वै न सोवन देय न यो तब सो इन में उन साथ दई है।
मेरि ये भूल कहा कहों केशव, सौतिकहूँ ते सहेली भई है।
स्वारथ ही हितु है सबके, परदेश गये हरि नीद गई है॥१४॥

(नायिका कहती है कि यह निद्रा उनके आने पर आँखों के आगे आ जाती है, ऐसी घूमती रहती है मानो मोल ली हुई है। यह स्वयं सोती है न सोने देती है, जब से उन्होंने मेरे साथ दे दिया है। यह तो मेरी ही भूल है मै क्या कहूँ सौत कहीं सहेली हो सकती है। संसार में स्वार्थ के लिए ही है। परदेश जाने पर नींद भी हरि श्रीकृष्ण के साथ चली गई।

सातवाँ उदाहरण प्रिया की निद्रा—सवैया

केशव कैसहूँ कोरि उपायनि आनि सु तो उर लागति
चक चौंधनि सी चितवैं चित में चित सोवत हूँ महँ जागति है
परदेश प्रिया मोंहि पत्याति न जाने को या की कहा गति है।
तजि नैनन नींद नवोढ़ बधू, लहु आधिक राति ते भागति है ॥१५॥

(नायिका कहती है कि नींद की दशा भी नवोढा (नई विवाहिता) बधू की तरह है) वह करोड़ों उपाय करने पर हृदय से आकर लगती है। (नवोटा भी यही करती है)। चकित हुई सी चारो ओर देखती है और सोते हुए भी जागती सी रहती है। (नवोढा की भी यही दशा रहती है)। परदेश मे प्रियतम को गया हुआ जान कर मेरा विश्वास नहीं करती। (नवोढा भी यही करती है)। नहीं जानती इसकी क्या गति है। यह नीद नवोढा बधू की भाति मुझे आधी रात छोड़ कर भाग जाती है।

उदाहरण आठवां प्रिया का विरह निवेदन—कवित्त

केशव कुंवर वृष भानु की कुँवरि बनि,
देवता ज्यों बन उपवन बिहरति है।
कमला ज्यों थिर रहति कहू एक ठौर,
कमलानुजा ज्यों कमलनि ते डरति है।
काली ज्यों न केतकी के फूल सूँघै सीताजू ज्यों,
निशिचर मुख चन्द देख ही जरत है।
बदन उघारत ही मदन सुयो धन ही,
द्रौपदी ज्यों नामु मुख वे रोई रटति है ॥१६॥

(राधा की सखी पत्र में श्रीकृष्ण को लिखती है कि) वृषभानु की बेटी राधा वन देवी सी बनकर बन और उपवनों में घूमती है। लक्ष्मी की तरह एक जगह स्थिर नहीं रहती और कमलानुजा की भाति कमलों से डरती है। काली के समान केतकी के फूल नहीं सूघती और सीता जी की तरह निश्चर मुख-चन्द को देखती ही जलती है। जब मदन रूपी दुर्योधन मुख खोलनें की चेष्टा करता है तब द्रौपदी की तरह आपका ही

नाम रटती हैं।

उदाहरण नवाँ—कवित्त

भौरनि ज्यों भावत रहत वन बीथिकान,
हसनि ज्यों मृदुल मृणालिका चहति है।
पिउ-पिउ रटत रहत चित चातकी ज्यों,
चन्द चितै चकई ज्यों चुप ह्वै रहति है।
हरनी ज्यों हेरति ना केशरि के कानन को.
केका सुनि व्याली ज्यों विलान ही कहति है।
केशव कुंवर कन्ह विरह तिहारे ऐसी,
सुरति न राधिका की मूरति गहति है ॥१७॥

(सखी नायक से कहती है कि) राधा भौंरी या भ्रमरी की भाँति बन उपवन भ्रमण करती रहती है और हंसिनी की भाँति कोमल मृणाल चाहती रहती है। पपीहा की भाँति पी-पी रटती रहती है तथा चकई की तरह चन्द्रमा को देखकर चुप हो जाती है। हरिनी जिस तरह 'केशरी' सिंह के कानन से भागती है उसी तरह यह केशर के वन से भागती है। जैसे सर्पिणी मोर की ध्वनि सुनकर बिल मे भागती है वैसे यह भी मोर ध्वनि सुनकर भागती है। हे कृष्ण ! आपके विरह में राधा की मूर्त्ति स्थिर नहीं रहती।

उदाहरण दशवाँ— कवित्त

दीरघ दरीन बसै केशवदास केशरी ज्यों,
केशरी को देखे वनकरी ज्यों कंपत है।
बासर की संपदा चकोर ज्यों न चितवत,
चकवा ज्यों चन्द ही ते चौगुनो चंपत है।
केका सुनि व्याल ज्यों विलात जात घनश्याम
घननि की घोर निज वासे त्यों तपति है।
भौंरे ज्यों भँवत वन योगी ज्यों जमत निशि,
चातक ज्यों श्याम तेरोई जपत है ॥१८॥

(सखी राधा जी से कहती है कि) श्रीकृष्ण सिंह की भाँति पहाड़ों की गुफाओं में रहते हैं तथा केशरी को देखकर जैसे हाँथी काँपता है वैसे वह केशर आदि सुगन्धित वस्तुओं को देखकर काँपते हैं। जैसे सूर्य की ओर चकोर नहीं देखता वैसे ही दिन की संपदा (भोजनादि) की ओर वह भी नहीं ताकते। चन्द्रमा को देखकर चकवा की तरह चौगुने दुखी होते हैं। मोर की वाणी सुनकर जैसे सांप बिल की ओर भागता है, वैसे ही वाणी सुनकर श्रीकृष्ण बिलाते जाते हैं (घबड़ाते हैं)। बादलों की ध्वनि सुनकर जवासे की तरह मुर्झा जाते हैं। भौंरे की तरह चक्कर काटते रहते हैं और योगी की तरह रात को जागते रहते हैं तथा चातक की भाँति आपका ही नाम रटते रहते हैं।

केशवदास प्रवास को, कह्यो यथा मति साज।
राधा हरि बाधा हरण, वर्णों सखी समाज ॥१६॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैंने यथामति प्रवास का वर्णन कर दिया। अब राधा और कृष्ण की बाधाओं को हरने वाले सखी समाज का वर्णन करता हूँ।

बारहवां प्रकाश

सखी वर्णन—दोहा

धाइ जनी नायन नटी, प्रकट परोसिन नारि ।
मालिन, बरइन, शिल्पिनी, चुरहेरनी सुनारि ॥१॥
रामजनी, सन्यासिनी, पटु पटवा की बाल ।
केशव नायक नायिका, सखी करहिं सब काल ॥२॥

'केशवदास' कहते हैं कि धाइ, दासी, नायन, नटी, पड़ोसिन, मालिन, तमोलिन, चुड़िहारिन, सुनारिन, रामजनी, संन्यासिनी एव पटवा की प्रवीण स्त्री ये नायक तथा नायिका की सखी का काम देती हैं या नायक नायिका इन्हें सखी बनाते हैं ।

पहली सखी धाइ का वचन प्रिया से उदाहरण—सवैया

मोहन साथ कहा निशि द्योस, रहै शतरंजहिं के मिस बैठी ।
केशव क्यो हू सुनै महतारी तो राखहि री घरही मँह पैठी ।
हौं सिखवों सिख दै साखि तोहि ते भौंह चढ़ाय कै दीठि उमेठी ।
कौन लडैती सुरूप न काहि, तुहीं कछु जाति अकाशहिं ऐंठी ॥३॥

(धाइ-नायिका से कहती हैं कि) तू मोहन (श्रीकृष्ण) के साथ शतरज खेलने के बहाने, रात-दिन क्यों बैठी रहती है । यदि तेरी माता किसी प्रकार सुन पावेगी तो तुझे घर में ही बैठाए रखेगी । हे सखी ! मैं तो तुझे शिक्षा देती हूँ पर तू भौंहें चढाकर आँखें तरेरती है । कौन लडैली (प्यारी नहीं है, किसे रूप नहीं मिला है परन्तु तू ही कुछ आकाश तक ऐंठी जा रही है ।

धाइ की दूसरी बातें प्रियतम के प्रति—कवित्त

थोरी सी सुदेश वेष दीरघ नयन केश,
गौरी जू सी गौरी भोरी भवजू की सारी सी ।
साँचे की सी ढारी अति सूक्षम सुधारि कढी,

केशवदास अंग-अंग मांइ के उतारी सी।
सोधें कैसी शोधी देह सुधा सों सुधारी,
पाउं धारी देव लोक तैं कि सिधुतें उधारी सी।
आजु यासों बोलि चालि हँसि खेलि लेहु लाल,
काल्हि ऐसी ग्वारि लाउ काम की कुमारी सी ॥४॥

धाय प्रियतम से कहती है कि हे लाल! आज इससे बातचीत कर लो, कल मैं काम-कुमारी जैसी दूसरी ग्वालिन ला दूँगी, जो थोड़ी उम्र की होगी, तथा जिसके बड़े-बड़े नेत्र और केश होंगे। जो गौरी पार्वती जी) सी गौरवपूर्ण, भोली-भाली और शङ्कर जी की साली जैसी प्रतीत होगी। जो साँचे मे ढाली हुई सी जान पड़ेगी। जिसकी देह सोंधे (सुगंध) से शोधी हुई तथा सुधा से सुधारी हुई सी जान पड़ेगी। जो ऐसी ज्ञात होगी मानो देवलोक से आई है अथवा समुद्र म से निकाली गई है।

दूसरी दासी का बचन (प्रिया के प्रति) उदाहरण—कवित्त

शोभा को सघन न न मेरो घनश्याम नित,
नई-नई रुचि तन हेरत हिराइये।
केशवदास सकल सुवास को निवास करि,
विविध विलास हास-त्रास बिसराइये।
ऊष रस केतुक मयूष, रस मीठो है,
पियूष हू की पै ली था हे जाकी सियराइये।
चोरी-चोरा नैननि चुराये सुख कोने जौलौं,
पिय मन माहिं मन मेल ना चराइये ॥५॥

(दासी नायिका से कहती है कि) मेरे घनश्याम (श्रीकृष्ण) की शोभा को सघन घन नहीं पाता। उसके शरीर की शोभा नित्य नई शोभा धारण करता है। जिसे देखते ही मन चकित हो जाता है। वह सभी सुगंधित वस्तुओं का निवास है उसके साथ विविध विलास तथा हास करके अपना त्रास भूल जाओ। उसकी मधुरता के आगे ऊष का रस क्या है, शहद बेचारा भी कितना मीठा है, अमृत भी जिसके निकट कुछ नहीं है। इस-

लिए चोरा-चोरी नेत्रो को चुराने से क्या सुख मिलेगा जब तक हे प्रियतम ! उसे मन मे न बसाया जायगा ।

तीसरी जनी या दासी का बचन प्रियतम प्रति उदाहरण—कवित्त

ऐसी बातें ऐसे ही घौं कैसे कहा परतन,
जाकी गति मति लाज पट सो लपेटी है।
मेरी ही न आवै मेरी वीर ऐती बार वे तो,
जात धाइ ही के घर साथ लौटि लेटी है।
ऐसी तो है चेरिन की चेरी वाकी केशोदास,
जैसी तुम हा हा कर पाइ पर भेटी है।
जानति हौ नन्द जू के ढोटा हौ जू, जानों वोन,
बेऊ तो उतहि वृषभानु जू की बेटी है ॥६॥

(नायक का अपराध देख दासी नायक से कहती है कि) आप जैसी बाते कहते हैं मुझसे वैसी बातें उससे नहीं कही जा सकतीं, जिसकी गति मति लज्जा रूपी वस्त्र से लपटी हुई है अर्थात् जो लज्जा शील है उससे आपकी बातें मुझसे न कही जा सकेंगीं। वह कहा करती है कि हे सखी ! 'वह मेरे पास नही आते और धाय के घर ही जाते हैं। और आपने जैसी स्त्री को आपने पैरों पड़ कर और गिड़गिड़ाकर वश में किया है, वैसी तो उसकी चेरियों की चेरियां हैं। मैं जानती हूँ कि आप नन्द जी के पुत्र हैं पर जान लीजिए न कि वह भी तो उधर वृषभानु की पुत्री है।

चौथी सखी नाइन का बचन प्रिया प्रति—सवैया

अबही तो गये पुनि पौर हूँ लौं, बोलन जाहि तू पाछहि लागे।
कै तब कैसे पराये जु ढोटहि, ह्वै है कछू निशि द्यौस के जागे।
जो न रह्यो परै केशव कैसहुं, देखत ही सुख श्याम सभागे।
देति हौ जान क्यों राखति काहे न, आरसी यों करि आँखिन आगे ॥७॥

(नाइन सखी नायिका से कहती है कि) अभी तो वह पौर तक ही गये है कि तू उनसे बोलने के लिए पीछे-पीछे लगी हुई जा रही है। जो कहीं रात-दिन के जगने के कारण पराये पुत्र को कुछ हो गया तो तू क्या

करेगी ? जो तुझमे उनके बिना रहा जाता और श्याम (श्रीकृष्ण) को देखने से ही सुख मिलता है तो उन्हें जाने ही क्यो देती है, आरसी की भाँति आँखों के आगे ही क्यो नही रखती ?

नाइन कें बचन प्रियतम के प्रति—सवैया

बडी-बड़ी आंख बड़ी छवि सों, चितवै बाड़ केर बडो सुख दीने।
बड़ी ही विचार बडी रुचि केशव, क्यों हू मिलो सु बडी हम हीने।
बडी जिय लाज, बडो डर आली, बड़ी लहरी यौं चलैं चित लीने।
बड़ीनि हूँ सौं तो बडे दुख बोलै, इतौ बड़े मान बड़ी मन कीने ॥८॥

(नाइन प्रियतम से कहती है कि) उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से बड़ी शोभा के साथ देखते हुए बड़ा सुख दिया। उसके बड़े विचार हैं, बड़ी ही रुचि है, उससे किसी प्रकार मिलो। उसके हृदय मे बड़ी लज्जा है, सखियो का बड़ा डर है और बड़ी स्त्रियों से ही बड़े दु ख से बोलती है। इतने बड़े मान के लिए उसने इतना बड़ा मन भी कर लिया है।

पांचवीं सखी नटी का बचन नायिका प्रति —सवैया

ज्यों हौ दिखावन तोहिं गई री, तैं मोरिये ग्रीव गही फिरि माई।
आजु कहा दिख साध लगी है, दिखाऊंगी जाई तौ वे ही कन्हाई।
देखे तें शीरी है जाति भटू, अन देखे जरै तु वहै अधिकाई।
राति की वा गति द्यौस के ऐ पुन, हौं तेरी बाल निबाजन आई ॥६॥

(नटी नायिका से कहती है कि) मैं तुझे दिखलाने गई थी परन्तु तू ने उलट कर मेरी ही गर्दन पकड़ ली। आज ऐसी देखने की साध क्या लगी है ? दिखला ही दूँगी, कन्हाई (श्रीकृष्ण) तो वे ही हैं। फिर हे सखी ! देखने पर तू ठंडी पड़ जाती है और न देखने पर जलती हैं दुखी होती है)। यह बड़ी विशेष बात है। रात को तेरी वह दशा रहती है फिर दिन को यह हालत ! मैं तो हे सखी ! तुझसे बाज आई।

नटी का बचन नायक प्रति—कवित्त

जहीं-जहीं दुरै तहीं जौन्ह ऐसी जगमगे,
कैसहूँ जु केशव दुराइ ल्याउ रंग की।

पवन को पंथ अलि अलिन के पीछे आली,
अलिनी ज्यों लागी रहैं जिन्हें साध संग की।
निपट अमिल वह तुम्हैं मिलिबे कीजक,
कैसे कै मिलाऊँ गति मों पै न विहग की।
इक तो दुसह दुख देति हुती दुति हू,
बीस विस्वे विसबास भई वाके अंग की ॥१०॥

(नटी नायक से कहती है कि) वह नायिका जहाँ-जहा छिपना चाहती हैं, वहाँ-वहाँ चाँदनी की भाति जगमगाती रहती है। उसे किस प्रकार छिपा कर लाऊँ पवन-पंथ में भौंरे साथ लगते हैं और जिनको उसके साथ लगे रहने की सदा इच्छा रहती है, वे सखियाँ उसके पीछे ऐसे लगी रहती हैं जैसे भ्रमर के पीछे भ्रमरी लगी रहती है। अतः उसका मिलन हो नहीं सकता और आपको मिलने की धुन सवार है। मैं आपसे कैसे मिलाऊँ, मेरे पास कुछ पक्षियों की गति तो है नहीं। एक तो उसके शरीर की द्युति ही पहले दुख देती थी, अब उसके अंग की सुवास बीसों विश्वें (पूर्ण रूप से) विष सदृश हो गई है।

छठी सखी पड़ोसिन का वचन नायक प्रति—सवैया

पाइ परै पलिका परस्यो सु लगी रति तौलन मे लिखी हो।
सोंहै किये मुँह सोंहैं कियौ, अब लौं तुम पै गति ऐसी नती हो।
केशव कैसहुं देखन को जिन्हें, भोरही भोरी है आन दती हो।
पान खवावत ही जिन सों तुम रातिक हांसत रात हती हो ॥११॥

(पड़ोसिन नायिका से कहती हैं कि) पैरों पड़ने पर तुमने अपना पलङ्ग छूने दिया और इस तरह उनसे रति में लगकर उनके प्रेम को तौलती रही। जब उन्होंने शपथें दिलाई तब तुमने मुँह सामने किया। अब तक तुम्हारी वही दशा है। उन्हे किसी प्रकार देखने को तुम सबेरे ही भोली बनकर मुझसे आ भिड़ी हो। जिन्हें रात को पान खिलाती थी उनसे ही दिन में सतराती (ऐंठती) हो।

पड़ोसिन का बचन नायक प्रति—सवैया

हासी में बालक बासों कही हँसि, बाहू कही सुहितै करि लेख्यौ।
आँखि मिली न मिली सखि या मिलि बोई सु केशव क्यों अब रेख्यो।
चिच्याइ मरो चुप साधै कि चातक, स्वाति से मेही स्तवै सुवि शेख्यो।
आजही क्यों वह आवत ह्यां, जिनि आग लगेहू न आंगन देख्यो॥१२।

(पड़ोसिन नायक से कहती है कि) मैंने हँसी हँसी मे उससे एकाध बात हँस कर कही तो उसने भी हँस कर बातें कही इसे हित ही समझिए।। आँख मिलने पर ही वह सखी तुम्हें नहीं मिल गई। इस मिलने को मिलना क्यों समझते हैं। चातक चाहे चिल्ला-चिल्ला कर मर जाय या चुप्पी साध ले, बादल तो स्वाति मे ही पानी बरसाता है। वह आज ही यहा कैसे आ जाय जिसने आग लगने पर भी अपना आगन तक नहीं देखा।

सातवीं सखी मालिन का वचन नायिका प्रति—कवित्त

दुरि हैं क्यों भूषण बसन दुति योवन की,
देह ही की जोति होति द्योस ऐसी राति हैं।
नाह को सुवास लागे ह्वै है कैसी केशव,
सुवास ही की बास भौंर भीर फारे खाति हैं।
देखि तेरी सूरत की मूरति बिसूरति हौं,
लालन के दृग देखिबो को ललचाति हैं।
चलि है क्यों चन्द मुखी कुचन के भार भये,
कंचक के भारते लचक लंक जाति है॥१३॥

(मालिन नायिका से कहती है कि) तुम्हारे यौवन की द्युति भूषण और वस्त्रों से कैसे छिपेगी, जब तुम्हारी देह की ज्योति से ही रात-दिन के समान हो जाती है। पति की सुगन्ध लगने से क्या दशा होगी जब तुम्हारी स्वाभाविक सुगन्ध को भौरों की भीड़ खाये डालती है। अर्थात् इतनी सुगन्ध है कि भौरों के झुन्ड के झुन्ड मंडराया करते हैं। इसलिए मैं तो तुम्हारी सूरत को देख-देखकर ऐसे सोचा करती हूँ और तुम श्री

कृष्ण के मुख को देखने को ललचाती हो। हे चन्द्रमुखी! कुचों का भार होने पर तुम कैसे चलोगी जब बालो के भार ही से तुम्हारी कमर लचकी सी जाती है।

मालिन का बचन नायक के प्रति—कवित्त

घेरो जनि मोहिं घर जान देहु घनश्याम,
घरिक में लागी उर देखिवी ज्यों दामिनी।
होइ कोऊ ऐसी वैसी आवै इत उत ह्वै कै,
वेऊ वृषभानु जू की बेटी गजगामिनी।
आदित को आयो अन्त आवो बनि बलि जाऊँ,
आवत है वे ऊ बनी आई अरु यामिनी।
काम के डरन तुम कुन्ज गह्यो केशवदास,
भौरन के भयन भवन गह्यो भामिनी ॥१४॥

(मालिन नायक से कहती है कि) हे घनश्याम (श्री कृष्ण) मुझे घेरिये मत, घर जाने दीजिए। अभी घड़ी भर में आप उसे बिजली की भाँति हृदय से लगा हुआ देखेंगे। यदि कोई ऐसी-वैसी होती तो इधर-उधर होकर आ जाती,परन्तु वह गजगामिनी भी तो वृषभानु की बेटी है। अब सूर्यास्त होने को आया। मैं बलिहार जाती हूँ, आप भी बन आइए। वह भी बन कर आती है, और रात भी आ गई। आपने काम के डर से कुन्ज में स्थान लिया और उसने भौंरों के भय से घर पकड़ा!

आठवीं सखी बरइन का वचन नायिका के प्रति—कवित्त

मै न ऐसो मन तन मृदुल मृणालिका के,
सूत ऐसो सुर धुनि मनहि हरति है।
दारों कैसो बीज दंत पाँति से अरुण ओंठ,
केशवदास देखे दृग आनन्द भरति है।
ऐरी मेरी तेरी मोंहि भावत भलाई ताते,
बूझति हौं तोहि उर बूझति डरति है।

माखनसी जीभ मुख कंज सो कुँवरि कहु,
काठ सी कठेठी बात कैसे निकरति है ।।१५।।

(बरइन नायिका से कहती है कि) तेरा मन मोम जैसा कोमल है, मृणाल के सूत जैसी कोमल तेरी स्वर ध्वनि मन को हरने वाली है। अनार के बीज जैसे तेरे दाँत हैं, पल्लव जैसे लाल ओठ और तेरी आँखें देखते ही आनन्द भर देती हैं। हे मेरी सखी ! मुझे तेरी भलाई अच्छी लगती है, इसीलिए मै तुझसे पूछती हूँ, परन्तु पूछते हुए डरती हूँ। तेरी मक्खन सी कोमल जीभ, तेरे कमल से कोमल मुख से बतला, काठ जैसी कठोर बातें कैसे निकलती हैं।

बरइन का बचन नायिका प्रति —कवित्त

नैननि नवावो नेक अति ही अनीत करे,
जानत हौ तुम जैसे जग जानियतु है।
चंचल चरित्र चित चेट का गायो,
चोरी कै चितन अभिसार सो पियतु है।
एकनि के पैठे उर उररी उरोजन में,
उरझै ते केशवदास कैसं वैजियतु है।
ऐसी कहूं होति है जो बालनि की चोरी-चोरी,
चित मति मन मथ हाथ बे चियतु है ।।१६।।

(बरइन नायक से कहती है कि) आप अपनी आँखों को नीचा कीजिए क्योंकि ये अति अनीति करती हैं। इस बात को जैसे सारा संसार जानता है, वैसे आप भी जानते हैं। आपका चंचल चरित्र मन पर जादू का असर करता है। वह चित्त की चोरी करके उसे अभिसार को सौंप देता है अर्थात् उससे अभिसार कराता है। आप किसी के हृदय में प्रवेश करते है, किसी के उरोजों (कुचों) में उलझते हैं। आपके इस प्रकार उलझने में उनका जीवित रहना कैसे हो सकता है। ऐसा कहीं होता है कि ब्रज-बालाओं का चित्त और मति आप चुपके-चुपके कामदेव के हाथ बेच देते हैं।

नवीं सखी शिल्पिनी का बचन प्रिया प्रति—सवैया

अबहीं जक बोलिरी बोलि लगी, पौरहू लौं उठि जान न दीने।
मेरे ही जान भई उलटी वश, केशव हैं कहिबे कहँ कीने।
जो पै इतौ दुख पावति है, तलफै दृग मीन मनोजल हीने।
तौ कित छाड़ति है छिन एक, रहै किन चित्र ज्यों हाथहि लीने॥१७॥

(शिल्पिन नायिका से कहती है कि) अभी से तुझे बुलाने की धुनि लगी उन्हें पौर तक भी उठ कर न जाने दिया। मेरी समझ मे तो तू ही उलटे उनके वश मे हो गई है, श्रीकृष्ण को तो तूने कहने के लिए वश मे किया है। यदि तू उनके बिना इतना दुख पाती है कि उनको न देखने पर तेरे नेत्र जल के बिना मछली की भाँति तड़पने लगते हैं तो उन्हें एक क्षण को छोड़ती ही क्यों है, चित्र की भाति हाथ से ही क्यों नहीं लिए रहती।

शिल्पिनि का बचन प्रियतम प्रति—सवैया

खोट तुरी जिमि खूटि रहो गहि, ठौर कुठौरनि जानि न जाहू।
लालन आवत मारे समाज न लागे अलोक के ता जनता हू।
कोरि बिचार बिचारहु केशव देखहु बूझहि तू सब काहू।
नेह हि के फिर लागहु संगन, नैनहि के संग और निबाहू॥१८॥

(शिल्पिनि प्रियतम से कहती है कि) तुम खोटे (अड़ियल) घोड़े की भाँति खूटा पकड़े अड़े रहते हो, ठौर-कुठौर नहीं जानते। लालन करने पर नही आते और अलोक के लाजन (कोड़ा) लगने पर चलते हो। हे श्रीकृष्ण! जो मैं कहती हूँ, उसे करोड़ों प्रकार से सोच विचार लो और अपने हितैषियों से समझ बूझ लो। तुम नेत्रों के साथ ही लगे फिरते हो, प्रेम के साथ भी लगकर उसका निर्वाह करो।

दशवी सखी चुड़िहारिन का बचन प्रिया प्रति—कवित्त

मन-मन मिले कहा मिलि है, मिले को सुख,
मिलहु धौ देखहु बोलहि काहू बाल सों।
भूलि परे भौंहनि धौं बाँधि हौ कितेक दिन,

बाँधौ बलि जाऊँ बनमाली बनमाल सों।
मुहु मोरे मारे नाम रति रिस केशोदास,
मारहु घो मेरे कहे कमल सनाल सों।
नैननि ही विहँसि विहँसि कौलों, बोलिहौ जू,
बचहू तो बोलिये विहँसि मुख लाल सों ॥१६॥

(चुड़िहारिन नायिका से कहती है कि) यदि तेरा मन उनके मन से न मिला तो मिलने का क्या सुख मिलेगा ? या तो मिल कर देखो या किसी स्त्री से मिलने का सुख पूछो। वह तुम्हारी भौंहों मे भूल पड़े तो कितने दिनों तक बाधोगी ? मैं बलिहारी जाती हूँ, बनमाली (श्रीकृष्ण) को बनमाल से बाँधों। मुह मोड़ने से रति का क्रोध नहीं मरता, यदि मारना है तो मेरे कहने से, सनाल कमल से मारो। नन्द लाल (श्रीकृष्ण) से नेत्रों द्वारा ही हँस-हँस कर कब तक बोलोगी, तनिक वचनों द्वारा उनसे हँस कर भी तो बोलो।

चुड़िहारिन का बचन नायक प्रति—सवैया

आपुनहू जै दुखी दुख जाके हौ, ताहि कहा कबहूँ दुख दीजै।
जा बिन और सुहाइ न केशव ताहि सुहाइ सुतो सब कीजै।
भाग बडो जु रची तुमसों वह, तो खिझकाइ कहो कहँ लीजै।
जो रिसियाइ तौ जैये मनावन, तातो है दूध सिराइन पीजै ॥२०॥

(चुड़िहारिन नायक से कहती है कि आप जिसके दुख से दुखी होते हैं उसे कभी भी क्यों दुख देते हैं। हे केशव (श्रीकृष्ण) जिसके बिना और कुछ आपको अच्छा नहीं लगता तो उसे जो अच्छा लगे वही करना चाहिये। आपका बड़ा भाग्य है जो वह आपसे अनुरक्त है, उसे खिझाने मे आपको क्या मिलेगा ? यदि वह क्रुद्ध हो या रूठे तो उसे मनाने के लिए जाना चाहिए। दूध गर्म है उसे ठंडा करके क्यों न पीजिए ?

ग्यारहवीं सखी सुनारिन का बचन नायिका प्रति—सवैया

लोल अमोल कटाच्छ कलोल अलोलिक सो पर ओलकै फेरे।
पानिप सो प्रति पैने रसाल विशाल बने मन भावते मेरे।

केशव चीकने चौगुने चोखे, चितै के किये हरि न्याइ नचेरे।
शोच-सकोच न श्री रति रोचन धीरज मोचन लोचन तेरे ॥२१॥

(नायिका से सुनारिन कहती है कि) तेरे नेत्र चंचल अमूल्य कटाक्ष से भरे हैं। तूने ओट देकर फेर लिया है। तेरे वे नेत्र शोभा मे पूर्ण तथा पैने हैं, बड़े-बड़े और मन को अच्छे लगने वाले हैं। स्नेह पूर्ण और चौगुने तीखे हैं, अत. उन्होंने श्रीकृष्ण को देखकर जो अपना चेरा (दास) बना लिया है सो उचित ही है। तेरे नेत्र शोच, सकोच शोभा के घर हैं तथा धीरज (धैर्य) को तोड़ने वाले हैं।

सुनारिन का वचन नायक प्रति—कवित्त

हांसी में हॅसे ते हरि हरे कै झुकत मन,
हरि कै हॅसत हेर हिये अनुरागी है।
प्रेम के पहेली गूढ़ जानति जनावति हीं,
आज अधरातक लौं मेरे संग जागी है।
अबलौं ज्यों धीर धर्‌यो तैसे दिन द्वैक और,
धरो गिरिधर तुमते को बड़ भागी है।
भावती तिहारी वह काल्ह ही ते 'केशोदास',
काम की कथानि कछु कान देन लागी है ॥२७॥

(सुनारिन नायक से कहती हैं कि) हे हरि (श्रीकृष्ण) अब वह हँसी हँसने से धीरे-धीरे झुकने लगी है और मन हरण करके तथा देख-देख कर मन को हरती है। उसका हृदय अब अनुरागी होने लगा है। प्रेम की गूढ पहेली को स्वय समझने और समझाने लगी है, आज आधीरात तक मेरे साथ जागती रही है। हे गिरिधर! जैसे आपने अब तक धैर्य धारण किया, वैसे कुछ दिनों तक और धैर्य धारण करो, तुमसे बढ़ कर कौन भाग्य शाली है क्योंकि आपकी प्यारी कल ही से काम चर्चा को ध्यान लगा कर सुनने लगी है।

तो बुझती नही ।

तेरहवी सखी संन्यासिन का वचन नायिका प्रति— कबित्त

छूटि है छुटाये जब करि हौं धों कैसी तब,
केशोदास अनयास प्यास भूख भागि है ।
खेल भूलि जाइगो, जुड़ाइगो न चित्त चेत,
कछू न सुहाइगो री रैन दिन जागि है ।
ताते ते तपति दूनी सीरे ते सहस गुनी,
उपज परेगी उर ऐसी एक आगि है ।
ऐंड सों ऐ डाइ जिन अंचल उडात ओली,
ओड़त हौं काहू की जुड़ीठि उड़ि लागि है ॥२५॥

(सन्यासिनी नायिका से कहती है कि) हे सखी ! जब तुझे किसी दूसरे की दृष्टि लग जायगी तब मैं क्या करूँगी, वह क्या छुटाने पर भी छूटेगी ? तब तेरी भूख-प्यास अनायास ही भग जायगी । तब तेरा सारा खेल (राग-रंग) भूल जायगा, मन किसी काम में न लगेगा और कुछ भी अच्छा न लगेगा तथा तू रात-दिन जगती रहेगी । तेरे हृदय में एक ऐसी आग उत्पन्न हो जायगी जो गर्मी में दूना तपावेगी और ठंढ़क में हजार गुना ठंडा करेगी । इसलिए मैं आँचल पसार के तुमसे माँगती हूँ कि ऐंठ मत ।

सन्यासिनी का वचन नायक प्रति — कबित्त

शीतल हू हीतल तिहारे न बसत वह,
तुम न तजत तिल ताको उर ताप गेहु ।
आपने जो हीरा को पराये हाथ ब्रजनाथ,
दै के तौ अकाथ हाथ में न ऐसो मन लेहु ।
एते पर केशौदास तुम्हैं न प्रवाह वाहि,
वहै जक लागी भागी भूख सुख भूल्यो देहु ।
मो मुख छाड्यो छिन छलन छबीले लाल,
ऐसी तो गवाँरिन सो तुमहूं निबाहो नेहु ॥२६॥

है जिसने कामलता को तेंदू वृक्ष पर लपेटा और साँप के सिर पर मणि प्रदान की। ऐसे विधि की गति मेटी नहीं जा सकती, वह अमिट है। पहले अपना मुँह दर्पण लेकर देख लो फिर प्रमाण युक्त बात कहना। मैं तो वृषभानु सुता राधा पर जहाँ तक मेरा मन जा सकता है, ससार की सभी सुहागिनों को निछावर करती हूँ।

(७) उलाहना (प्रिया का)—कवित्त

केशोदास कौन बड़ी रूप कुल कान पै,
अनोखौ एक ते रहीं अनख उर ओलिए!
आपने समान काहू मान सै न मानै तू,
गुमान के विमान चढ़ी व्योम-व्योम डोलिए।
ऐंड़ से ऐंडाइ अति चंचल उड़ाइ ऐसी,
छाँड़ि ऐंड़ बैंड़ चितवननि रमो लिए।
दीनो मनहाथ जिन हीरा सो हरषि मन,
ऐसे हरिसों हरन नैनी हरेहूं तो बोलिए ॥१४॥

(सखी नायक से कहती है कि) तेरा ही रूप कौन बड़ा है तथा कुल मर्यादा भी कौन बड़ी है जो एक अनोखी रिस मन में छिपाए रहती है। तू अपने समान किसी को नहीं मानती और गुमान के विमान पर चढ़ी-चढ़ी आकाश में घूमती रहती है। इसलिए घमन्ड के मारे ऐंठ मत, इस ऐंठ को छोड़ दे और अपनी चितवन मे उन्हें लुभा। जिन हरि (श्री कृष्ण) ने तुझे अपना हीरा जैसा मन प्रसन्नता के साथ दे दिया उनसे, हे हरिन नैनी कभी धीरें से तो बातें कर।

श्री कृष्ण का —कवित्त

सौहन को शोच न सकोच काहू बीच कीको,
पोंछो प्यारे पी कलीक लोचन किनारे की।
माखन की चोरी की है थोरी-थोरी मोहू सुधि,
जानत कहा किशोरी मोरी है जु बारे की।
मेरी ये कुमति और कहा कहौं केशोदास,

लागत न लाल लाज इहां पग धारे की।
एती है भुठाई वांह अबहीं रूठाई यह,
छारहु तौ छूटी नाहीं पाइन के पारे की ॥१५॥

(सखी श्रीकृष्ण से कहती है कि) आपको न शपथ खाने का सोच है न किसी बीच मे पड़ने वाली मध्यस्थ) का संकोच है। हे प्यारे! आँखों के किनारों पर लगी हुई पीक की रेखा को तो पोंछो। मखन की चोरी की थोड़ी-थोड़ी याद मुझे भी है। तुम मुझे भोली-भाली किशोरी समझते हो। मेरी ही कुमति समझो और क्या कहूँ, हे लाल (श्रीकृष्ण) तुम्हें यहाँ पग रखने की अर्थात् आने की लज्जा तक नहीं है। तुम्हारी इतनी झुठाई है कि तुमने उसे रूठा दिया है। अभी तो तुम्हारी पैरों पड़ने की धूल तक नहीं छूटी।

श्री राधा का वचन सखी प्रति — सवैया

आधी सी धाइ है दाइ दवारि सी, दासिन की दुख देह दही है।
ताप के तूल तमोलिन मालिन नाइन नाह के नेह नही है।
तेरी सों तेरी सों मेरी सखी सुन तेरी अकेलि की आश रही है।
कान्ह मिलाउ कि मोहिन पैहै मैं आपन जीय कीतोहि क ही है॥१५॥

राधा अपनी सखी से कहती है कि धाय आधी रात के समान है और दाई दावाग्नि सी है और दासियों की देह दुखों से जल रही है। तमोलिन, मालिन तथा नाइन तो नायक के प्रेम मे ही आबद्ध हैं। हे सखी! तेरी सौगंध, अब मुझे अकेली तेरी आशा रह गई है। इसलिए या तो तू श्रीकृष्ण से मिला, नहीं तो मुझे जीवित न पावेगी। मैंने तुझसे अपने मन की बात कह दी है।

दोहा

इहि विधि श्याम शृङ्गार रस, बहु विधि वरणो लोइ।
जार वरण चहुँ आश्रमन, कहत सुनत सुख होइ॥

इस तरह श्रीकृष्ण के शृङ्गार रस का वर्णन अनेक प्रकार से लोग करते हैं जिसे सुनकर चारों वर्णों तथा चारों आश्रम के व्यक्तियों को कहने तथा सुनने मे सुख प्राप्त होता है।

दोहा

राधा राधारमण के, कर्यो शृंगार सुवेष।
रस आदिक आगे कहौं, और रसनि को भेष ॥

मैंने श्री राधा और श्री राधरमण (श्रीकृष्ण) के शृङ्गार का वर्णन कर दिया। अब आगे रस और रसों के लक्षणों को कहता हूँ।

सखी-जन कर्म

(१) शिक्षा (२) विनय (३) मनाना (४) मिलाना (५) शृङ्गार करना या सजाना (६) झुकना तथा (७) उलाहना देना।

चौदहवाँ प्रकाश

(१) हास्य-रस लक्षण—दोहा

नयन-बयन कछु करत जहँ, जन को मोद उदोत।
चतुर-चित्त पहिचानिये, तहाँ हास्य-रस होत ॥१॥

जहाँ नेत्रों और बचनों की चेष्टाओं से मोद उत्पन्न होता है, वहाँ चतुर चित्त वाले पहचाने कि हास्य-रस होता है।

हास्य-रस के भेद—दोहा

मन्द हास कल हास पुनि, कहि केशव अतिहास।
कोविद कवि वर्णत सबै, अरु चौथो परिहास ॥२।

'केशवदास' कहते हैं कि कोविद तथा कवि लोग हास्य रस के (१) मन्दहास (२) कलहास (३) अतिहास और (४) परिहास ये चार भेद वर्णन करते हैं।

(१) मन्दहास लक्षण—दोहा

विकसहि नयन कपोल कछु, दशन दशन के वास।
मन्दहास तासों कहैं, कोविद केशवदास ॥३॥

'केशवदास' कहते हैं कि जब नेत्र, कपोल, दाँत और ओठ कुछ विकसित होने लगते हैं, तब कोविद लोग उसे मन्द हास कहते हैं।

दोहा

वर्णत बाढै ग्रन्थ बहु, कहे न केशवदास।
औरों रस यों जानियो, सब प्रच्छन्न प्रकाश ॥४॥

केशवदास' कहते हैं कि इसी प्रकार और रसों को भी समझना चाहिये। उनका वर्णन करने से ग्रन्थ बढ जायगा, इसीलिए मैंने उनका वर्णन नहीं किया। सभी के प्रच्छन्न और प्रकाश दो भेद होते हैं।

उदाहरण श्री राधा का मन्दहास—सवैया

भेद की बात सुने ते कछू वह, मासिक ते मुसुकानि लगी है।
बैठति है तिनमें हठि कै जिनकी तुमसों मति प्रेम पगी है।
जानति हौं नलराज दमती की दूत कथा रस रग रगी है।
पूजैगी साध सबै सुख की, बड़ भाग की केशव ज्योति जगी है ॥५॥

भेद की बातें (प्रेम मयी) बातों को सुनकर वह लगभग एक महीने से मुस्कराने लगी है। जिसकी बुद्धि तुम्हारे प्रेम में पगी हुई है अर्थात् जो तुमसे प्रेम करती है, वह उन्हीं मे हठपूर्वक जाकर बैठा करती है। मैं यह भी जानती हूँ कि राजा नल की दूत कथा में बड़ा आनन्द लेती है। इसलिए मुझे ऐसा जान पड़ता है कि तुम्हारे मन की सुख साध पूरी होगी और तुम्हारे सौभाग्य की ज्योति जग गई है।

दूसरा उदाहरण—सवैया

जानै को पान खवावत क्यों हूं, गई लगि अँगुली ओठ नवीने।
तैं चितयो तबहीं तिहि भाँति जु लाल के लोचन लीलि सलीने।
बात कही हरये हँसि कै सुनि मैं समुझी वै महारस भीने।
जानति हौं पिय के जिय के अभिलाष सबै परि पूरण कीने ॥६॥

(सखी नायिका से कहती है कि) कौन जाने किस प्रकार पान खिलाते समय, उनकी उँगली तेरे नवीन ओठों से लग गई। तू ने भी उनकी ओर देखा और उसी भाँति उनके नेत्र मानो निगल लिए। फिर हँसकर धीरे से कुछ बातें कहीं जिससे मैं समझा कि वह तेरे रस (प्रेम) में भीग गये। इससे मैंने यही समझा है कि तूने प्रियतम के मन की सभी अभि-लाषाओं को पूरा कर दिया है।

श्रीकृष्ण का मन्दहास—कवित्त

दशन-बसन माहँ दरशै-दशन द्युति,
वरषि मदन रस करत अचेत हौ।
झाँई झलकति लोल लोचन कपोलन में,
मोल लेत मन क्रम वचन समेत हौ।

भौंहैं कहे देत भाउ कहो मेरी भावती के,
भावते छबीले लाल मौन कौन हेत हौ।
केशव प्रकाश हँसि कहा लेहु गेजू,
ऐसे ही हँसे ते तौ हिये को हरि लेत हौ ॥७॥

(सखी नायक श्रीकृष्ण से कहती है कि) आपके ओठों मे दाँतों की द्युति चमकती है और आप काम-रस की वर्षा करके अचेत कर देते हैं। आपके कपोलों मे चञ्चल नेत्रों की झाईं झलकती है तथा आप मन-क्रम और वचन से मोल ले लेते हैं। आपकी भौंहें मेरी सखी के भावों को कहे देती हैं, हे भावते छबीले लाल ! चुप क्यों हो। आप प्रकाश हास करके क्या लेगे ? इस मन्द हँसी से तो हृदय को ही छीने लेते हैं।

(२) कलहास लक्षण—दोहा

जहँ सुनिये कल ध्वनि कछू, कोमल बिमल बिलास।
केशव तन मन मोहिये, वर्णहु कवि कलहास ॥८॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ कुछ कल (सुन्दर) ध्वनि सुनकर कोमल और विमल विलास से तन तथा मन मोहित हो जाय, उसे कवि गण उसे कलहास कहते हैं।

श्रीराधा का कलहास—सवैया

काछे सितासित काछनी केशव, पातुर ज्यों पुतरीन विचारो।
कोटि कटाक्षन चै गति भेद नचावत नायक नेह निहारो।
बाजत है मृदुहास मृदङ्ग सो, दीपति दीपन को उजियारो।
देखत हो हरि तुम्हैं यह होतु है आँखिन बीच अखारो ॥९॥

हे श्री कृष्ण ! देखते हो, तुम्हें देखकर आँखों के बीच ही (नाच का) अखाड़ा बन जाता है। नेत्र की पुतलियाँ ही उस अखाड़े की पातुर (नर्तकी) हैं जो काले और सफेद रंग की काछनी पहने हुए हैं। करोड़ों प्रकार के कटाक्ष नाच की गति है और नायक का नेह ही नचाने वाला नायक है। मृदु हँसी के उसमें मृदङ्ग बज रहे हैं और हास की दीप्ति दीपक का प्रकाश है।

श्रीकृष्ण का कलहास—सवैया

आजु सखी हरि तो सों कछू, बडी बार लों बात कही रस भीनी।
मेलि गरे पटुका पुनि केशव हार हिये मनुहार सो कीनी।
मोहिं अचम्भो महा सुह हा कहि, चाइ कहा बहु बारन लीनी
तैं सिर हाथ दियो उनके उन गाँठि कहा हँसि आँचर दीनी ॥१०॥

(सखी नायिका से कहती है कि) हे सखी ! आज हरि (श्रीकृष्ण) ने तुझसे बड़ी देर तक प्रेम भरी बातें कीं। तेरे गले में पटुका (डुपट्टा) डाला और फिर हृदय पर हार पहना कर मनुहार (विनती) सी की। मुझे बड़ा अचभा होता है, मैं हा-हा खाती हूँ, सो कह, उन्होंने बार-बार चाव क्यों प्रकट किया ! तूने उनके सिर पर हाथ रखा और उन्होंने हँस कर तेरे आंचल में गाठ क्यों लगाई ?

(३) अतिहास लक्षण—दोहा

जहाँ हँसै निरशङ्क ह्वै, प्रकटे सुख मुख बास।
आधे-आधे बरण पद, उपज परत अतिहास ॥११॥

जहाँ निःशङ्क (निडर) होकर हँसने पर मुख की सुगन्ध से सुख उत्पन्न हो तथा मुँह से आधे-आधे अक्षर और पद निकलें, वहाँ 'अतिहास' उत्पन्न होता है।

उदाहरण श्रीराधा जी का अतिहास—कवित्त

तैसीयै जगत ज्योति शीश शीश फूलन की।
चिलकत तिलक तरुणि तेरे भाल को।
तैसी यै दशन द्युति दमकति केशोदास,
तैसी यै लसत लाल कठ-कंठ माल को।
तैसी यै चमक चारु चिबुक कपोलनि की,
तैसे चमकत नाक मोती चल चाल को।
हरैं-हरैं हँसि नेक चतुर चपल नैनी,
चित्त चक चौंधे मेरे मदन गुपाल को ॥१२॥

तू चतुर चचल नेत्र वाली धीरे-धीरे हँस कर मेरे मदन गोपाल (श्रीकृष्ण) के चित्त को चकित कर रही है। तेरे सिर पर (जड़ाऊ) शीश फूल का जैसा प्रकाश हो रहा है वैसा ही, हे तरुणी ! तेरे मस्तक का तिलक चमक रहा है। वैसी ही तेरे दाँतों की द्युति चमचमा रही है और वैसी ही तेरी कठमाला की लाल मणि सुशोभित हो रही है। उसी भाति तेरे चिबुक ठुड्डी, तथा कपोलों (गालों) की चमक है और वैसे ही तेरी नाक का हिलता हुआ मोती चमक रहा है।

श्रीकृष्ण का अतिहास—कवित्त

गिरि-गिरि उठि-उठि रीझि-रीझि लागे कंठ,
बीच-बीच न्यारो होत छबि न्यारी-न्यारी सों।
आपुल में अकुलाइ आधे-आधे आखरनि,
आछी आछी बातैं कहैं आधी एक हमारी सों।
सुनत सुहाइ सब समुझि परै न कछू,
केशोदास की सों दुरै देखो मैं हुश्यारी सों।
तरणि तनूजा तरुवर ठाढ़े,
तारी दै-दै हँसत कुमार कान्ह प्यारी सों ॥१३॥

(एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि) श्रीराधा जी और श्रीकृष्ण गिर-गिर कर उठते और रीझ-रीझ कर एक दूसरे को कंठ लगाते हैं। बीच-बीच में दोंनो एक दूसरे से निराली शोभा के साथ अलग हो जाते हैं। आपस मे व्याकुल होकर आधे-आधे अक्षरों को बोलते हुए अच्छी अच्छी बातें करते हैं। सुनने मे तो उनकी बातें अच्छी लगती हैं, परन्तु कुछ समझ मे नहीं आतीं, मैंने बड़ी होशियारी से देखा। यमुना के किनारे खड़े हुए श्रीराधा जी और श्रीकृष्ण जी ताली बजा-बजा कर हँसते हैं।

(४) परिहास लक्षण—दोहा

जहँ परिजन सब हँसि उठैं, तजि दम्पति की कान।
केशव कौनहु बुद्धिबल, सो परिहास बखान ॥१४॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ दम्पति की मर्यादा को छोड़ सब परिजन हँसने लगें उसे परिहास कहा जाता है।

उदाहरण—सवैया

आई है एक महावन ते तिय, गावत मानो गिरा पगु धारी।
सुंदरता जनु काम की कामिनी, बोलि कह्यो वृषभानु दुलारी।
गोपिकै ल्याइ गुपालहि वै अकुलाइ मिलीं उठि सादर भारी।
केशव भेंटत ही भरि अंक हँसी सब कौंक दै गोप कुमारी॥१५॥

किसी ने कहा कि महावन से एक गोप कुमारी आई है। वह ऐसा गाती है मानो सरस्वती जी ही आ गई हों। सुन्दरता में तो वह काम की स्त्री रति के समान ही है। यह सुन श्री राधा ने कहा कि 'उसे बुला।' जैसे ही वह गोपी लाई गई वैसे वह आकुलता के साथ गोपी बने हुए गोपाल (श्रीकृष्ण) से आदर सहित भेंटने को उठीं। जैसे ही उन्होंने उन्हें अंक भर गले लगाया वैसे ही सब गोपियाँ ठहाका मार कर हँसने लगीं।

श्रीकृष्ण का परिहास—सवैया

सखी बात सुनो इक मोहन की, निकसी मटुकी शिररी हलकै।
पुनि बाँधि लई सुनिये नत नारु कहूँ-कहूं कुंद करी छलकै।
निकसी उहि गैलहु ते जहँ मोहन लीनी उतारि जबै चलकै।
पतुकी धरी श्याम खिसाइ रहे उत ग्वारि हंसीं मुख आँचलकै॥१६॥

हे सखी! आज श्रीकृष्ण की एक बात सुनो! एक गोपी अपने सिर पर मटकी लेकर निकली। उस पर कहीं-कहीं (दूध या दही के) छींटे छलक रहे थे। वह उसी मार्ग से होकर निकली जहाँ मोहन (श्रीकृष्ण) थे और उन्होंने आगे बढ़ कर उस मटकी को सिर से उतार लिया। उसे खाली देखकर श्याम (श्रीकृष्ण) खिसिया गये और उधर ग्वालिनें मुख पर आँचल डाल कर हँसने लगीं।

(२) करुणा लक्षण—दोहा

प्रिय के विप्रिय करण ते, आन करुण रस होत।
ऐसो बरण बखानिये, जैसे तरुण कपोत॥१७॥

प्रिया के वियोग से करुण रस की उत्पत्ति होती है, जिसका रंग तरुण कबूतर सा बतलाया गया है।

उदाहरण प्रिया जी का करुणा रस—कवित्त

तेज सूर से अपार चन्द्रमा से सुकुमार,
शम्भु से उदार अति उर धरियत है।
इन्द्र जू से प्रभु पूरे, राम जू से रण शूरे,
काम जू से रूप रूरे हिय हरियत है।
सागर से धीर गणपति से चतुर अति,
ऐसे अविवेकी कैसे दिन भरियत है।
नन्द मति मन्द महा यशुदासों कहौं कहा,
ऐसे पूत पाइ पशुपाल करियत है ॥१८॥

जो सूर्य से भी बढ़कर तेजस्वी, चन्द्रमा से सुकुमार तथा श्री शङ्कर से भी बढ कर उदार माने जाते हैं। जो इन्द्र से सामर्थ्यवान्, श्री राम जैसे सुन्दर स्वरूपवान् तथा हृदय को हरने वाले हैं। जो समुद्र के समान धीर श्री गणेश जैसे अति चतुर हैं, उनके दिन ऐसे अविवेकियों में कैसे बीतते हैं और मन्द बुद्धि नन्द तथा यशोदा से क्या कहूँ, जिन्होंने ऐसा पुत्र पाकर उसे पशुपाल बना रखा है।

श्रीकृष्ण का करुणा रस—कवित्त

चंपे कैसी कली अली केशव सुवास भली,
रूप कैसी मन्जरी मधुप मन भाइये।
देव कैसी बानी अति बानी ते सयानी,
देवराज कैसी रानी जानी जग सुखराइये।
काम की कलासी चपला सी काम,
अविलासी कमलासी धरे देह पूरे पुन्य पाइये।
कौन कीने निपट कुजाति जाति ग्वार,
ऐसी राधिका कुँवरि पर गोरस बिचाइये ॥१६॥

जो चम्पक फूल की कली जैसी सुगन्ध से भरी हुई और सौंदर्य की मन्जरी है तथा मधुप प्रेमियों, के मन को अच्छी लगती है। जिसकी वाणी देव वाणी जैसी है और देवराज (इन्द्र) की रानी जैसी है और जगत को सुख देने वाली है। जो कामदेव की कला के समान, चपला जैसी, तथा देह धारण करके लक्ष्मी का अवतार जैसी है तथा जो बडे पुन्य से मिलती है। इन बिलकुल गवार ग्वालों को किसने बसाया है जो ऐसी राधिका कुवरि से गोरस बिंकवाते हैं।

रौद्र रस लक्षण—दोहा

होहि रौद्र रस क्रोध में, विग्रह उग्र शरीर।
अरुण बरण बरणात सबै, कहि केशव मतिधीर ॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि क्रोध से रौद्र रस उत्पन्न होता है जिसमें विग्रह तथा उग्र शरीर हो जाता है। इसका रंग लाल बतलाया गया है।

उदाहरण प्रिया जी का रौद्र रस—कवित्त

केहरी की हरी कटि करी मृग मीन फणि,
शुक पिक कज खन्जरीट बन लीनो है।
मृदुल मृणाल बिम्ब चंपक कराल बेल,
कुंकुमरू दाड़िम को दूनो दुख दीनो है।
जारत कनक तन तनक तनक शशि,
घटत-बढत बधुजीव गंध हीनो है।
केशोदास दास भयो कोविद कुवर कान्ह,
राधिका कुँवरि कोप कौन पर कीनो है ॥२१॥

(सखी नायिका राधा से कहती है कि) हे राधा! सिंह ने तुम्हारी कमर की बराबरी की थी, उसकी तुमने कमर छीन ली। इसी तरह हाथी की चाल, मृग के नयन, मीन की चचलता, ले ली। शुक, पिक, कज, और खजरीट जो तुम्हारे अंगों की बराबरी करने चले थे, वन को भाग गये। तुमने कोमल मृणाल, चंपक, हंस, बेल, कुंकुम तथा अनार को दूना दुख दिया है। (क्योंकि ये भी तुम्हारे अङ्गों की बराबरी करते थे)।

सोना बेचारा अपना शरीर ही जलाता है, चन्द्रमा थोड़ा-थोड़ा घटता है और बंधुजीव (दुपहरिया का फूल) तो गंध हीन ही हो गया है। श्रीकृष्ण तुम्हारे दास ही बने हुए हैं। अब बताओ राधा! तुमने किस पर क्रोध किया है?

श्रीकृष्ण का रौद्र रस कवित्त

मीड़ि मार्‌यो कलह वियोग मार्‌यो बोरि कै,
मारोरि मार्‌यो अभिमान मार्‌यो भय मान्यो है।
सबको सुहाग अनुराग लूटि लीनो,
दीनो राधिका कुँवरि कहँ सब सुख सान्यो है।
कपट-कपट डार्‌यो निपट कै औरन सों,
मेटी पहिचानि मन में हूं पहिचान्यो है।
जीत्यो रति रण मथ्यो मनमथ हू को मन,
केशोदास कौन हूं पै रोष उर आन्यो है॥२२॥

(सखी नायक से कहती है कि) तुमने कलह को मार डाला, वियोग को मार कर डुबा दिया और अभिमात को मरोड़ डाला जो तुमसे अत्यन्त भयभीत हुआ। सब के सुहाग और अनुराग लूट कर राधा जी को दे दिया। कपट को छाँट डाला पहचान मिटा दी, रति-रण में मनमथ (कामदेव) का मन भी मथ डाला, अब हे श्रीकृष्ण! किस पर क्रोध आया है?

(४) वीर रस लक्षण—दोहा

होहि वीर उत्साह मय, गौर वरण द्युति अंग।
अति उदार गम्भीर कहि, केशव पाइ प्रसंग॥२३॥

'केशवदास' कहते हैं कि उत्साह से वीर रस की उत्पत्ति होती है, जिसका रंग गौर माना गया है।

उदाहरण प्रिया जी का वीर रस—कवित्त

गति गजराज साजि देह की दिपति वाजि,
हाव रथ भाव पति राजि चल चालसों।
लाज साज कुल कानि शोच पोच भव मानि,

भौंहैं धनु तानि बान लोचन विशाल सों।
केशोदास मंदहास असि कुच भट भिरे,
भेंट भये प्रति भट भाले नख जाल सों।
प्रेम को कवच कसि, साहस सहायक लै,
जीति रतिरण आजु मदन गुपाल सों ॥२४॥

(सखी राधिका जी से कहती है कि चाल का हाथी, देह-दीप्ति का घोड़ा, हावों का रथ, और भावों के सिपाही साथ में लेकर लज्जा, कुल-कानि, शोच, आदि को भौंहों के धनुष तथा लोचनों के वाणों से भय-भीत करके एव मन्दहास की तलवार, कुचों के योद्धा और नखच्छद की बर्छिया लेकर और प्रेम का कवच कस कर तथा साहस को सहायक बना कर आज मदन गोपाल से रति-युद्ध में जीतो।

श्रीकृष्ण की वीर रस—कवित्त

अघ ज्यों उदारि हौ कि बक ज्यो बिदारि हौ,
केश ज्यों कि केशोदास केशी ज्यों पछारि हौ।
हरि हौ कि प्राणनाथ पूतना के प्राणनि ज्यों,
बन ते कि बनमाली काली ज्यों निकारि हौ।
करिहौ विमद धन बाहन ज्यों घनश्याम,
काहूँ सों न हारे हरि याही सों क्यों हारि हौ।
वे ही काम कामवर ब्रज की कुमारि कानि,
मारतु हौ नन्द के कुमार कब मारि हौ ॥२५॥

(सखी नायक श्रीकृष्ण से कहती है कि) तुम अघासुर की तरह उसे मारोगे या बकासुर की भाँति उसे चीर डालोगे। अथवा केश या केशी की तरह उसे पछाड़ोगे। या पूतना के प्राणों की तरह उसके प्राण हरोगे या काली नाग की तरह वन से निकाल बाहर कर दोगे। हे घनश्याम! या धन वाहन की भाँति उसे मद रहित करोगे? तुम अब किसी से नहीं हारे जो उसी से क्यों हारोगे। हे नन्दकुमार! अब ब्रज की कुमारियों को यह काम मारे डालता है, अब बतलाओ, इसे कब मारोगे?

(५) भयानक रस लक्षण—दोहा

होहि भयानक रस सदा, केशव श्याम शरीर
जाको देखत सुनत ही, उपज परे भयभीर ।।२६।।

'केशवदास' कहते हैं कि भयानक रस सदा काले शरीर का होता है जिसे देखते और सुनते ही भारी भय उत्पन्न हो जाता है।

उदाहरण श्रीराधा जी का भयानक रस—सवैया

भुव मंडल मंडित कै घन घोर, उठे दिव मंडल मडि घटी।
घहराति घटा घन बात के संघट, घोष घटै न घटी हूं घटी।
दशहूँ दिशि केशव दामिनि देख, लगी पिय कामिनि कंठ तटी।
जनु पारथ पाइ पुरंदर के बन, पावक की लपटैं झपटी ।।२७।।

आकाश को चारों ओर से घेरती हुई घटाओं ने पृथ्वी मन्डल को भी घेर लिया। पवन के संयोग से बादल घोर गर्जना करने लगे और क्षण-भर को भी वह गर्जना कम नहीं होती। दशो दिशाओं में बिजली को चमकता हुआ देखकर कामिनी अपने प्रियतम के कंठ में इस प्रकार लगी मानो अर्जुन को पाकर इन्द्र के वन में आग की लपटें झपटी हों।

श्रीकृष्ण का भयानक रस—कवित्त

रिस में विरस बोल, विष ते सरस होत,
जाने सो प्रबल पित्त दाखै जिन चाखी है।
केशोदास दुख दीबे लाइक़ब भये तुम,
आज लहु जी में जाकी आँखें अभिलाषी है।
सूधे हो सुधारिबे को आये सिखवन मोहिं,
सूधे हू में सूधी बातें मोसों उन माखी है।
ऐसे में हौं कैसे जाऊँ दूरिहू धों देखी जाय,
काम की कमान सी चढ़ाइ भौंह राखी है ।।२८।।

क्रोध में अप्रिय बातें विष से भी बढ़ कर तीखी लगती हैं। जिसने दाखों को चखा हो वही पित्त की प्रबलता को जानता है। आज तुम उसे दुख देने लायक तो बने, जिसके नेत्रों की चाह तुम्हारे मन में आज तक

है। तुम बड़े सीधे हो जो मुझे सिखाने के लिए आये हो। उसने मुझसे सीधी दशा मे ही सीधी-सीधी बातें कही हैं परन्तु अब (इस क्रोध की दशा में) मैं कैसे जाऊँ क्योंकि उसने काम की कमान जैसी भौंहें जो चढ़ा रखी हैं वे दूर ही से दिखलाई पड़ती हैं।

(६) वीभत्स रस लक्षण — दोहा

निन्दा मय वीभत्स रस, नील बरण बपु तास।
केशव देखत सुनत ही, तन मन होइ उदास ॥२६॥

'केशवदास कहते हैं कि वीभत्स रस निन्दामय (घृणात्मक) होता है तथा उसका शरीर नीला होता है। इस रस को देखने सुनने पर शरीर और मन उदास हो जाता है।

उदाहरण श्रीराधा का वीभत्स रस—कवित्त

माता ही को मांस तोहि लागतु है मीठो मुख,
पियत पिता को लोहू नेक न अघाति है।
भैयन के कठनि को काटत न कसकति,
तेरो हियो कैसे है जु कहत सिहाति है।
जब-जब होत भेंट मेरी मटू तब-तब,
ऐसी सोहैं दिन उठि खाति न अघाति है।
प्रेतिनी पिशाचिनी निशाचरी की जाति है तू,
केशोदास की सों कहु तेरी कौन जाति है ॥२०॥

(सखी नायिका राधा जी से कहती है कि) तुम्हें माता हीं का मांस मुख को मधुर लगता है (क्योंकि तुम 'माता का मास खाऊ' शपथ किया करती हो, और तुम पिता का खून पीते अघाती नहीं। क्योंकि 'पिता का खून पिऊँ' भी कहा करती हो। इसी तरह भाइयों का गला काटते तुम्हारे हृदय मे तनिक भी कसक नहीं होती। (कारण 'भाइयों का गला काटू' भी तुम शपथ खाते समय कहती हो)। मुझसे तुम्हारी भेंट जब-जब होती है तब-तब तुम ऐसी ही झूठी-झूठी सौगंधे खाते हुए नहीं अघातीं। इससे मुझे ज्ञात होता है तुम प्रेतिनी, पिशाचिनी या निशाचरी

की पुत्री हो। तुम्हें श्रीकृष्ण की शपथ, तुम्हीं बतलाओ, तुम्हारी कौन जाति है?

श्री कृष्ण का वीभत्स रस—कवित्त

टूटे टाटि घुन-घने घूम घूम सेन सने,
झींगुर छगोड़ी सांप बिच्छिन की घात जू।
कंटक कलित त्रिन बलित बिगंध जल,
तिनके तल पत लता को ललचात जू।
कुलटा कुचील गात अंध तम अधरात,
कहि न सकत बात अति अकुलात जू।
छेड़ी में घुसे कि घर ईंधन के घनश्याम,
घर-घर घरनीनि जात न घिनात जू ॥२१॥

(नायिका नायक से कहती है कि) जहाँ पर टूटी हुई छान में सैकड़ों घुन लगे हुए हैं, धुआँ का गुब्बार भरा हुआ है, झींगुर, मकड़ी, साँप तथा बिच्छू निवास करते हैं। जो कांटों से भरी तथा घास-फूस से भरी तथा दुर्गन्ध युक्त है उस शय्या को तुम ललचाते हो। जो गंदे शरीर वाली काली कलूटी स्त्रियां हैं उनके लिए आधीरात में व्याकुल होते हो। हे घनश्याम! छेड़ी (छोटी गली) और ईंधन के घर (लकड़ियों के रखने की कोठरी) में घुसते हुए तुम घिनाते नहीं।

(७) अद्भुत रस लक्षण—दोहा

होहि अचम्भौ देखि सुनि, सो अद्भुत रस जान।
केशवदास विलास निधि, पीत बरण बपु मान ॥२२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिसे देखने या सुनने पर अचम्भा या आश्चर्य उत्पन्न हो वह अद्भुत रस कहलाता है। इसके शरीर का पीला रङ्ग माना गया है।

उदाहरण प्रिया का अद्भुत रस—कवित्त

केशोदास बाल बैस दीपत तरुण तेरी,
बाणी लघु बरणत बुद्धि परमान की।

कोमल अमल उर उरज कठोर जाति,
अबला पै बलबीर बन्धन बिधान की।
चंचल चितौनि चित अचल स्वभाव साधु,
सकल असाध भाव काम की कथान की।
बेंचत फिरत दधि लेत तिन्है मोल लेत,
अद्भुत रस भरी बेटी वृषभान की ॥३३॥

अद्भुत रस से भरी हुई वृषभानु की बेटी राधा तू दही बेचती फिरती है और जो दही लेते हैं उन्हें मोल ले लेती हैं। तेरी उम्र तो बाल है परन्तु दीप्ति या शोभा तरुणियों जैसी है। वाणी लघु और बुद्धि तीव्र है। तेरा हृदय कोमल और निर्मल है तथा उरोज कठोर है। तू अबला जाति की है परन्तु बलबीर (श्रीकृष्ण) को भी बन्धन में बाध लेती है। तेरी दृष्टि चंचल है पर चित्त अचल है। स्वभाव साधु है तो काम की कथाओं से भरे हुए तेरे सभी भाव असाधु हैं।

दूसरा उदाहरण—कवित्त

ब्रज की कुमारिका वे लीने शुक शारिका,
पढ़ावें कोक कारिकान केशव सबै निबाहि।
गोरी-गोरी भोरी-भोरी थोरी-थोरी बैस फिरैं,
देवता सी दौरी दौरी आई चोरा-चोरी चाहि।
बिन गुण तेरी आनि भृकुटी कमान तानि,
कुटिल कटाक्ष बाण यहै अचरज आहि।
एते मान डीठ ईठ तेरे को अदीठ मन,
पीठ दै-दै मारती पै चूकतीं न कोऊ ताहि ॥३४॥

ब्रज की कुमारियाँ (कन्याएं) तोता-मैना को लिए कोक-शास्त्र की परिभाषाओं को भली-भाँति पढ़ाती हैं। वे लोग गोरी-गोरी भोली-भाली और थोड़ी वयस की हैं। सब की सब दौड़कर (श्रीकृष्ण) को छिपे-छिपे ऐसे देख आई जैसे कोई देवता (क्योंकि देवता सब को छिपे-छिपे देख लेते हैं और उन्हें कोई नहीं देखता)। तेरी सौगंध बिना डोरी के भौंह

रूपी धनुष को खींच कर और उन पर कुटिल कटाक्ष के बाण रख कर, मेरे मित्र श्रीकृष्ण के अदृश्य मन पर ऐसा प्रहार करती है कि आश्चर्य होता है। वे अपना निशाना सामने से नहीं पीठ दे देकर अर्थात् पीछे से छिपे रुप से मारती हैं परन्तु उनका एक भी निशान नहीं चूकता।

श्रीकृष्ण का अद्भुत रस—कवित्त

माखन के चोर मधु चोर दधि दूध चोर,
देखत ही देखत हियो हरि लेत हैं।
पुरुष पुराण अरु पूरण पुराण इन्हें,
पुरुष पराण सु कहत किहि हेत हैं।
केशवदास देखि-देखि सुरन की सुंदरि वे,
करतीं विचार सब सुमति समेत हैं।
देखि गति गोपिका की भूलि जात निज गति,
अगतिन कैसे धौं परम गति देत हैं ॥८५॥

ये मक्खन, मधु, दही तथा दूध के चोर हैं, परन्तु देखते ही देखते हृदय को हर लेते हैं। पुराण पुरुष (ऋषि आदि) इन्हें पूर्ण ब्रह्म न जानें क्यों बतलाते हैं। इनके इन अद्भुत रहस्यों को देख-देख कर देवताओं की स्त्रियां बुद्धि पूर्वक सोचती हैं कि जो गोपिकाओं की गति (चाल) देखते ही अपनी गति भूल जाते हैं, वे भला पापियों को परम गति कैसे देते होंगे।

(८) समरस लक्षण—दोहा

सबते होइ उदास मन, बसै एक ही ठौर।
ताही सों समरस कहैं, केशव कवि शिर मौर ॥८६॥ *

'केशवदास' कहते हैं कि जब मन सब ओर से उदासीन होकर एक स्थान पर स्थिर हो जाता है, तब कवि श्रेष्ठ उसे समरस या शान्ति रस कहते हैं।

उदाहरण प्रिया जी का समरस—सवैया

देखै नहीं अरविंदनि त्यों चित,
चन्द की आनन्द कंद निकाई।
कामिनि काम कथा करै कान न,
ताकै त्रिधाम की सुन्दर ताई।
देखि गई जब ते तुमको,
तब ते कछु वाहि न देख्यो सुहाई।
छोड़ैगी देह जो देखे बिना,
अहो दे हुन कान्ह कहू है दिखाई॥२७॥

(सखी नायक श्रीकृष्ण से कहती है कि) वह न तो कमलों की ओर देखती है और न चन्द्रमा की सुख मूल शोभा की ओर दृष्टि पात करती है। वह कामिनी काम कथा पर ध्यान लगाती है। तीनों लोकों में उसकी सुन्दरता के समान किसी की सुन्दरता नहीं है। वह जब से आपको देख गई है तब से उसे कुछ देखना अच्छा नहीं लगता। इसलिए हे कान्ह (श्रीकृष्ण)! जो वह आपको बिना देखे देह छोड़ देगी तो आप उसे कहीं पर दर्शन क्यों नहीं दे देते?

श्रीकृष्ण का समरस—सवैया

खारिक खात न दारौ उदाखन,
माखन हूँ सह मेटि इठाई।
केशव ऊख मयूखहि दूखत,
आइहौं तो पहँ छाड़ि जिठाई।
तो रद नच्छद को रस रंचक,
चाखि गये करि के हूँ ढिठाई।
ता दिन ते उन राखी उठाय,
समेत सुधा वसुधा की मिठाई॥२८॥

जिस दिन से वह तेरे ओठों का धृष्टता पूर्वक थोड़ा सा रस चख गये हैं उस दिन से उन्होंने सुधा सहित वसुधा (पृथ्वी) भर की मिठाई

को उठा कर रख दिया है अर्थात् छोड़ दिया है। उस दिन से न तो छुहारा खाते हैं, न मक्खन खाते हैं और न दाख। अनार की मित्रता भी उन्होंने छोड़ दी है अर्थात् अनार भी रुचिकर नहीं होता। वह ऊख और महूख (शहद) की भी निन्दा करते हैं। यह बात मैं तुमसे अपने जेठे पन का ध्यान छोड़ कर, कहने आई हूँ।

दूसरा उदाहरण कवित्त

दनुज मनुज जीव जल-थल जननि को,
परयोई रहत जहाँ काल सों समरु है।
अनंत-अनत अज अमर मरत पर,
केशव निकस जानें सोई तो अमरु है।
बाजतु श्रवण सुनि समुझि शबद करि,
बेदिन को बाद नाही शिव को डमरु है।
भागहु रे भागो भैया भागनि ज्यों भाग्यो परै,
भव के भवन माँझ भय का भँवरु है।३६॥

'केशवदास' कहते हैं कि इस संसार में राक्षस, मनुष्य तथा अन्य जल-थल के जीवों का काल से समर ठना रहता है। अनन्त ब्रह्मादि देवता भी मर-मर कर जीव योनि में पड़ते हैं, अतः जो इससे निकलने की जानकारी रखता है, वही सच्चा अमर है। जो ध्वनि तेरे कानों में सुनाई पड़ती है उसे सुन और समझ वह कानों का शब्द नहीं प्रत्युत शङ्कर जी के डमरू का शब्द है। इसलिए, भाइयो भागो, जिससे भाग्यवश भागते बने, भागे; इस संसार में भय का भँवर है।

दोहा

इहि विधि बरणों बरण बहु, नव रस रसिक विचारि।
बाँधहुं वृत्ति कवित्त की, कहि केशव विधि चारि॥४०॥

'केशवदास' कहते हैं कि इस प्रकार मैंने नव रसों का वर्णन किया, अब कवित्त की वृत्तियों को कहता हूँ जो चार प्रकार की होती हैं।

(१) हास्य रस

(१) मन्दहास (२) कलहास (३) अतिहास (४) परिहास

(२) करुणा रस

(३) रौद्र रस

(४) वीर रस

(५) भयानक रस

(६) वीभत्स रस

(७) अद्भुत रस

(८) सम रस

पंद्रहवाँ प्रकाश

वृत्ति वर्णन—दोहा

प्रथम कौशिकी भारती, आरभटी भनि भाँत।
कहि केशव शुभ सात्त्वकी, चतुर-चतुर विधि जाति ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि वृत्तियाँ चार प्रकार की बतलाई गई हैं। (१) कौशिकी (२) भारती (३) आरभटी और (४) सात्त्विकी।

(१) कौशिकी लक्षण—दोहा

कहिये केशवदास जहँ, करुणा हास शृंगार।
सरल बरण शुभ भाव जहँ सो कौशिकी विचार ॥२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ करुणा, हास्य तथा शृङ्गार रस होता है तथा जिसके सरल अक्षर और शुभ भाव होते हैं, वह कौशिकी वृत्ति होती है।

उदाहरण—कवित्त

मिलिबे को एक मिली-मिली फिरैं दूति कानि,
मिलि मन मनहिं बिलास बिलसात हैं।
बोलिबे को एक बाल बोल सुनिबे को और,
बोलि-बोलि तीर थनि मतनि बसति हैं।
देखिबे को एकै फिरैं देवता सी दौरी-दौरी,
देवता मनाय दिन दान मैं नसति हैं।
कीजै कहा करम को इहि रूप मेरी माई,
ये तौ मेरे कान्ह जू के नाम हि हँसति हैं ॥३॥

कुछ तो दूतियों द्वारा उनसे मिलने के लिए घूमती हैं, और मन ही मन विलास का आनन्द उठाती हैं। कुछ उनसे बोलने के लिए और कुछ उनके वचन सुनने के लिए तीर्थों में अनेक प्रकार के व्रत करती हैं। कुछ देवता सी उन्हें देखने के लिए दौड़ी-दौड़ी फिरती हैं और देवताओं को

मना कर प्रति दिन दान मे लगी रहती हैं। हे सखी! इतना होने पर भी इनके (श्याम) रूप को मैं क्या करूँ यह तो मेरे कृष्ण के नाम से ही हँसने लगती है।

(२) भारती लक्षण दोहा

बरणै जामें वीर रस, अरु अद्भुत रस हास।
कहि केशव शुभ अर्थ जहँ, सो भारती प्रकास ॥४॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिसमें वीर अद्भुत और हास्य-रस होता है तथा जिसका अर्थ सुन्दर होता है, वह भारती वृत्ति कहलाती है।

उदाहरण--कवित्त

काननि कनक-पत्र चक चमकत चारु,
ध्वजा फुल-फुली झलकति अति सुखदाइ।
केशव छबीलो छत्र शीश फूल सारथी सो,
केसर की आड़ आछि राधिका रची बनाइ।
नीके ही नकीब सम नीको नकमोती नाक,
एक ही बिलोकन गुपाल तौ गये बिकाइ।
लोचन विशाल भाल जरित जराऊ लाल,
मानो चढ्यो मीनन के रथ मनमथ राइ ॥५॥

कानों में जो सोने के कर्णफूल हैं, वही पहिए हैं। जो झुमके झलक रहे हैं वही अति सुख देने वाली ध्वजा है। शिर पर जो शोभा युक्त शीश फूल है, वही सारथी है और केसर की आड़ भली भाँति बनाई हुई धुरी है। नाक का मोती नकीब के समान है। एक ही चितवन पर गोपाल (श्रीकृष्ण) तो मानों बिक गये हैं। बड़े-बड़े नेत्र और माथे पर जड़ाऊ बेंदा है। ऐसा ज्ञात होता है, मानो मछलियों के रथ पर कामदेव सवार हों।

(३) आरभटी लक्षण—दोहा

केशव जामें रूद्र रस, भय बीभत्स जान।
आरभटी आरम्भ यह, पद-पद जमक बखान ॥६॥

'केशवदास' कहते कि जिसमें रौद्र, भयानक और बीभत्स रस हो तथा पद-पद में जहाँ 'यमक' दिखलाई पड़े, उसे आरभटी जानना चाहिए।

उदाहरण – सवैया

घोर घने घन घोरत सज्जल, उज्जल कज्जल की रुचि राचैं।
फूले फिरैं इभ से नभ धाइक, सावन की पहली तिथि पाचैं।
चौहूँ दिशा तड़िता तड़पैं डरपैं, बनिता कहि केशव साँचैं।
जानि मनो ब्रजराज बिना, ब्रज ऊपर काल-कुटुम्बिनी नाचैं ॥७॥

घोर घने तथा सजल बादल गजरते हैं जिनकी उज्जवल (सफेद) और कज्जल (काली) शोभा है। सावन की पहली पन्चमी तिथि को ये आकाश-दूत हाथी के समान फूले-फूले फिर रहे हैं। चारों ओर बिजली चमक रही है और ब्रज की बनिताएँ सचमुच बहुत भयभीत हो रही हैं। ऐसा ज्ञात होता है मानो ब्रजराज (श्रीकृष्ण) के बिना ब्रज के ऊपर काल कुटुम्बिनी (मृत्यु) नाच रही है।

(४) सात्विकी लक्षण—दोहा

अद्भुत वीर शृङ्गार रस, समरस बरणि समान।
सुनतहि समुझत भाव जिहिं, सो सात्विकी सुजान ॥८॥

जहाँ पर अद्भुत, वीर, शृङ्गार और शान्ति रस समान रूप में मिलें और जिसका भाव सुनते ही समझ में आजाय, वह सात्त्विकी वृत्ति समझनी चाहिए।

उदाहरण—कवित्त

केशोदास लाख-लाख भाँतिन के अभिलाष,
बारि देरी बावरी न बारि हिये होरी सी।
राधा हरि केरी प्रीति सबतें अधिक जानि,
रति रतिनाथ हू में देखो रति थोरी सी।
तिनहूं में भेद न भवानि हूं पै पार्यो जाइ,
भारती की भारती है कहिबे को भोरी सी।

एकै गति मति एकै प्राण एकै मन,
देखिबे को देह द्वै हैं नैनन की जोरी सी ॥६॥

(एक सखी किसी अन्य नायिका से कहती है कि) तू लाखों भाँति की अभिलाषाओं की, हे पगली ! जलादे और अपने हृदय में होली-सी मत जला। राधा और श्रीकृष्ण की प्रीति सबसे अधिक समझ, मैंने कामदेव और रति का प्रेम भी इनसे कम ही पाया है। इनके परस्पर के प्रेम में भवानी जी भी भेद नहीं डाल सकतीं। और तो क्या भारती (सरस्वती जी) की भी उसके आगे रत्ती भर शोभा रह जाती है। वैसे कहने को भोली सी जान पड़ती है। उन दोनों की एक मति, एक प्राण तथा एक मन हैं। देखने को दो शरीर हैं परन्तु दोनों नेत्रों द्वारा जुड़े हुए हैं।

दोहा

इहि विधि केशवदास कहि, नवरस वरण कवित्त।
पांच भाँति अनरस सुनो, ताहि न दीजै चित्त ॥१०॥

'केशवदास' कहते है कि 'इस प्रकार मैंने नवरसों के कवित्तों का वर्णन कर दिया। अब पाच भाँति के अनरसों को सुनो! परन्तु इन पर कोई ध्यान न देना चाहिए।
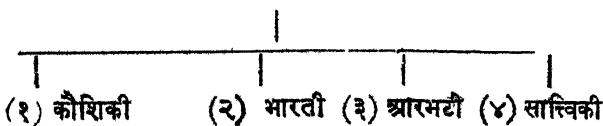
सोलहवाँ प्रकाश

अनरस वर्णन—दोहा

प्रत्यनीक नीरस विरस, केशव दुःसंधान।
पात्रादुष्ट कवित्त बहु, करहिं न सुकवि बखान ॥१॥

'केशवदास' कहते हैं कि प्रत्यनीक, नीरस, विरस, दुःसंधान तथा पात्रादुष्ट अनरस के भेद हैं, इन्हें कवि लोग वर्णन नहीं करते।

(१) प्रत्यनीक लक्षण—दोहा

जहँ शृंगार बीभत्स, भय, विरसहि बरणै कोइ।
रौद्र सु करुणा मिलत ही, प्रत्यनीक रस होइ ॥२॥

जहाँ पर शृङ्गार, बीभत्स तथा भयानक जैसे परस्पर विरोधी रसों का तथा रौद्र और करुणा का साथ-साथ वर्णन करे वहाँ प्रत्यनीक रस होता है।

उदाहरण—सवैया

हँसि बोलत ही सु हँसे सब, केशव लाज भगावत लोक भगै।
कछु बात चलावत घैर चलै मन आनत ही मन मत्थ जगै।
सीख तू जु कही सुहुती मन मेरे हीं, जानिये नेह हिये उमगै।
हरि त्यों नेकु दृष्टि पसारत ही अंगुरीनि पसारन लोग लगै ॥३॥

जब मैं हँसती बोलती हूँ तब सब लोग हँसते हैं और लज्जा को भगाती हूँ तो लोग भगते हैं अर्थात् लज्जा छोड़ कर देखती हूँ तो मारे घृणा के मुझसे दूर-दूर रहते हैं। कुछ बातें करती हूँ तो निन्दा होने लगती है, जो मन चलाती हूँ तो कामोद्दीन होता है या काम जाग्रत होता है। इसीलिए हे सखी! जो तू मुझसे कहती थी (कि प्रेम मत कर) वह मेरे मन में भी थी और यही जानकर हृदय उत्साहित नहीं होता, क्योंकि हरि (श्रीकृष्ण) की ओर तनिक भी दृष्टि करते ही लोग उँगली उठाने लगते हैं।

(२) नीरस लक्षण—दोहा

जहाँ दम्पती मुँह मिलै, सदा रहै यह रीति।
कपट रहै लपटाय मन, नीरस रस की प्रीति ॥४॥

जहाँ पर दम्पति (नायक-नायिका) मुँह से तो मिले रहें परन्तु हृदय मे कपट रखे वही नीरस की प्रीति कहलाती है।

उदाहरण—सवैया

गाहत सिन्धु सयाननि के, जिनकी मति की मति देह दहेली।
मोहि हँसी दुख दोऊ दई तिनहूं सो जनावत प्रेम पहेली।
आजु लों कानन हू न सुनी सुतौ देखि चली हम सौति सहेली।
जानी है जानी मिली मुह हीं, हिय ना हिये भावत गर्व गहेली ॥५॥

चतुराई के समुद्र की थाह लेते-लेते जिनकी बुद्धि भली-भाँति भीग चुकी है। (अर्थात् जो चतुराइयों के देखते-देखते अनुभवी हो चुकी है) उन्हीं से तू प्रेम की पहेली जनाती है, इससे हंसी और दु ख दोनों होते हैं। मैंने आज तक सौत सहेली होने की बात कानों तक से नहीं सुनी थी, सो आज आँखों से देख ली। इसलिए हे गर्वीली! मैंने समझ लिया कि मुह से ही मिली हो तुम्हें हृदय मे नहीं भाते।

(३) विरस लक्षण—दोहा

जहाँ शोक महि भोग को, बरणि कहै कवि कोइ।
केशवदास हुलास सों, तहँही बीरस होइ ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ पर शोक में कोई कवि भोग का आनन्द वर्णन करता है, वहा ही विरस हो जाता है।

उदाहरण—कवित्त

केशवदास न्हान दान खान पान भूल्यो गान,
गयो ज्ञान भयो प्राण पीठि की सी पीठि है
छाँड़हु रसिक लाल यह जक वह बाल,
देखत ही सब सुख तुमहिं उबीठि है।
ऐसी शोच सीठी-सीठी चीठी अति दीठी सुने,

मीठी-मीठी बात निजु नीके हू में नीठि है।
ईठनि सों तूटी ईठी ताके शोक की अंगीठी,
उठी जाके उर में सु कैसे हँसि डीठि है ॥७॥

(सखी नायक से कहती है कि) उस (नायिका) को नहाना, दान करना, खाना-पीना और गाना सब भूल गया। उसका ज्ञान भी चला गया और प्राण चौकी की पीठ हो गये। हे रसिक लाल! तुम यह धुन छोड़ दो कि तुम्हें देखते ही सब सुखों को छोड़ देगी। ऐसे शोच में चिट्ठी अति नीरस सी प्रतीत हुई। उसे तो मीठी मीठी बाते भी किसी प्रकार कठिनता से अच्छी लगेंगी। स्नेह से छूटी हुई, जिसके हृदय में शोक की अंगीठी उठी है वह तुमको कैसे हंस कर देखेगी?

(३) दु:संधान लक्षण—दोहा

एक होइ अनुकूल जहँ, दूजो है प्रतिकूल।
केशव दुःसंधान रस, शोभित तहँ समूल ॥८॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ एक तो अनुकूल हो और दूसरा प्रतिकूल हो, वहां दु:संधान रस होता है।

उदाहरण—सवैया

दै दधि दीनो उधार हो केशव, दानी कहा जब मोल लै खैहैं।
दीने बिना तो गई हो गई न गई, न गई घर ही फिरि जैहैं।
गौ हितु बैर कियो कबहो हितु, बैरु किये बरु नीकी ही रहैं।
बैरु कै गोरस बेचहुगी, अहो बेच्यौ न बेच्यौ तो ढारि न दैहैं ॥९॥

जब श्रीकृष्ण ने कहा कि 'दही दो' तब गोपी ने उत्तर दिया कि मैं तो उधार दे चुकी (अर्थात् उधार न दूँगी मोल ले लो) तब श्रीकृष्ण बोले कि 'हम दान लेने वाले कैसे जो मोल लेकर खायें; और दान दिये बिना तो तुम जा चुकीं।' गोपी ने उत्तर दिया—'बिना दान दिए मैं जाऊं या न जाऊं कोई चिन्ता नहीं यदि गई तो घर ही को लौट आऊंगी।' तब श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया—'तुमने बैर किया' गोपी बोली—'मेरा तुम्हारा कब प्रेम था? मैं तो तुमसे बैर करके ही सुखी

रहूँगी।' इस पर श्रीकृष्ण बोले – 'तो बैर करके गोरस बेचोगी?' गोपी ने उत्तर दिया—'यदि न बेच पाऊंगी तो फेंक न दूंगी' अर्थात् अपने काम मे लाऊंगी और तुम्हें न दूँगीं।

(५) पात्रा दुष्ट लक्षण—दोहा

जैसो जहाँ न बूझिये, तैसो करिये पुष्ट।
बिनु बिचार जौ बरणिये, सो रस पातुर दुष्ट ॥१०॥

जहाँ पर जो बातें समझ मे न आवें वहा बिना विचारे उन्हीं को पुष्ट करते हुए वर्णन किया जाता है वहा पात्रा दुष्ट रस होता है।

उदाहरण—कवित्त

कपट कृपानी मानी प्रेम रस लपटानी,
प्राननि को गगा जू के पानी सम जानिये।
स्वारथ-निधानी परमारथ की राजधानी,
काम की कहानी केशोदास जग मानिये।
सुबरन अरुझानी सुधा सों सुधारि आनी,
सकल सयानी सानी ज्ञानी सुख दानिये।
गौरा औ गिरा लजानी मोहे मुनि मूढ़ प्रानी,
ऐसी बानी मेरी रानी विषु कै बखानिये ॥११॥

दोहा

केशव करुणा हास्य कहि, अरु वीभत्स शृङ्गार।
बरणो वीर भयानक हि, संतत वैर विचार ॥१२॥

'केशवदास' कहते हैं कि करुणा तथा हास्य, वीभत्स तथा शृङ्गार एव वीर तथा भयानक का निरन्तर वैर रहता है अर्थात् ये परस्पर विरोधी रस हैं।

दोहा

भय उपजै वीभत्स ते, अरु शृङ्गार ते हास।
केशव अद्भुत वीर तें, करुणा कोप प्रकास ॥१३॥

'केशवदास' कहते हैं कि वीभत्स से भय, शृङ्गार से हास्य, वीर से अद्भुत तथा कोप (रुद्र) से करुणा उत्पन्न होती है।

दोहा

इहि विधि केशवदास रस, अनरस कहे विचारि।
बर्णत भूलि परो जहाँ, कवि कुल लेहु सुधारि ॥१४॥

'केशवदास' कहते हैं कि मैंने इस प्रकार रसों और अनरसों का सोच समझ कर वर्णन किया है। जहाँ कहीं भूल हो गई हो, उसे कवि लोग सुधार लें।

दोहा

जैसे रसिक प्रिया बिना, लखिये दिन-दिन दीन।
त्योंही भाषा-कवि सबै, रसिक प्रिया बिन हीन ॥१५॥

जिस प्रकार रसिक लोग अपनी प्रियतमा के बिना दिन प्रतिदिन दीन दिखलाई पड़ते हैं, उसी प्रकार भाषा के कवि 'रसिक-प्रिया' बिना हीन प्रतीत होते हैं।

दोहा

बाढ़ै रति मति अति पढ़ें, जाने सब रस रीति।
स्वारथ परमारथ लहै, रसिक प्रिया की प्रीति ॥१६॥

इस 'रसिक-प्रिया' के पढ़ने से रति-मति बढ़ती है और समस्त रस रीतियों का ज्ञान हो जाता है तथा इससे प्रीति करने से स्वार्थ और परमार्थ दोनों प्राप्त होते हैं।